उर्दू काव्य की एक नई धारा

उर्दू काव्य की एक नई धारा

श्री उपेंद्रनाथ, 'अश्क'

१९४९

हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद

प्रकाशक
हिंदुस्तानी एकेडेमी
यू० पी०, इलाहाबाद

द्वितीय संस्करण
मूल्य २॥)

मुद्रक : गोपालकृष्ण अग्रवाल
हिन्दुस्तान प्रेस, कटरा, इलाहाबाद

धर्मवीर आनंद के लिए

विषय-सूची

यह दूसरा संस्करण

"उर्दू काव्य की नई धारा" मेरे उन दिनों की याद है, जब मेरे लिए कुछ भी मौलिक लिखना लगभग असम्भव था। १९३६ के दिसम्बर में लम्बी बीमारी के बाद मेरी पहली पत्नी का देहान्त हो गया था। उसके पश्चात् कई महीनों तक मुझ पर कुछ विचित्र सा अवसाद, कुछ अजीब सी बेचैनी छाई रही थी। वह सब विकलता इसलिए न थी कि मुझे अपनी पत्नी से अथाह प्रेम था और इस प्रेम ने मुझे पागल कर रखा था, अथवा मैंने उसका बहुत देर तक इलाज किया था और सफल न हुआ था। दुख उन परिस्थितियों का था, जिनके कारण वह बीमार हुई और बच न सकी। आज जब उसी यक्ष्मा से पीड़ित होने पर भी मैं बच गया हूँ और आशा बँध चली है कि मैं इससे पूर्णतः निष्कृति पा लूँगा, तो उसकी मृत्यु पर मुझे और भी दुख होता है क्योंकि मुझे विश्वास है कि यदि परिस्थितियां कुछ भी सहायक होतीं तो वह भी निश्चय ही बच सकती थी।

आज जब मैं इस पुस्तक के दूसरे संस्करण के लिए ये पंक्तियां लिखने बैठा हूँ तो अनायास ही मुझे उन अवसादमयी घड़ियों की याद आ गई है जब इस संग्रह के गीतों को पढ़ने और संकलित करने से मेरा काफ़ी ध्यान बटा था।

१९३७ में जब मैंने इन गीतों का संकलन करना आरम्भ किया था तो उतने कवि गीत न लिखते थे जितने अब लिखते हैं। हफ़ीज़ जालंधरी के अतिरिक्त किसी का भी संग्रह प्रकाशित न हुआ था और मुझे महीनों पत्र-पत्रिकाओं के दफ़्तरों में जाकर निरंतर उनकी छान-बीन करनी पड़ी थी।

पुस्तक तैयार हो गई तो उसे छपवाने का प्रश्न सामने आया। एक बार जब श्रद्धेय टण्डन जी लाहौर आये तो काका साहिब कालेलकर के कहने पर मैं उनसे मिला। काका साहिब भी उन दिनों लाहौर ही में थे और मेरे इस काम में बड़ी दिलचस्पी लेते थे। पुस्तक की रूप-रेखा बताकर मैंने टण्डन जी से प्रार्थना की कि यदि हो सके तो वे हिन्दुस्तानी एकेडमी के मन्त्री श्री डाक्टर ताराचन्द से पुस्तक के सम्बन्ध में चन्द शब्द कह दें।

टण्डन जी से भेंट होने पर मैंने कह तो दिया पर मुझे आशा न थी कि अपनी व्यस्तता में उन्हें मेरी बात स्मरण रहेगी। परन्तु जब मैं गोरखपुर सम्मेलन से लौटते हुये इलाहाबाद रुका और डाक्टर महोदय से मिला तो मालूम हुआ कि टण्डन जी ने उनसे पुस्तक के सम्बन्ध में कह रखा था।

पाण्डुलिपि देखकर डा० महोदय ने मुझे कुछ परामर्श दिए और पुस्तक छापने का वादा किया।

इसका पहला संस्करण १९४१ में एकेडमी से छपा। कई कारणों से पाण्डुलिपि की तैयारी से इसकी छपाई तक काफ़ी अर्सा लग गया। परन्तु मैं नये गीत इसमें शामिल करता रहा। जब १९४१ में यह प्रकाशित हुई तो १९३८,३९ तक के गीत इसमें संकलित थे।

उस समय पुस्तक पर यह आपत्ति की गई थी कि इसमें अधिकांश गीत पंजाब के उर्दू कवियों के हैं। मैं चाहता भी था कि श्री अजमत अल्लाह बेग, श्री साग़र नज़ामी और मक़बूल हुसेन अहमदपुरी के अतिरिक्त यू० पी० आदि प्रान्तों के दूसरे कवि भी शामिल किए जाएं, परन्तु उस समय ऐसा न हो सका। जोश मलीहाबादी और दूसरे कवि उस समय गीत लिखते ही न थे। मुझे आशा है अब पाठकों को यह शिकायत न रहेगी। जोश साहब ने भी पिछले कुछ वर्षों से गीत लिखे हैं और उन गीतों में उनके काव्य की समस्त आब-ताब है। उनके अतिरिक्त श्री फिराक़ गोरखपुरी, श्री अख़्तरूलईमान, सैयद

मुतलबी फरीदाबादी भी इस संस्करण में शामिल हैं। पंजाब के कवियों में भी कई नये लिखने वाले मैंने शामिल किये हैं जिनमें अब्दुल मजीद भट्टी, क़तील शफ़ाई और विश्वामित्र आदिल के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सब कवियों के कारण संग्रह में जो विभिन्नता, व्यापकता और भाव-प्रवणता आ गई है उसका अनुमान पाठक ही लगा सकते हैं। पिछले सात-आठ वर्षों में उर्दू कविता ने जो प्रगति की है उसका प्रतिबिम्ब पाठकों को इस संग्रह में स्पष्ट रूप से मिलेगा। इसके अतिरिक्त यह संस्करण न केवल परिवर्धित है वरन् काफ़ी संशोधित भी है। मैंने न केवल नये कवियों को शामिल किया है, वरन् कुछ कम महत्व के कवि तथा गीत पिछले संस्करण से निकाल भी दिए हैं अथवा उनके अधिक गीतों के स्थान पर एक दो गीत ही रखे हैं। "विविध" शीर्षक के अंतर्गत कई नये कवियों के गीत भी संकलित कर दिये हैं।

जब मैंने 'उर्दू काव्य की नयी धारा' का पहला संस्करण तैयार किया था तो मेरे मित्रों का यह विचार था कि यह धारा उर्दू में स्थायी न रहेगी (मेरा निजी खयाल था कि अस्थायी भी रहे तो इसे पुस्तक के कलेवर में बांध लेना चाहिये)। परन्तु वे पाठक जिन्होंने पुस्तक का पहला संस्करण पढ़ा है यदि इस संस्करण को देखें तो पाएँगे कि न केवल उर्दू काव्य की इस धारा ने स्थायी रूप ग्रहण कर लिया है, बल्कि यह पहले की अपेक्षा यथेष्ट बढ़ी, फैली, निखरी और चमकी है। राशिद और फ़ैज़ को छोड़कर आधुनिक युग के लगभग हर महत्त्वपूर्ण कवि ने गीत तथा गीतों से मिलती-जुलती कविताएं लिखीं हैं। 'मीरा जी' के गीतों के तो तीन संग्रह निकल चुके हैं। रामप्रकाश 'अश्क', क़तील शफ़ाई, तनवीर नक़वी, मुतलबी फरीदाबादी, अब्दुल मजीद भट्टी, सलाद मछली शहरी, अलताफ़ मशहदी आदि कई कवियों के संग्रह प्रकाशित हो गये हैं और यह बारीक़ सी धारा जो स्व० अज़मत अल्लाह खां और हफ़ीज़ जालंधरी ने उर्दू में प्रवाहित की थी बढ़कर अविरत गति से बहने

वाली एक विशाल नदी का रूप धारण कर चुकी है जो अपने विस्तार में उर्दू कविता की प्रगति के सभी रंगों को लिए हुये है।

देश के विभाजन और उसके कारण उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों के कारण मैं श्री अहमद नदीम कासिमी, माहिर लुध्यानवी, फ़िक्र तोसवी और रामप्रकाश अश्क का एक से अधिक गीत शामिल नहीं कर सका। इन कवियों ने सुन्दर गीत लिखे हैं, पर अपनी बीमारी और देश के विभाजन के कारण उन्हें इकट्ठे नहीं कर सका। इस कमी के बावजूद यह संस्करण पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सुन्दर बन गया है। आशा है पाठक मुझसे सहमत होंगे।

गीतों की इस धारा के अतिरिक्त मेरा विचार है कि मैं हिन्दी पाठकों को उर्दू कविता की अन्य धाराओं से भी परिचित कराऊं। यदि समय, सेहत और स्थिति सहायक हुई तो मैं अवश्य ही यह अपनी इच्छा पूरी करूंगा। अभी मैं इस संस्करण को ही संशोधित और परिवर्धित रूप में प्रस्तुत कर संतोष करता हूँ।

बन्धु श्री रामचन्द्र टण्डन का मैं आभारी हूँ जिन्हें इस पुस्तक में आरम्भ ही से बड़ी दिलचस्पी रही है और जिन्होंने अपने परामर्श से पुस्तक को सुन्दर बनाने में सदा मेरी सहायता की है।

प्रयाग, सितम्बर, ४८ } उपेन्द्रनाथ अश्क

परिचय

हिन्दी और उर्दू दोनों एक देस हिन्दुस्तान की भाषाएं हैं। दोनों एक सी हालतों में पैदा हुईं, फली-फूली और बढ़ी है। दोनों का अदब हिन्दू और मुसलमान लिखनेवालों की कोशिशों से बना है। अगर हिंदी साहित्य में जायसी, रसखान, रहीम ऊँचा दर्जा रखते हैं, तो उर्दू साहित्य में शाद, नसीम, सरशार, वर्क़, सुरूर बड़े पाये के लिखनेवाले हो गए हैं। हिंदी ज़बान में इसलामी रीति-रिवाजों, फ़लसफ़े और मज़हब से संबंध रखने वाली बहुतेरी किताबें हैं; और उर्दू में इसी तरह हिंदुओं के दर्शन और शास्त्र, धर्म, और ज्ञान; इतिहास और कहानियों का अच्छा भंडार है।

ऐसी हालत में हिंदी और उर्दू सहित्यों का एक दूसरे पर असर डालना स्वाभाविक-सा ही है। एक तरफ़ उर्दू छंदों, कविता के आकारों, भावों ने हिंदी शायरी में जगह पाई है, तो दूसरी तरफ हिंदी कविता पर उर्दू का प्रभाव पड़ा है। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि एक भाषा का साहित्य दूसरी का अक्स मात्र है। दोनों में भेद भी हैं और वे काफ़ी गहरे हैं। उस की वजह भी सब जानते हैं। दो अलग-अलग संस्कृतियों की छाप इन के साहित्यों पर है। लेकिन इन दो धाराओं के बीच में एक दरमियानी नदी बहती है जो दोनों के पानियों से मिल कर बनी है और जिस का जल अलहदा बहनेवाली धाराओं में रिसता रहता है।

हम अगर उर्दू और हिंदी के इतिहास पर नज़र डालें तो मालूम होगा कि हर समय में इस तरह का बीच का साहित्य मिलता है। दकन की उर्दू शायरी को लीजिए तो भाषा हिंदी शब्दों से भरी है और कविता में हिंदुस्तान की संस्कृति जोर से झलकती दिखाई देती है।

आगे चलिए, अठारवीं सदी में सौदा के मरसियों और क़सीदों में हिंदुस्तानियत का चोखा रंग है, उन्नीसवीं सदी में नज़ीर अकबराबादी इसी रंग में रँगा है। यही हाल बीसवीं सदी का है।

श्री उपेंद्रनाथ 'अश्क' ने, जो ख़ुद उर्दू के अच्छे शायर और कहानी लिखनेवाले हैं, इस छोटी सी पुस्तक में उन थोड़े से उर्दू के कवियों का ज़िक्र किया है जिन्हों ने अपनी कविता में हिंदी के असर को क़ुबूल किया है। इन कवियों में हिंदू भी हैं और मुसलमान भी, लेकिन इन के गीतों को पढ़ कर कोई भी यह नहीं कह सकता कि इन में मत या धर्म का भेद है।

मेरा विचार है कि यह पुरानी कविता की धारा न केवल मधुर और सुंदर है बल्कि यह शक्ति और ओज से भरी है। यह सैकड़ों और हज़ारों नहीं लाखों और करोड़ों के दिलों को लुभाने और गरमाने वाली है। अगर हमारा साहित्य थोड़े से इने-गिने पढ़े-लिखों को आनंद देने के लिए ही नहीं, बल्कि हमारे गांव और हाट का कड़ा जीवन बितानेवाले अनगिनत भाइयों के दिलों को गुदगुदाने और सुख देने के लिए बनना चाहिए, तो वह इस मिली-जुली भाषा में ऐसे ही मिले-जुले छंदों में और इसी तरह के भावों से, जो सब में समान हैं, प्रेरित होगा, जिस के नमूने श्री उपेंद्र नाथ 'अश्क' ने इस पुस्तक में जमा किए हैं।

ताराचंद

उर्दू काव्य की एक नई धारा

प्रवेश

वर्तमान उर्दू काव्य पर हिंदी का प्रभाव कैसे पड़ा, क्यों पड़ा, कब से पड़ना आरंभ हुआ और इसका इतिहास क्या है? इस सम्बन्ध में यहां मैं कुछ नहीं कहना चाहता। ये सब प्रश्न अलग लेख की अपेक्षा रखते हैं। यहां तो मैं केवल यह बताना चाहता हूं कि उर्दू कविता की वर्तमान धारा पर भी हिंदी का प्रभाव पड़ा है और ख़ूब पड़ा है।

'ज़माना' कानपुर के किसी अंक में स्वर्गीय मुंशी प्रेमचंद जी ने भारत की साझी भाषा के संबंध में एक लेख लिखा था, जिस में दूसरी बातों के अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा था, कि उर्दू वाले हिंदी शब्दों के साथ छुआछूत का बर्ताव करते हैं। इस का उत्तर देते हुए उर्दू के पुराने गल्प-लेखक मौ० ल० अहमद ने पंजाब के प्रसिध्द मासिक-पत्र 'नैरंगे-ख़याल' के एक अंक में लिखा कि इसके विपरीत, उनके ख़याल में उर्दू वाले हिंदी की ओर स्वभावतया अधिक झुकाव रखते हैं। उर्दू के साहित्यिक सदैव हिंदी शब्दों के प्रयोग की कोशिश में व्यस्त दिखाई देते हैं, और उर्दू कवि अपनी कविताओं में न केवल हिंदी शब्द रखते हैं, बल्कि हिंदी भावों और हिंदी विचारों को भी अपनाने से परहेज़ नहीं करते। उर्दू भाषा और उसके कवियों से अपने निकट सम्बन्ध की बिना पर मैं कह सकता हूँ कि उनका यह कथन बड़ी हद तक सत्य है। जो भी कोई उर्दू काव्य का तनिक बारीकी से अध्ययन करेगा, उसे मौ० ल० अहमद के कथन की सत्यता का पता चल जायगा और उसे आधुनिक उर्दू कविता में और भी हिंदी का प्रभाव साफ़ दिखाई देगा। प्राचीन उर्दू कविता तो हिंदी ही का एक रूप थी, यह कहने की ज़रूरत

नहीं। बीच के कुछ काल में जो खाई दोनों भाषाओं के मध्य आ गई; उसे आज के कवि फिर पाटने का प्रयास कर रहे हैं।

जहां तक उर्दू की आधुनिक कविता का सम्बन्ध है मैं उसे दो युगों में विभक्त करता हूं। एक वह जिसमें इक़बाल के बाद आने वाले कवियों का दौर-दौरा रहा—हफ़ीज़ जालंधरी, जोश मलीहाबादी, फ़िराक़ गोरखपुरी, अख़्तर शेरानी, डा० तासीर, हरिचन्द अख़्तर, वक़ार अम्बालवी, साग़र निज़ामी आदि आदि। दूसरा वह जिसके बानी राशिद, फैज़ और मीरा जी हैं। इसमें उर्दू के सभी युवक कवि शामिल हैं। एक तीसरा दौर भी अली सरदार जाफ़री और उनके मित्रों की मरकरदगी में प्रातः के धुंध तक में बालारुण सा आंखें खोल रहा है। परन्तु अभी इसके उज्याले को स्पष्ट होने में देर है।

जब मैं यह कहता हूं कि उर्दू काव्य पर हिंदी का प्रभाव पड़ा है, तो मैं ऐसे विवश लोगों की कविताओं को देख कर ऐसा नहीं कहता, जो न हिंदी में कविता कर सकते हैं न उर्दू में, और इस लिए गंगा-जमनी भाषा में अपने कविता के शौक़ को पूरा किया करते हैं। मैं यह दावा उर्दू के उन महारथियों की उच्च कोटि की कविताओं को देख कर करता हूँ, जिन्होंने 'बांगे-दरा' 'शाहनामाए-इस्लाम', 'आहंगे-रज़्म', 'दर्दे-ज़िंदगी' और 'नैरंगेफ़ितरत', 'जुनूनों-हिकमत' 'हरफ़े आख़िर' और 'शवनमिस्तां' जैसे उच्च कोटि के ग्रंथ लिखे हैं। मेरा इशारा महाकवि 'इक़बाल', अब्बुल असर 'हफ़ीज़', 'वक़ार' अंबालवी, अहसान 'दानिश', पंडित इंद्रजीत शर्मा और अख्तर शेरानी, फ़राक़ गोरखपुरी, जोश मलीहाबादी तथा उर्दू के नये समर्थ कवियों की ओर है।

आधुनिक उर्दू काव्य की उस धारा को, जिस पर हिंदी का प्रभाव पड़ा है, मैं चार श्रेणियों में विभक्त करता हूँ—ग़ज़लें[१],

---

१ग़ज़ल वह कविता है, जिस में कई शेर होते हैं। इस में क़ाफ़िया और रदीफ़ (साधारणतया प्रत्येक शेर के पिछले दो शब्द) आपस में मिलते हैं, परंतु एक शेर विषय में दूसरे से सर्वथा विभिन्न होता है।

रुबाइयां[२], नज़्में[3] और गीत[४]। यद्यपि यह प्रभाव पूर्णतया तो गीतों के रूप ही में प्रस्फुटित हुआ है, तो भी ग़ज़लों और नज़्मों पर हिंदी का जो प्रभाव पड़ा है, उस का ज़िक्र अत्यावश्यक है, क्योंकि इन्हीं दो रंगों के बाद गीतों का रंग शुरू होता है।

ग़ज़लें

(क) गीतों तक पहुचने के लिए उर्दू कविताएं प्राय: एक दो मरहलों से अवश्य गुज़रती हैं। मैंने ऐसा नहीं देखा कि कोई उर्दू कवि एकदम ही सरल सीधे गीत लिखने लगा हो। प्रारंभ उन की ग़ज़लों और नज़्मों में सरल भाषा के प्रयोग से ही होता है। आधुनिक कविताओं का अध्ययन करने से ज्ञात होगा कि प्रवृत्ति कठिन और क्लिष्ट शब्दों को छोड़ कर सीधी-सादी उर्दू में लिखने की ओर अधिक है।

प्रसिद्ध कवि श्री 'जिगर' मुरादाबादी के तीन शेर हैं; देखिए भाषा कितनी सरल है :—

उदासी तबीयत पै छा जायगी, उन्हें जब मेरी याद आ जायगी।
मेरे बाद ढूँढ़ोगे मेरी वफ़ा, मेरे साथ मेरी वफ़ा जायगी।
मुझे उसके दर पर है मरना ज़रूर, मेरी यह अदा उसको भा जायगी।

पंडित हरिचंद 'अख़्तर', एम० ए०, आधुनिक उर्दू कविता के पहले दौर के कवि हैं। हफ़ीज़ जालंधरी और अख़्तर शेरानी के समकालीन। प्राय: उनकी भाषा कठिन और भावों की उड़ान ऊंची होती है। परन्तु उन्हीं के ये शेर देखिये कितने सरल हैं और कितने उत्कृष्ट :—

---

२ रुबाई चार पंक्तियों का पद होता है; जैसे हरिऔध के चौपदे। बच्चन ने हिन्दी वालों को रुबाई से परिचित कर दिया है।

३ नज़्म में विषय एक ही होता है और छंद विभिन्न होते हैं।

४ गीत प्राय: हिंदी गीतों जैसे ही होते हैं।

आप का इंतज़ार[१] कौन करे ? और फिर बार-बार कौन करे ?
खुदफ़रेबी[२] की भी कोई हद है, नित नया इतबार[३] कौन करे ?
दिल में शिकवे[४] तो हैं बहुत लेकिन, अब उन्हें शरमसार[५] कौन करे ?

और फिर दो शेर हैं :—

मैं अपने दिल का मालिक हूं, मेरा दिल एक बस्ती है,
कभी आबाद करता है, कभी बर्बाद करता है।
मुलाक़ातें भी होती हैं, मुलाक़ातों के बाद अकसर,
वे मुझ को भूल जाते हैं, मैं उनको याद करता हूँ।

इन शेरों में यद्यपि हिंदी शब्द नहीं हैं, लेकिन उर्दू इतनी आसान है कि हिंदी-भाषी भी इन्हें भली-भांति समझ सकते हैं।

हज़रत 'बहज़ाद' लखनवी की एक ग़ज़ल अपनी सरलता के कारण बड़ी प्रसिद्ध हुई है। चंद शेर देता हूं:—

दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे,
ऐसा न हो तक़दीर तमाशा न बना दे।
मै ढूँढ़ रहा हूँ वह मेरी शमूअ[६] किधर है,
जो बज़्म[७] की हर चीज़ को परवाना बना दे।
ऐ देखनेवालो मुझे हँस-हँस के न देखो,
यह इश्क़ कहीं तुमको भी मुझसा न बना दे।
आखिर कोई सूरत भी तो हो ख़ानए-दिल[८] की,
क़ाबा[९] नहीं बनता है तो बुतख़ाना[१०] बना दे।

अब्दुल 'हफ़ीज़' जालंधरी की ग़ज़लों में भी आप को यही रंग मिलेगा। एक ग़ज़ल देता हूँ :—

१प्रतीक्षा। २अपने आप को धोका देना। ३विश्वास। ४उलाहने। ५लज्जित ६दीपक। ७सभा। ८दिल का घर। ९खुदा का घर। १० बुतों की जगह। उर्दू शायरी में बुत माशूक़ को कहते हैं।

दिल अभी तक जवान है प्यारे, किस मुसीबत में जान है प्यारे !
तू मेरे हाल का खयाल न कर, इसमें भी एक शान है प्यारे !
तल्ख़[1] कर दी है ज़िन्दगी जिसने, कितनी मीठी ज़बान है प्यारे !
शोर फ़रियाद[2] बे असर ही सही, ज़िंदगी का निशान है प्यारे !
और फिर अपनी इस सरल भाषा के सम्बन्ध में स्वयं ही लिखते हैं:—
जंग छिड़ जाय हम अगर कह दें, यह हमारी ज़बान है प्यारे !

आधुनिक उर्दू कविता के दूसरे दौर के कवियों में से अधिकांश की ग़जलें न देकर मैं केवल 'फ़ैज़' के चन्द शेर दूंगा क्योंकि न० म० राशिद और मीरा जी के साथ 'फ़ैज़' ही उर्दू कविता के अति आधुनिक युग के बानी हैं। एक जगह लिखते हैं:—

सारी दुनिया से दूर हो जाए, जो ज़रा तेरे पास हो बैठे।
न गई तेरी बेरुखी न गई, हम तेरी आर्ज़ू भी खो बैठे।

और फिर :—

राज़े उलफ़त छुपा के देख लिया, दिल बहुत कुछ जला के देख लिया !
और क्या देखने को बाक़ी है, आप से दिल लगा के देख लिया !

इन शेरों के सरलता की सम्बन्ध में मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं।

(ख) दूसरा रंग उर्दू ग़ज़लों का वह है, जिसमें सरल उर्दू के साथ हिंदी के शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यहां मैं एक बात कह दूँ। जब हिंदी शब्द उर्दू में आते हैं, तो उनकी सूरत कुछ बदल जाती है, और इसी लिए उनके उच्चारण में भी परिवर्तन आ जाता है (फ़िराक़ की ग़ज़लें इसका अपवाद हैं)। इसी बदले हुये उच्चारण से ये हिंदी शब्द प्रयोग में लाए जाते हैं। परन्तु मेरा विषय चूँकि उर्दू काव्य

---

[1]कड़वी। [2]जुल्म की शिकायत।

पर हिंदी के प्रभाव तक ही परिमित है, इसलिए मैं इन शब्दों के उच्चारण इत्यादि के प्रश्न को न छेड़ूँगा।

इस रंग की ग़ज़लें भी उर्दू में काफ़ी लिखी गई हैं। दूसरे कवियों की बात दूर रही, स्वयं महाकवि स्वर्गीय 'इक़बाल' अपनी ग़ज़लों में हिंदी शब्दों के प्रयोग की लालसा को नहीं छोड़ सके। वे अधिकतर फ़ारसी में लिखते थे और कदाचित् फ़ारसी में उन्हे उर्दू की अपेक्षा आनन्द तथा सफलता भी अधिक मिली। परंतु हिंदी शब्दों की सरलता तथा माधुर्य ने उनसे भी अनायास लिखवा लिया है:—

'इक़बाल' बड़ा उपदेशक है, मन बातों में मोह लेता है,
गुफ़्तार[1] का यह ग़ाज़ी[2] तो बना, किरदार[3] का ग़ाज़ी बन न सका।

और फिर 'नया शिवाला' में जिसकी याद पिछले साम्प्रदायिक हत्याकांड में और भी शिद्दत में मानवता का दर्द हृदय में रखने वालों को आई 'इक़बाल' का कवि (राजनीतिज्ञ नहीं) लिखता है :—

सच कह दूं ऐ बिरहमन गर तू बुरा न माने,
तेरे सनमकदों[4] के बुत हो गए पुराने।
अपनों से बैर करना तू ने बुतों से सीखा,
जंगो-जदल सिखाया वाइज़[5] को भी खुदा ने[6]।
तंग आके मैंने आख़िर दैरो-हरम को छोड़ा,
वाइज़ का वाज़ छोड़ा, छोड़े तेरे फ़िसाने[7]।
पत्थर की मूरतों में समझा है तू खुदा है,
खाके-वतन[8] का मुझको हर ज़र्रा[9] देवता है।
आ ग़ैरियत[10] के परदे इक बार फिर उठा दें,
नक़्शे दुई[11] मिटा दें, फ़स्ले बहार[12] ला दें!

---

१ बोल। २ विजयी। ३ कर्म। ४ मंदिरों। ५ उपदेशक। ६ मंदिर-मसजिद ७ कहानियां। ८ देश की धूल। ९ कण। १० वैमनस्य। ११ भेद-भाव का नाम। १२ वसंत ऋतु।

सूनी पड़ी हुई है मुद्दत से दिल की बस्ती,
आ इक नया शिवाला इस देश में बना दें!
दुनिया के तीरथों से ऊँचा हो अपना तीरथ,
दामाने आसमां से उसका कलश मिला दें।
हर सुबह उठ के गाएं मंतर वह मीठे-मीठे,
सारे पुजारियों को मय[1] प्रीत की पिला दें।
शक्ती भी शांती भी भक्तों के गीत में है,
धरती के वासियों की मुक्ती भी प्रीति में है।

जनाब 'सागर' निज़ामी आधुनिक उर्दू कविता के पहले दौर के प्रख्यात कवि हैं। आप की भाषा में रस है, मस्ती है और सुन्दरता है। देखिये, उनकी निम्नलिखित गज़ल में उर्दू-हिन्दी का कितना सम्मिश्रण है। लिखते हैं:-

यह महफ़िल में किसने मधुर गीत गाया?
सँभालो सँभालो मुझे वज़्द[2] आया
सियहख़ानए दिल में यह कौन आया?
ज़मीं मुस्कराई फ़लक[3] जगमगाया।
बड़ी भूल की हुस्न से दिल लगाया,
दिवाने यह है एक सपने की माया।
मुहब्बत में सूदो-ज़ियां[4] की न पूछो,
बहुत हमने खोया, बहुत हमने पाया।
न वह हैं न मैं हूँ न दीन और दुनिया,
जनूने-मुहब्बत[5] कहां खींच लाया।
गज़ल मेरी 'सागर' वह नग़मा है जिसको
जवानी ने लिक्खा मुहब्बत ने गाया।

१मदिरा। २बेहोशी की हद तक पहुंचनेवाली तन्मयता। ३आसमान। ४हानि-लाभ। ५प्रेम का उन्माद।

श्री फ़िराक़ गोरखपुरी की एक ताजा ग़ज़ल के चन्द शेर देखिये :—

आय हैं कुछ दुखते दिलवाले, है कोई जो दरद बटा ले।
दिल की मद्धम लौ उकसा ले, नादां मन की जोत जगा ले।
डर है उन्हीं से इश्क को जो हैं, जांचे परखे देखे भाले।
सम्हले हुओं के क़दम नहीं जमते, गिरते हुओं को कौन सम्हाले।
नादां काम नहीं यह खुशी का, दिल सम्हलेगा ग़म के सम्हाले।
कौन उन्हें जाने यों वह बहुत हैं, सीधी साधे भोले भाले।
रात अँधेरी राह कठिन है, दर्दे महब्बत को चमका ले।
छाईं घटाएँ आईं हवायें, तू भी मन की पैंग बढ़ा ले।
तन्हाई भी करवट लेगी, जागें हुओं को नींद तो आले।
उसको फ़िराक़ मसीहा समझें,
नब्ज़ महब्बत की जो पाले।

(ग) तीसरा रंग वह है जहां ग़ज़ल बिल्कुल हिन्दी की होकर रह गई है। 'क़ैस' जालंधरी उर्दू दुनिया में कभी ख़ूब चमके थे। एक वक़्त था जब पंजाब के सभी मुख्य उर्दू पत्र-पत्रिकाओं में उनका कलाम रहता था। वे फारसी में भी लिखते थे। फिर घरेलू परेशानियां चील की भांति झपट्टा मार कर उन्हें लाहौर के साहित्यिक वातावरण से उठा कर बसी कलां (होशयारपुर) के देहात में ले गईं और इसके साथ उनका साहित्यिक जीवन भी समाप्त हो गया। मैं 'क़ैस' की ग़ज़ल 'माया' देता हूँ, जिस में यह रंग पूरे यौवन पर है, और यदि उसे हिंदी ग़ज़ल ही कह दिया जाय, तो अनुचित न होगा :—

माया पर मत भूल रे प्राणी, माया तो आनी-जानी।
जीवन है कि वायू या झोंका, या नदिया का बहता पानी।
यौवन रूप जवानी क्या है? क्या है यौवन रूप जवानी?
प्रेम से सब की सेवा कर तू, सेवा में किस की हानी?
त्याग बुरे पुरुषों की संगत, सुन हरदम संतों की बानी।
ज्ञान की खाली बातें क्या हैं? कर ले कुछ जग में ऐ ज्ञानी!

यह जग तो है रैन-बसेरा . किस बिरते पर तत्ता पानी ?
'कैस' प्रभू से प्रेम लगा ले, दुनिया तो है आनी-जानी ।

(') रुबाइयां

रूबाई फार्सी की चीज़ है । जिस प्रकार हाफ़िज़ ने ग़ज़ल को अमर बना दिया उसी प्रकार उमर खयाम ने रुबाई को । ग़ज़ल के साथ-साथ रुबाई भी उर्दू में आई । इक़बाल, जोश और दूसरे बड़े उर्दू कवियों ने इस सिन्फ़ में भी अपने विचारों और भावों को प्रकट किया । मुझे इस बात का ख़याल तक न था कि रुबाई पर भी हिन्दी अपना प्रभाव डालेगी । परन्तु हाल ही में फ़िराक गोरखपुरी की कुछ रूबाइयां देखकर मैं चकित रह गया । उन्हें पढ़कर मैंने जाना कि न केवल हिन्दी के शब्द उर्दू रुबाइयों में आये हैं, बल्कि उन्होंने उर्दू रुबाइयों को भिन्नता, सुन्दरता, और देशीयिता प्रदान की है । वे अरब और ईरान की चीज़ न रह कर भारतीय मालूम होती हैं । चन्द नमूने देखिये :—

(१)

खिलती कली मुस्कराते ओठों की महक ।
मँडलाती हुई घटाएँ अलकों की लटक ।
जोबन के मधु-कलस भी छलके छलके ।
माथे के चन्द्र लोक की नर्म दमक ।

(२)

लहराए सरों से सरके सरके आंचल ।
मँडलाएं गेसुओं[1] के काले काले बादल ।
यह किस ने प्रेम के तराने छेड़े ।
रौशन होते चले हैं गालों के कँवल !

---

१ केशों, ।

(३)

क्या तेरे ख़याल ने भी छेड़ा है सितार ।
सीने में उड़ रहे हैं नग़मों के शरार ।
ध्यान आते ही साफ़ बजने लगते हैं कान ।
है याद में तेरी वह खनक वह झंकार ।

(४)

इन आंखों के नश्शे न बढें औ' न घटें ।
वह नर्म सबाहत कि पौएँ जैसे फटें ।
वह मस्त ख़रामी[१] कि फ़ज़ा गाए मल्हार ।
वह आधे बदन तक घनी ज़ुल्फ़ों[२] की लटें ।

(५)

इंसान के पैकर[३] में उतर आया है माह[४] ।
क़द, या चढ़ती नदी है अमरत की अथाह ।
लहराते हुए बदन पै पड़ती है जब आँख ।
रस के सागर में डूब जाती है निगाह ।

(६)

कोमल-पद-गामिनी की आहट तो सुनो ।
गाते कदमों की गुनगुनाहट तो सुनो ।
सावन, लहरा है, मद में डूबा हुआ रूप ।
रस की बूंदों की झमझमाहट तो सुनो ।

(७)

मोती की कान,[५] रस का सागर है बदन ।
दर्पण आकाश का सरासर है बदन ।
अँगड़ाई में राजहंस तोले हुये पर ।
या दूध भरा मानसरोवर है बदन ।

---

१ मद भरी चाल । २ केशों । ३ जिस्म । ४ चाँद । ५ खान

(८)

रश्के दिले केकयी[१] का कितना है बदन ;
सीता की बिरह का कोई शोला है बदन ।
राधा की निगाह का छलावा है कोई ।
या कृष्ण की बांसरी का लहरा है बदन ।

नज़्में

(क) नज़्मों को ग़ज़लों और गीतों की दरम्यानी कड़ी समझ लीजिए। पहले-पहल उर्दू कविता ग़ज़लों, मसनवियों और मरसियों तक ही परिमित थी। 'ग़ालिब', 'ज़ौक़', 'दाग़', 'मीर', 'सौदा' आदि पुराने कवियों के दीवान आप को अधिकतर ग़ज़लों तथा मसनवियों आदि में ही मिलेंगे। नज़्में काफ़ी देर बाद लिखी जाने लगी हैं, और आधुनिक युग की देन हैं। ये नज़्में भी पहले मुश्किल उर्दू में लिखी जाती रहीं। बाद को जब सरल उर्दू में लिखी जाने के कारण अधिक रोचक प्रतीत होने लगीं, तो ग़ज़लों का दौर रुख़सत हो गया। आधुनिक युग के कवियों के दीवानों में आप को इन्हीं नज़्मों का आधिक्य दिखाई देगा। इस के बाद वह युग भी आया, जब इन्हीं नज़्मों में हिंदी के शब्दों का प्रयोग होने लगा, और फिर हिंदी शब्दों के सम्मिश्रण ने कवियों को इतना मोह लिया कि वे नज़्में लिखते-लिखते हिंदी गीत लिखने लगे। इस रंग की नज़्में भी एक हद तक हिंदी गीत बन गई हैं।

नए युग की ख़ालिस उर्दू नज़्म का नमूना देखिए। शीर्षक है—'आए न वह बहार में, बीत चली बहार भी'। 'वक़ार' साहब लिखते हैं :—

[१] केकयी के वज्र हृदय को जिस पर ईर्षा हो।

दिलकशो[1] दिलफ़रेब[2] हैं, दश्त[3] भी राहगुज़ार[4] भी,
बाग़ भी हैं खिले हुए फूलों पै है निखार भी,
क्या करूं मैं बहार को, दिल पै हो इख़्त्यार भी,
रुख़सते सैर[5] दे मुझे, सदमए[6] इन्तज़ार भी,
आए न वह बहार में बीत चली बहार भी!

दिल की कली न खिल सकी, मेरे लिए बहार क्या?
नज़्हते[7] लालाज़ार क्या निकहते[8] मुश्कबार क्या?
उन के बग़ैर आ सके दिल को मेरे क़रार[9] क्या?
कहती हैं सच सहेलियां, मर्द का एतबार क्या?
आए न वह बहार में, बीत चली बहार भी!

मौत पै बस नहीं मेरा, दिल नहीं इख़्त्यार में,
यह न खबर थी दुख मुझे, सहने पड़ेंगे प्यार में,
ऐशो-तरब[10] के थे ये दिन, खो दिए इंतज़ार में,
हसरतें दिल में रह गईं, आए न वह बहार में,
आए न वह बहार में, बीत चली बहार भी!

यही नज़्में सरलता और सुंदरता की किस हद तक पहुंची हैं, यह मियां बशीर अहमद बैरिस्टर, मालिक तथा संपादक 'हुमायूं' की नज़्मों को पढ़ कर ही ज्ञात होगा। 'मेरे फूल' शीर्षक नज़्म में मियां बशीर अहमद लिखते हैं:—

मेरे घर में तुझ से नूर,
मेरा टीला तुझ से तूर[11],

१ आकर्षक। २दिल लुभाने वाला। ३मरूथल। ४मार्ग। ५सैर की आज्ञा ६ दुखी। ७ पवित्रता। ८ सुगंधि। ९चैन। १० सुख-आराम। ११तूर वह पहाड़ था, जहाँ हज़रत मूसा को ख़ुदा ने अपना जलवा दिखाया था, और जो उस ज्योति की तपिश से जल कर राख हो गया था।

मेरी जन्नत[1] की तू हूर[2],
तेरी खुशी मुझे मंजूर,
फूलों में ऐ मेरे फूल!
गाने गा और झूला झूल।

तेरी बातों में है रस,
बिजली सा है तेरा मस[3],
उम्र है तेरी चार बरस,
अल्लाह बस बाक़ी है हवस,
फूलों में ऐ मेरे फूल!
गाने गा और झूला झूल।

मियां साहब की 'संगतरे, शीर्षक कविता में सरलता अपनी चरम सीमा को पहुँच गई है :—

संगतरे रंगतरे
खुशनुमा[4] रस भरे
पाँच-छै लीजिए
इनका रस पीजिए
ज़िन्दगी आगही[5]
आर है बार है
जब तलक रस न हो
जब तलक बस न हो
काम सब छोड़ के
बाग में शाख से

१स्वर्ग। २अप्सरा। ३स्पर्श। ४सुन्दर। ५ज्ञान।

संगतरे तोड़ के
उनका रस पीजिए
ऐश यूं कीजिये

(ल) और फिर, जैसा मैं ने कहा, इन सरल नज़्मों में कहीं-कहीं हिंदी के शब्द भरे जाने लगे। इस से इन की सुन्दरता और माधुर्य में जो वृद्धि हुई, वह निम्नलिखित नज़्मों से साफ़ प्रकट है। डाक्टर मुहम्मद दीन 'तासीर' की एक नज़्म है :—

मान भी जाओ, जाने भी दो, छोड़ो भी अब पिछली बातें !
ऐसे दिन आते हैं कब-कब, कब आती हैं ऐसी रातें ?

मान भी जाओ, जाने भी दो !

देख लो वह पूरब की जानिब[1], नूर ने दामन[2] फैलाया है।
रात की ख़लअत[3] दूर हुई है, सूरज वापस लौट आया है।

मान भी जाओ, जाने भी दो !

जल-जल कर मर जानेवाले, परवानों[4] का ढेर लगा है
यह भी लेकिन देखा तुमने, शम्अ[5] का क्या अंजाम हुआ है ?

मान भी जाओ, जाने भी दो !

श्री ज़ेड० ए० बुख़ारी कभी आल इंडिया रेडियो, बंबई के स्टेशन डारेक्टर थे और अब पाकिस्तान रेडियो के कन्ट्रोलर हैं। उनकी नज़्म 'जोगी' करुण-रस के साथ-साथ मिठास से कितनी भरी हुई है :—

यह उस से जाकर पूछो, जिस का मज़हब दुनियादारी है,
यह दुनिया कितनी अच्छी है, यह दुनिया कितनी प्यारी है ?

---

[1]तरफ़। [2]आँचल। [3]पोशाक। [4]पतंगों। [5]दीपक।

हां, बीत गए वह दिन, जब था हंगामए हाओ-हू[1] बरपा[2],
अब दिल की बस्ती सूनी है, इक हू का आलम[3] तारी[4] है !
इस रोने पर, इस हँसने पर, हैरान न हो, इतना तो समझ !'
वह जीने की तैयारी थी, यह मरने की तैयारी है !
इक और भी दुनिया बसती है, इस कोच को दुनिया के बाहर,
उस दुनिया में सुख मिलता है, यह दुनिया सब दुखियारी है।
ऐ मायावालो, अपनी माया इस कुटिया से ले जाओ !
यह साधू प्रेम-पुजारी है, यह साधू प्रीत-भीखारी है।

(ग) उन नज़्मों में जहां उर्दू के मुश्किल शब्दों के साथ-साथ हिंदी शब्द भी मौजूद हैं और नज़्म की सुंदरता को घटाने के बदले बढ़ाते हैं, मैं हज़रत अहसान 'दानिश' और 'निशात' जायवी की दो नज़्में देता हूं। अहसान साहब की नज़्म है—'बरसात के अंतिम दिन' :—

बरसात ख़त्म है इस महीने, कीने[5] से धुले हुए हैं सीने।
बदली जो बरस के थम गई है, गुलशन[6] पै' बाहार जम गई है।
नाले हैं कि राग गा रहे हैं, जंगल हैं कि सनसना रहे हैं।
संसार का मुँह सा धुल गया है, हर चीज़ का रंग खुल गया है।
नहरें-सी बनी हुई हैं राहें, पेड़ों की लचक रहीं हैं बाहें !
अहसान हूं किस हाल में न पूछो, हूं किस के ख़याल में न पूछो !

'निशात' जायवी की नज़्म है— 'चाँद की बस्ती'। लिखते हैं :—

दिलकश औ' नूरानी[7] दुनिया, मदमाती मस्तानी दुनिया।
दुनिया है मतवारी सारी, मतवारी है बादे-बहारी[8]।
फ़ितरत[9] प्यारी झूम रही है, दुनिया सारी झूम रही है।
नीला अंबर रौशन तारे, नन्हें नन्हें प्यारे प्यारे।

१ हाय-वाय का शोर। २जारी। ३ निस्तब्धता। ४छाया। ५द्वेष। ६वाटिका। ७ज्योतिर्मय। ८मधुऋतु की हवा। ९प्रकृति।

बस्ती में हर सू[1] है मस्ती, यह बस्ती है चाँद की बस्ती।

(घ) और फिर उर्दू नज़्मों में हिंदी का यह सम्मिश्रण इस हद तक बढ़ा कि नज़्में गीत बन कर रह गईं। इस के बाद ही गीतों का वह युग आया, जो एक बार उर्दू संसार पर छाकर रह गया और अपनी व्यापकता में नज़्मों को भी मात कर गया। उर्दू के प्रसिद्ध मस्त कवि 'अख़्तर' शेरानी की नज़्म 'ऐ इश्क़ कहीं ले चल' इस रंग का उत्तम उदाहरण है। सरलता और मीठेपन में यह नज़्म गीत ही बन गई है और इस की लोकप्रियता का यह आलम है कि बीसियों बार छप जाने के पश्चात् आज तक बराबर छप रही है। उच्च कोटि की नज़्मों में जितनी यह गाई गई है, शायद ही कोई दूसरी नज़्म गाई गई हो। सीधी सरल भाषा है, मीठे हिंदी के शब्द हैं और दुनियादारों की स्वार्थ-प्रियता से तंग आया हुआ कवि का हृदय है। लिखते हैं :—

ऐ इश्क़ कहीं ले चल इस पाप की बस्ती से,
नफ़रतगहे[2] आलम से, लानतगहे[3] हस्ती[4] से,
इन नफ़्स-परस्तों[5] से, इस नफ़्स-परस्ती से,
दूर और कहीं ले चल, ऐ इश्क़ कहीं ले चल!
हम प्रेम-पुजारी हैं, तू प्रेम-कन्हैया है,
तू प्रेम कन्हैया है, यह प्रेम की नैया है,
यह प्रेम की नैया है, तू इस का खेवैया है,
कुछ फ़िक्र नहीं, ले चल, ऐ इश्क़, कहीं ले चल!
बेरहम ज़माने को, अब छोड़ रहे हैं हम,
बेदर्द अज़ीज़ों[6] से मुँह मोड़ रहे हैं हम,
जो आस कि थी वह भी अब तोड़ रहे हैं हम,
अब ताब[7] नहीं, ले चल, ऐ इश्क, कहीं ले चल!

१तरफ़। २उपेक्षा की जगह। ३निंदा की जगह। ४अस्तित्व। ५कामियों। ६प्रियजनों। ७संतोष।

आपस में छल औ' धोके संसार की रीतें हैं,
इस पाप की नगरी में उजड़ी हुई प्रीतें हैं,
यां न्याय की हारें हैं, अन्याय की जीतें हैं,
सुख-चैन नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ कहीं ले चल!
संसार के उस पार इक इस तरह की बस्ती हो,
जो सदियों से इंसां[1] की सूरत को तरसती हो,
औ' जिस के मनाज़र[2] पर तनहाई[3] बरसती हो,
यूँ हो तो वहाँ ले चल, ऐ इश्क़, कहीं ले चल!
वह तीर हो सागर का, रुत छाई हो फागन की,
फूलों से महकती हो पुरवाई घने बन की,
और आठ पहर जिस में झड़-बदली हो सावन की,
जी बस में नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ कहीं ले चल!
पच्छिम की हवाओं से अवाज़ सी आती है,
औ' हम को समुंदर के उस पार बुलाती है,
शायद कोई तनहाई का देस बताती है,
चल, उस के करीं[4] ले चल, ऐ इश्क़ कहीं ले चल!
बरसात की मतवाली घनघोर घटाओं में,
कुहसार[5] के दामन की मस्ताना हवाओं में,
या चाँदनी रातों की शफ़्फ़ाफ़[6] फ़िज़ाओं[7] में,
दिल चाहे वहीं ले चल! ऐ इश्क़ कहीं ले चल!

(ङ) इस से पहले कि मैं तीसरे रंग का—गीतों का ज़िक्र करूं, मैं यहां उन नज़्मों का ज़िक्र भी कर देना चाहता हूं, जिन में हिंदी के शब्द चाहे इतने न हों पर हिंदी भाव कूट-कूट कर भरे हुए हैं। मैं इस संबंध

१मनुष्य। २दृश्य। ३ एकांत ४ समीप। ५ पहाड़। ६ उज्जवल। वातावरण।

में एक कविता देता हूं, जिस का उर्दू शीर्षक भी कवि ने 'मेघदूत' ही रक्खा है। इस के रचयिता जनाब 'मंजर' सिद्दीक़ी अकबराबादी हैं। एक फ़ुरक़त—वियोग—का मारा घटाओं के द्वारा अपनी प्रेमिका के अतीत की याद दिलाता हुआ अपने दुख की कहानी कहता है :—

यह काफ़िर घटाएं, यह काफ़िर घटाएं,
नज़र में समाएं तो क्योंकर समाएं ?
कहीं और बरसें, कहीं और जाएँ,
मुनासिब यही है, न हम को सताएं।
घटाएं जो हमदर्द हैं तो खुदा रा',
यह पैग़ामे[1] ग़म उन को मेरा सुनाएं,
कि ऐ कायनाते[2] मुहब्बत की देवी,
तेरे हिज्र[3] का बार कब तक उठाए ?
ख़ुदा मेहरबां है न तू मेहरबां है,
कहानी यह अपनी कहां जा सुनाएं ?
मगर हाँ जिसे तू ने बिसरा दिया है,
तुझे याद वह दौरे-माज़ी[4] दिलाएं !
वह अक्सर तेरा रूठ कर मुझ से कहना,
हमें तुम मनाओ, तुम्हें हम मनाएं !
जुदा थी ज़माने से दुनिया हमारी,
प्रेमी हवाएं, अछूती हवाएं !
मगर आह, ऐ इनक़िलाबे[5] ज़माना,
कि अब हैं वफ़ाओं के बदले जफ़ाएं !

---

१ संदेश। २ दुनिया। ३ वियोग। ४ पुराना समय। ५ परिवर्तन।

वफ़ूरे ग़मोरंज से घुल रहे हैं,
यह है आरज़ू अपनी हस्ती मिटाएं।

एक नज़्म और है। रचयिता का नाम तो मालूम नहीं, परन्तु नज़्म भाषा की सरलता के साथ हिंदी भावों और हिंदी के माधुर्य से कितनी ओतप्रोत है, इसका अनुमान केवल इसे पढ़ कर ही किया जा सकता है। यह नज़्म उर्दू के प्रसिद्ध मासिक पत्र 'नैरंगे ख़याल' में प्रकाशित हुई थी। कोई साहब बिरहिन के हृदय में उठनेवाले भावों का चित्र इस कुशलता से खचींते हैं कि क़लम चूम लेने को जी चाहता है। वर्षा ऋतु है और प्रियतम परदेश में और--

उमंग इक जी में उठ रही है, घटायें घिर-घिर के छा रही हैं,
पड़ोसिनें झूलने को झूला, घने बने बन में जा रही हैं।
कहीं पै बादल बरस रहे हैं, कहीं पै बिजली चमक रही है;
हरी-हरी डालियों पै चिड़ियां, जगह-जगह चहचहा रही हैं।
लगा है सावन घिरा है बादल, पड़ा है झूला, लगी हैं लड़ियां,
बड़े-बड़े पींग चल रहे हैं, पड़ोसिनें गीत गा रही हैं।
इधर पपीहे की 'पी कहां', छेड़ती है बैठे-बिठाये मुझ को,
उधर निगोड़ी यह कोयलें और भी मेरा जी जला रही हैं।
जहां-जहां पड़ चुका है पानी, भरी हुई हैं वहां की झीलें,
और उसमें जाकर सुहागनें सब की सब झपाझप नहा रही हैं।
मुझे नहीं चैन बिन तुम्हारे, अकेले घर में उलझ रही हैं,
पहाड़ से दिन सता रहे हैं, सुहानी रातें रुला रही हैं।
हो तुम तो परदेश में ऐ साजन, मैं कैसे काटूँगी इन दिनों को,
ऐ मेरे प्यारे तुम्हारी बातें, बहुत कलेजा दुखा रही हैं।

(च) इसी संम्बन्ध में यह अन्याय होगा, यदि मैं उर्दू के युग-पवर्तक कवि स्वर्गीय अज़मतल्ला का ज़िक्र न करूं। श्री अख़्तर हुसेन रायपुरी ने उनके विषय में सुदर्शन जी की दिवंगत उर्दू मासिक पत्रिका 'चंदन' में एक सुन्दर लेख भी लिखा था। उर्दू में हिन्दी शब्द तथा भाव लाने और क्लिष्ट भाषा को सरल बनाने में स्वर्गीय अज़मतल्ला का हाथ कुछ कम नहीं। आपने उर्दू के दक़ियानूसी अरूज़ (पिंगल) और उर्दू के क्लिष्ट और दुरूह शब्दों के विरुद्ध एक भारी विद्रोह किया, और उर्दू में हिंदी भाव तथा हिंदी शब्द लाने पर ही बस नहीं की, बल्कि अरबी और हिंदी छंदों को मिलाकर नई बहरें (छंद) बनाई और उनमें सुंदर कविताएं कीं। नए छंदों में उनकी कविता का नमूना देखिये। शीर्षक है, 'बरसात की रात'। लिखते हैं :-

वर्षा रुत है, घटा है छाई,
बालों को खोले रात है आई,
अँधियारी में है गहराई,
झड़ी लगी है हलकी-हलकी।
जानवरों ने लिया बसेरा,
तारीकी ने जग को घेरा,
छाया घटाटोप अँधेरा,
हां, कभी हँस पड़ती है बिजली।
नींद जो आई वक़्त से पहले,
फूल से बालक पँखुड़ियां मूंदे,
सोये बेसुध औंधे-सीधे,
जल्दी जल्दी घर का बखेड़ा।
सुन्दर चित्रा ने निबटाया,
हर एक बिछौना बिछवाया,

पान बनाया खाया खिलाया,
जोर का आया मेंह का तरेड़ा ।
होने लगीं फिर घर की बातें,
बच्चों की दिन-भर की बातें,
बे-सिर की बे-पर की बातें,
औ' कुछ इधर-उधर की बातें ।

कितना सुन्दर चित्र है और भाषा कितनी सरल ! न शब्दों का गोरखधन्धा है, न रूपों का इन्द्रजाल !!

उर्दू में हिंदी-भाव लाने के लिए श्रीअज़मतल्ला ने जो कुछ किया है उसका पता केवल आपकी नज़्म 'मुझे प्रीत का यां कोई फल न मिला' से ही लग सकेगा । वास्तव में यह नज़्म नहीं, एक कहानी है, विहाग में गाई और करुणा रस में डूबी हुई । कथानक चाहे मुसलमान संस्कृति से ही संबंध रखता है; परन्तु भाव वही हैं, जिन से हिंदी कविता ओतप्रोत है, और छंद भी सर्वथा नये हैं ।

एक मुसलमान युवती बचपन से अपने चचेरे भाई के साथ रही है। दोनों साथ इकट्ठे खेले-कूदे और पढ़े हैं । यौवन का देवता आता है और चुपके से दोनों के दिलों में प्रेम का संचार कर देता । एक-दूसरे से प्रेम करने लगते हैं । उनकी माताएं यह देख कर उन के विवाह की बात पक्की कर देती हैं । लड़का उसे स्वयं पढ़ाता है, और फिर शिक्षा-प्राप्ति के लिए विलायत चला जाता है । लड़के का पिता अपने निर्धन भाई के यहां संपन्न पुत्र का विवाह नहीं करना चाहता, और उस की सगाई

किसी रईस के घर कर देता है। उस की प्रेयसी दिल पर पत्थर रख कर उस के विवाह की तैयारी शुरू कर देती है। इस के बाद उस की सगाई भी कहीं हो जाती है और उस के विवाह की तैयारियां भी आरंभ हो जाती हैं; परंतु उसे इन तैयारियों से क्या मतलब ? वह तो मृत्युशय्या पर पड़ जाती है। इस स्थल पर उस दुखियारी विरह की मारी की राम-कहानी उस की अपनी ज़बानी सुनिए :—

मैं नन्हीं-सी जान ग़रीब बड़ी, कभी भूल के दुख न किसी को दिया !
न तो रूठी कभी न किसी से लड़ी, मेरी बातों ने घर को है मोह लिया !
मेरे सर में तुम्हारा ही ध्यान बसा, मेरी चाह के राज-दुलारे बने !
तुम्हें देवता जान के मन में रखा, मेरी भोली-सी आँखों के तारे बने !

शेली ने कहा है—'कविता हृदय के भावों की प्रतिच्छाया मात्र है।' दिल के दर्पण का इस से सुंदर चित्र कम ही मिलेगा। निराशा की मारी मृत्यु की बाट जोहती है, और तड़प-तड़प कर कहती है :—

मुझे प्रीत का यां कोई फल न मिला, मेरे तन को यह आग जला ही गई !
मुझे चैन यहां कोई पल न मिला, मेरे मन को यह आग जला ही गई !
मेरा एक जगह जो पयाम[1] लगा, मेरे दिल से तड़प के यह निकली दुआ,
नहीं चाह ही दिल में तो ब्याह है क्या, तू खुदाया मुझे यूं ही जग से उठा !
मुझे चाह ने खा लिया घुन की तरह, मरी जान कल ही बिगड़-सी गई !
मेरा जिस्म भी बन गया बन की तरह, योंही बिस्तरे मर्ग[2] पै पड़-सी गई !

---

१ विवाह-संबंध। २ मृत्यु-शय्या।

मुझे जीने जो प्रीत का फल न मिला, मेरे तन को आग जला ही गई!
मुझे प्रीत की गीत का फल न मिला, मेरे मन को यह आग जला ही गई।

निराशा और निराशाजनक भावों तथा उद्‌गारों का चित्र-चित्रण तो बहुतों ने किया होगा ; परन्तु निराशा की दबी हुई आहों का नक़्शा जिस प्रकार अज़मतुल्ला ने खींचा है, उसकी नज़ीर बहुत कम मिलती है।

गीत

पिछले पृष्ठों को पढ़ने के बाद इस बात का पता चल जाएगा कि उर्दू कविता में एक नए युग का आविर्भाव हुआ है। एक नये रंग की कविता लिखी जाने लगी है। जिस प्रकार हिंदी कविता नायिका-भेद और राजा-महाराजाओं की स्तुति तथा विलास-भावनाओं के संकुचित युग से निकल कर मुक्ति के महान आकाश में चिड़ियों की भाँति विविध स्वरों से चहकने लगी है, उसी प्रकार उर्दू शायरी भी शमा-परवाने, गुलो-बुलबुल, महबूबो-माशूक़ के जाल से निकल कर नई भावनाओं के साथ जगत में प्रवेश कर रही है।

एक ही तरह की ग़ज़लों का दौर ख़त्म हुए अर्सा गुज़रा गया। अब तो कवि नज़्मों को दुनिया से भी आगे फिर, कविता नलक के एक नए संसार की सृष्टि कर रहे हैं। बड़े-बड़े शाअर छोटे-छोटे सीधे और सरल गीतों में हृदय के कोमलतम उद्‌गारों को व्यक्त कर के साहित्य में नई गंगा बहा रहे हैं। यह गीत पंजाब में सर्वसाधारण की ज़बान पर चढ़े हुए हैं और कुछ तो इतने लोकप्रिय हुए हैं कि गले में अमृत रसने वाले अपने मीठे मादक स्वरों से गाते हुए इन से महफ़िलों को गुँजा देते हैं

सुंदरता के जादू के दिलों को मोह लेने वाले इन गीतों को जन्म देने का श्रेय जालंधर (पंजाब) की नररत्न-प्रसू भूमि में जन्म लेने वाले मौलाना अबुल असर 'हफ़ीज़' को है। अपने इस रंग के विषय में वह स्वयं ही लिखते हैं—

किया पाबंदे नै नाले का मैं ने,
यह तर्ज़ खास है ईजाद मेरी ।[1]

और है भी ठीक । हफ़ीज़ नेवे गीत लिखेहैं जिन में नातले गान बन गए हैं और आहें तानें । 'मन है पराए बस' में शीर्षक से उन का गान मेरे इस कथन का प्रमाण है ।

साहित्य में भी क्रांति का पैग़ाम लाने वाले की क़द्र पहले कठिनाई से ही होती है । उन्हों ने अपना इस प्रकार का पहला गीत 'कान्ह की बंसरी' लिख कर जब लहौर के एक प्रसिद्ध साप्ताहिक में भेजा, तो उस के संपादक ने, जो 'हफ़ीज़' साहब के घनिष्ट मित्र थे, उन को 'इस बेगार टालने' पर बहुत उलाहना दिया, और गीत को आकर्षक स्थान न देकर एक कोने में छाप दिया । किंतु जादू वह जो सर पर चढ़ कर बोले । दूसरे ही दिन जब 'हफ़ीज़' साहब ने वही गीत अपनी जादू भरी आवाज़ में गाकर सुनाया तो महफ़िल झूम गई । उक्त संपादक महोदय भी वहीं बैठे थे । उन्होंने अपनी ग़लती को महसूस किया और जाना कि इस प्रकार के छोटे-छोटे गीतों की ईजाद एकदम फ़ज़ूल नहीं और साहित्य के ख़ज़ाने को और भी समृद्ध करने वाली है । दूसरे अंक में उन्होंने इस गीत को दोबारा, संपाद कीय नोट में उस की विशेष प्रशंसा करते हुए छापा, और महीनों वह गीत लोगों की ज़बान पर रहा ।

'शाहनामा इस्लाम' के लेखक, श्री 'हफ़ीज' इस रंग में लिखते हैं ।

बन्सरी बजाए जा !
काह्न मुरलीवाले, नन्द के लाले,
बंसरी बजाए जा !
प्रीत में बसी हुई अदाओं[2] से ,

१मैंने नालों को लय में बंद कर दिया है, और यह नई तर्ज़ मेरी अपनी ईजाद है ।
२ भावभंगियों ।

गीत में बसी हुई सदाओं[1] से,
ब्रजवासियों के झोंपड़े बसाए जा,
सुनाए जा, सुनाए जा!
काह्न मुरली वाले नन्द के लाले,
बंसरी बजाए जा!
बंसरी की लय नहीं हैं आग है,
और कोई शय[2] नहीं है आग है,
प्रेम की यह आग चार सू लगाए जा!
सुनाए जा, सुनाए जा!
काह्न मुरली वाले नन्द के लाले,
बंसरी बजाए जा!

इस के बाद गीतों की रौ में उर्दू का कवि-समाज बह चला। इस गीत का प्रभाव अभी तक इतना बाक़ी है कि 'दर्दे ज़िन्दगी' और हदीस- अबद' के रचयिता हज़रत अहसान 'दानिश' ने काफ़ी देर बाद लिखा :—

ब्रजवासियों में शाम, बंसरी बजाए जा।
मस्तियां उबल पड़ें, मदभरी सदाओं से;
प्रेम रस बरस पड़े, मनचली हवाओं से!
मुसकरा रही है शाम, श्याम मुसकराए जा।
ब्रजवासियों में शाम, बंसरी बजाए जा।
गोपियों को सुध नहीं, मस्तियों में जोश है;
रागरंग में है ग़र्क़[3] रंग मयफ़रोश[4] है।

---

१ आवाज़ों। २ वस्तु। ३ डूब गया। ४ मदिरा बेचेने वाला।

झूमती है कायनात[1] झूम कर झुमाए जा।
ब्रजवासियों में शाम, बंसरी बजाए जा।

कृष्ण के गीत

'हफ़ीज़' साहब के इस गीत के बाद गोकुल के उस ग्वाले ने कविता के संसार को चिर जाग्रत रखने वाले बंसरी वाले ने संगीत की दुनिया में अगणित गीतों का निर्माण कराया, और सांप्रदायिकता के गढ़ पंजाब के उर्दू कवियों से कराया। मौलवी मक़बूल हुसैन अहमदपुरी, जो उर्दू में अपने मीठे-मीठे गीतों के कारण प्रसिद्ध हैं, और जिन की कविता पर ब्रजभाषा का रंग ग़ालिब है, 'हुमायूं', में लिखते हैं—

बंसीधर महराज हमारे,
हृदय-कुंज में बंसी बजाओ ?
सब भक्तों के राजा हो तुम,
प्रेम-गीत से मन को रिझाओ,
तुम सब प्यारों के प्यारे हो,
आओ प्रीत की रीत सिखाओ ?

राधा-स्वामी, अन्तर्यामी,
परमानंद की राह सुझाओ !
बन्सीधर महराज हमारे.
हृदय-कुंज में बंसी बजाओ !

---

१ सृष्टि ।

और 'अदबे-लतीफ़' पत्रिका के एक दूसरे गीत में आप विह्वल होकर पुकार उठे हैं--

अब तो श्याम से उलझे नैन ?
कोई बुलाए हरि के घर से,
बंसी बजाए प्रेम-नगर से,
दिल रूठा अब दुनिया भर से ,
मन की डोर लगी ईश्वर से ,
क्या जानूं आई है रैन !
अब तो श्याम से उलझे नैन !

भक्तों की इस भक्ति से परे, जिस का प्रदर्शन ऊपर के गीतों में किया गया है, भगवान् कृष्ण से संबंधित कविता का एक और रूप भी है। इस में जुदाई के गीत लिखे गए हैं। जब कृष्ण गोकुल को छोड़ कर मथुरा जा बसे तो उन के विरह में गोपियां जिस प्रकार तड़पती थीं, उस का पता केवल इस एक पद से लग जाता है, जब ऊधव के आने पर कोई गोपी रो कर, सिहर कर, कह उठती है—

ऊधो ब्रज की दसा निहारो !

और इसी विरह की उदासी में--जब मथुरा से कोई संदेसा नहीं आता और श्याम घटा घिर आती है, विरह की मारी कोई गोपी पुकार कर कह उठती है—

'सखि श्याम घटा घिर आई!'

पंजाबी भाषा के प्रख्यात कवि लाला धनी राम जी 'चात्रिक' घटा को देख कर सखि के मुँह से कहलवाते हैं—

आजा शाम बिहारी आजा !
शाम घटा लाइयां घनघोरां ,

बाग़ उठा लये सिरते मोरां,
हुन तां शामां तेरियां लोड़ा,
बुझे दिलां दिलां दी जोत जगा जा,
आजा श्याम बिहारी आजा !

नये उर्दू कवियों में अग्रगण्य श्री मीरा जी ने इन्हीं भावनाओं को एक सीधे साधे सरल गीत में व्यक्त किया है:—

सखि श्याम घटा घिर आई, आकाश ने ली अँगड़ाई।
बरखा की रुत फिर छाई, मन बोले राम दुहाई।
सखि श्याम घटा घिर आई !
प्रीतम हैं बड़े हरजाई, कब प्रीत की रीत निभाई।
कब सूनी सेज बिछाई, कब आए श्याम कन्हाई।
सखि श्याम घटा घिर आई !
क्यों बन में टेसू फूले, मन रङ्ग का झूला झूले।
क्यों प्रीतम हमको भूले, क्यों उनको याद न आई।
सखि श्याम घटा घिर आई !
अब आए प्रीतम प्यारा, अब बरसे सुख की धारा।
अब आए श्याम हमारा, अब आए श्याम कन्हाई।
सखि श्याम घटा घिर आई !

एकता के गीत

कृष्ण के संबंध में गीत लिखने के बाद 'हफ़ीज़' जालंधरी ने एक प्रीत का गीत लिखा, जिस में सांप्रदायिकता को मिटा कर एकता का राज्य स्थापित करने की अपील उन्होंने की। 'बांटो और राज्यकरो' की नीति के अनुसार १९०९ से अंग्रेज़ ने हिन्दू-मुसलमान के बीच एक बड़ी खाई बना दी थी। अंग्रेज़ की इसी नीति के फलस्वरूप देश में यदा-

कदा साम्प्रदायिक दंगे हो जाते थे। कवि इस स्थिति से विक्षुब्ध थे और हिन्दू-मुसलमान में एकता स्थापित करने का निरंतर प्रयास करते थे। हफ़ीज़ का गीत इसी प्रयास की कड़ी थी। अपील क्योंकि जनता से थी, इसलिए बड़ी सीधी, सरल भाषा में उन्होने अपने उद्गार रखे थे। गीत लंबा है, यहां पूरा नहीं दिया जा सकता, फिर भी एक दो बंद देखिए:—

अपने मन में प्रीत बसा ले,
अपने मन में प्रीत !
मन-मंदिर में प्रीत बसा ले, ओ मूरख ओ भोले-भाले !
दिल की दुनिया कर ले रौशन, अपने घर में जोत जगा ले !
प्रीत है तेरी रीत पुरानी, भूल गया ओ भारत वाले !
भूल गया ओ भारत वाले,
प्रीत है तेरी रीत !
बसा ले, अपने मन में प्रीत !

क्रोध कपट का उतरा डेरा, छाया चारों खूँट अँधेरा,
शेख़ बिरहमन दोनों रहज़न[1], एक से बढ़ कर एक लुटेरा,
ज़ाहरदारों[2] की संगत में, कोई नहीं है संगी तेरा,
कोई नहीं है संगी तेरा,
मन है तेरा मीत !
बसा ले, अपने मन में प्रीत !

भारत माता है दुखियारी, दुखियारे हैं सब नर-नारी,
तू ही उठा ले सुंदर मुरली, तू ही बन जा श्याम मुरारी,
तू जागे तो दुनिया जागे, जाग उठे सब प्रेम पुजारी,
जाग उठें सब प्रेम पुजारी,

---

[1] डाकू। [2] जो भीतर बाहर से एक नहीं।

गाएं तेरे गीत !
बसा ले, अपने मन में प्रीत !

इसी की गूंज श्री मक़बूल हुसेन अहमदपुरी के यहां सुनिए। गीत का शीर्षक है—'प्रेमपुजारी'। प्रेम का अर्थ यहां एकता से है—

हम तो प्रेम पुजारी !
धर्म प्रेम का सबसे अच्छा, प्रेम की शोभा सारी !
कोई माने या ना माने, हम तो प्रेम पुजारी !
आशा है यह अपने मन की, प्रेम कन्हैया आएं !
सास-साँस को अपना कर लें, हिरदय में रम जाएं !
विपदा कटे हमारी !
हम तो प्रेम-पुजारी !
गाएं भजन बंसी वाले के, ख़्वाजा[१] की जय बोलें !
बड़े पीर[२] की आसा ले कर मन की घुंडी खोलें !
नाव चले मँझधारी !
हम तो प्रेम-पुजारी !
दास बने कमलीवाले के, रामचन्द्र के दरबारी !
कहें मगन हो 'अहमदपुरी'[३] सब से हमारी यारी !
सब से लाज हमारी !
हम तो प्रेम-पुजारी !

मौलाना 'वक़ार' ने भी उस फूट के विरुद्ध आवाज़ उठाई थी जिसने आख़िर देश के दो टुकड़े कर दिये और लाखों को ख़ून में नहला दिया—

जगत में घर की फूट बुरी !
फूट ने रघुवर घर से निकाले पापन फूट बुरी,

---

[१] ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती। [२] ख़्वाजा ग़ौस समदानी जिन को भारत में 'बड़ा पीर' भी कहा जाता है। [३] मौलवी मक़बूल हुसेन अहमदपुर के रहने वाले हैं।

रावन से बलवान पिछाड़े जल गई लकांपुरी ,
जगत में घर की फूट बुरी !

फूट पड़ी तो करबल[1] जाकर हुए हुसेन[2] शहीद[3] ,
मान हो जिन का सारे जग में मारे उन्हें यज़ीद[4] ,
जगत में घर की फूट बुरी !

फूट ने अपना देश बिगाड़ा खो दी सब की लाज ,
बना हुआ है देश अखाड़ा फूट बुरी महाराज ,
जगत में घर की फूट बुरी !

तन से कपड़ा पेट से रोटी फूट ने ली हथियाय ,
धन बल मान सभी कुछ अपना हम ने दिया गँवाय ,
जगत में घर की फूट बुरी !

देश के गीत

पंजाबी भाषा में तो आप को सैकड़ों देश के गीत मिलेंगे, परंतु उर्दू में सब से पहले शायद महाकवि 'इक़बाल' ने ही देश का गीत लिखा। देश के बच्चे तथा युवक उसे लय और तन्मयता से गाते हैं--

सारे जहां से अच्छा हिंदोस्तां हमारा।
हम बुलबुलें हैं उस की, वह गुलिस्तां[5] हमारा ॥
ग़ुरबत[6] में हों अगर हम, रहता है दिल वतन में।
समझो हमें वहां ही, दिल हो जहां हमारा ॥
परबत वह सब से ऊँचा, हमसाया[7] आसमां का।
वह संतरी हमारा, वह पासबां[8] हमारा ॥

---

[1] करबला। [2] हज़रत हुसैन। [3] बलिदान। [4] हज़रत हुसैन का घातक।
[5] उपवन। [6] निर्वासन [7] पड़ोसी। [8] रक्षक।

गोदी में खेलती हैं जिस की हज़ारों नदियां ।
गुलशन है जिन के दम से रश्के जनां[1] हमारा ॥
मज़हब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना ।
हिंदी हैं, हम वतन है हिंदोस्तां हमारा ॥

इसी दौर में उन्हों ने भारतीय बच्चों का राष्ट्रीय गीत 'मेरा वतन वही है, मेरा वतन वही है' और 'नया शिवाला' लिखे थे । नया शिवाला के अन्त में उन्हों ने लिखा था 'सारे पुजारियों को मय प्रीत की पिलादे;' यद्यपि अपने अन्तिम दिनों में उन्हों ने यह मय पीना छोड़ दिया और साम्प्रदायिकता के हलाहल का सेवन आरम्भ कर देश से द्रोह किया पर देश की प्रीत का प्याला दूसरों के हाथ में निरन्तर घूमता रहा । कवि अख़तर शेरानी ने लिखा—

भारत, सब की आँख का तारा भारत,
भारत है जन्नत का नज़ारा भारत,
सब से अच्छा सब से न्यारा भारत,
दुख-सुख में दुख-सुख का सहारा भारत,
प्यारा-प्यारा देश हमारा भारत !

शाही शानो-शौकत वाली बस्ती,
इज़्ज़त वाली अज़मत[2] वाली बस्ती,
सदियों की ज़िंदा शोहरत[3] वाली बस्ती,
तारीख़ों[4] की आँख का तारा भारत,
प्यारा-प्यारा देश हमारा भारत !

कैसी भीनी-भीनी हवाएं इस की,
कैसी नीली-नीली घटाएं इस की,

---

[1] वह जिस पर स्वर्ग को भी ईर्ष्या हो । [2] प्रतिष्ठा । [3] ख्याति । [4] इतिहासों ।

कैसी उजली-उजली फ़िज़ाएं इस की,
दुनिया में जन्नत का नज़ारा भारत,
प्यारा-प्यारा देश हमारा भारत !

यह गीत गाने के लिए लिखा गया है । सब मिल कर एक साथ इस पद को गाते हैं— 'प्यारा-प्यारा देश हमारा भारत' और फिर दो व्यक्ति मिल कर अन्य पद गाते हैं । फिर सब वही पद गाते हैं ।

भारतवर्ष और महात्मा गांधी एक नाम होकर रह गये हैं, जैसे गोकुल और कृष्ण, फिर यह कैसे संभव था कि देश के गीत गाए जाते और राष्ट्र-पिता महात्मा गांधी का गीत न गाया जाता ! इस नये युग में यह गीत भी गाया गया और इसके गानेवाले हैं प्रसिद्ध मुसलमान राष्ट्रीय कवि 'साग़र' निज़ामी । 'महात्मा गांधी' शीर्षक गीत में वे लिखते हैं—

कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा !
दुनिया गो थी बैरी उस की दुश्मन था जग सारा,
आख़िर में जब देखा साधू वह जीता जग हारा,
कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा !
सच्चाई के नूर[1] से उस के मन में था उजियारा,
बातिन[2] में शक्ती ही शक्ती ज़ाहर[3] में बेचारा,
कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा !

---

[1] ज्योति । [2] अंदर से । [3] प्रकट में ।

बूढ़ा था या नये जन्म में बंसी का मतवारा,
मोहन नाम सही पर साधू रूप वही था सारा,
कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा !
भारत के आकाश पे है वह एक चमकता तारा,
सचमुच ज्ञानी सचमुच मोहन सचमुच प्यारा-प्यारा,
कैसा संत हमारा
गांधी
कैसा संत हमारा ?

यह गीत कोरस में गाने वाले हैं। इन की लय और तान भी वैसी ही है। इन को पढ़ते समय प्रतीत भी ऐसा ही होता है जैसे देश-प्रेमियों का जुलूस स्वदेश-प्रेम से विभोर होकर यह गीत गाते-गाते जा रहा है।

रहस्यवादी गीत

ईरान और अरब के सूफ़ी कवियों का प्रभाव उर्दू कविता पर आरम्भ ही से गहरा रहा है। यदि पुराने उर्दू कवियों के दीवानों (कविता-संग्रहों) का अध्ययन किया जाए तो उत्कृष्ट कवियों के यहां प्राय: प्रत्येक ग़ज़ल में एक न एक शेर ऐसा मिल जाएगा, जिसे मार-फ़त का शेर कहा जाए—जिसमें इस संसार और इसके स्रष्टा की रहस्यमयता के प्रति जिज्ञासा हो। ग़ालिब के दीवान का पहला शेर ही ऐसा है:—

नक़्श फ़रयादी है किस की शोख़िए तहरीर का,
काग़ज़ी है पैरहन हर पैकरे तस्वीर का।

गीतों की इस नयी धारा पर सूफ़ी कवियों का प्रभाव तो पड़ा ही है, परन्तु कबीर आदि हिंदी के रहस्यवादी कवियों का प्रभाव भी पड़ा है;

और कवियों ने रहस्यमय के प्रति जिज्ञासा दर्शाने के साथ जीवन, माया आदि के गीत भी लिखे हैं।

'वक़ार' अम्बालवी का एक गीत है; रहस्यमय के प्रति जिज्ञासा देखिए:—

सजनी, कौन बसत उस पार !
मुझ पै चला है मन्तर किसका ?
धरती किसकी अम्बर किसका ?
सूरज किसका सागर किसका ?
कौन बसत उस पार !
सजनी, कौन बसत उस पार !

नीला अम्बर सुन्दर तारे,
यह सागर वे मोती सारे,
चाँद की नैया धारे धारे,
किरणों की पतवार !
सजनी, कौन बसत उस पार !

बन के ऊँचे वृक्ष घनेरे,
चीते, शेर औ' लाल बंबेरे,
फिरते हैं दौड़े शाम सबेरे,
मोरों की झंकार !
सजनी, कौन बसत उसपार !

श्री हरिकृष्ण प्रेमी अपने काव्य "अनन्त के पथ पर" में ऐसी ही अनन्त के पथ पर चलने वाली का चित्र खींचते हैं जो सृष्टि और इसके वैचित्र्य को देख कर आश्चर्यचकित हो पूछती है :—

इस रत्नजटित अम्बर को,
किसने वसुधा पर छाया ?
करुणा की किरणें चमका,
क्यों अपना आप छिपाया ?

नभ के पर्दे के पीछे,
करता है कौन इशारे ?
सहसा किसने जीवन के,
खोले हैं बन्धन सारे ?

इसी "किस" की खोज में वह अपनी कुटिया से चल देती है। अनन्त के पन्थ पर उस चलने वाली के भावों को व्यक्त करते हुए प्रेमी जी उसी के शब्दों में लिखते हैं:—

किस का अभाव मानस में,
सहसा शशि सा आ चमका ?
है क्या रहस्य बतला दे,
कोई इस अन्तरतम का ?

इन सरल तरल नयनों की,
किस की उज्ज्वल छवि छाई ?
किस ने मेरे प्राणों में,
अपनी तस्वीर बनाई ?

अब पथ भूली उस सुख का,
पाया यह कंटक कानन ?
किस ओर बहा जाता है,
मेरा यह आकुल जीवन ?

ऐसी ही खोज और जिज्ञासा वक़ार साहब के गीत की उस नायिका को भी है : वह उसी अनन्त के पथ पर चलने वाली की भाँति जैसे अपने आपँ से पूछती है—

पीत का किस की रोग लिया है ,
ऐश को छोड़ा सोग लिया है ,
याद में किसकी जोग लिया है ,
त्याग दिया घरबार सजनी !
कौन बसत उस पार !

जोत जगी है किस की मन में ,
बीत रही है किस की लगन में ,
ढूंढ़ रही हूँ किस को वन में ,
किस के हूँ बलिहार सजनी !
कौन बसत उस पार !

ज्ञान का सागर लहरे मारे ,
ध्यान की नैया धारे धारे ,
साँस है नैया खेवन हारे ,
कठिन बड़ी मझधार सजनी !
कौत बसत उस पार !

माया के गीत

अतीत काल से संतजन माया को कोसते आए हैं । कबीर ने लिखा है—

माया महा ठगनी हम जानी ।
निरगुन फाँस लिए कर डोले, बोले मधुरी बानी ।
केशव के कमला ह्वै बैठी, शिव के भवन भवानी ॥

माया के विषय में इस युग के प्रायः सभी कवियों ने गीत लिखे हैं। मैं यहां एक–दो गीत दूंगा। माया के संबंध में अधिक लोकप्रिय होनेवाला गीत जो बहुत-सी पत्र-पत्रिकाओं में उद्धृत होने के बाद जन-साधारण की ज़बान पर चढ़ गया वह कवि मनोहरलाल 'रहत' का गीत है। यह सबसे पहले सुदर्शन जी की मासिक पत्रिका 'चंदन' में निकला था। कवि लिखता है:—

बाबा, सुन लो मेरा गीत ?

दुखिया मन है दुखिया काया,
छूट गया है अपना पराया,
दुनिया क्या है ? माया, माया!

माया के सब मीत हैं लेकिन,
माया किस की मीत ?
बाबा, सुन लो मेरा गीत!

माया वाले लोभ के बंदे,
तन के उजले मन के गंदे,
झूठी दुनिया झूठे धंदे,

कोई नहीं है संगी-साथी,
सब की झूठी प्रीत!
बाबा, सुनलो मेरा गीत!

माया ही से प्यारा है सारा,
झूठा यह संसार है सारा,
खोटा कारोबार है सारा,

रीत का कोई खरा नहीं है,
सब की खोटी रीत!

बाबा, सुन लो मेरा गीत !

इसी सिलसिले में स्वर्गीय अब्दुल रहमान बिजनौरी का एक गीत 'जोगी की सदा' भी काफ़ी मर्मस्पर्शी है। मैं इस के दो बंद नीचे देता हूँ—

यह निथरी-निथरी आँखें ,
यह लंबी-लंबी पलकें ,
यह तीखी-तीखी चितवन ,
यह सुंदर-सुंदर दर्शन ,
माया है, सब माया है !

यह गोरे-गोरे गाल ,
यह लंबे-लंबे बाल ,
यह प्यारी-प्यारी गरदन ,
यह उभरा-उभरा यौवन ,
माया है, सब माया है !

माया की मदिरा पीकर गहरी नींद में सोने वालों को जगाने के लिए श्री अमरचंद 'क़ैस' ने भी एक सुंदर गीत लिखा है—

उठ निद्रा से जाग ऐ प्यारे, उठ आलस को त्याग ऐ प्यारे !
तेरे जागे जाग उठेंगे, तेरे सोए भाग, ऐ प्यारे !
इस धन से क्यों खेल रहा है, यह धन तो है नाग, ऐ प्यारे !
मन चंचल है, थामे रखना, चंचल मन की बाग, ऐ प्यारे !
आशा तृष्णा जाल सुनहरी, इन दोनों से भाग ऐ प्यारे !
माया एक मनोहर छल है, इस माया को त्याग, ऐ प्यारे

'वक़ार' साहब का यह गीत भी काफ़ी सुन्दर है—

रंग रूप रस सब माया है !
इस माया की चाल से बचना, इस माया के जाल से बचना ;
इस ने बहुतों का मन भरमाया है !
रंग रूप रस सब माया है !
राग की लहरें जाल की तारें, मन-पंछी उलझा कर मारें ;
इस में फँस कर मन पछताया है !
रंग-रूप रस सब माया है !
रंग है क्या, इक नीभ[1] का धोका, रूप है क्या, इक रीझ का धोका ;
रस क्या, ? ढलती फिरती छाया है !

पंडित इंद्रजीत शर्मा के एक-दो चौपदे भी देखिए:—

माया आनी - जानी है ,
माया बहता पानी है ,
माया रूप कहानी है ,
त्याग रे मूरख, माया त्याग !

माया को तू मीत न जान ,
इस बैरन की प्रीत न जान ,
सीधी इस की रीत न जान ,
त्याग रे मूरख, माया त्याग !

जान पाप का मूल इसे ,
जान दुखों का भूल[2] इसे ,
याद न कर अब भूल इसे ,

---

१ दृष्टि—यह शब्द पंजाबी भाषा का है। २ चोला

त्याग रे मूरख, माया त्याग !

सन्तोने नारी को माया और माया को नारी का रूप बताया है। इसी विचार को आधारभूत मान कर कवि अख्तर-उल-ईमा ने एक बहुत सुन्दर गीत लिखा है :—

पल पल बदले रंग यह नारी, पल पल रूप भरे !
कभी अँधेरी रातमें आकर झूठे दिये जलाये,
कभी कभी अपने आंचल से, जलते दिये बुझाये,
कभी लिये पलकों में आंसू, मीठे भेद बताये,
बात बात में कभी ओंठो से, कड़ुवा रस टपकाये,

दिन से रात करे !

पल पल बदले रंग यह नारी पल पल रूप भरे !
नये खिलौने गढ़े आप ही, आपही बैठ के रोये,
आप ही सोग मनाये उसका, जो कुछ आपही खोये,
आप बगूले काटे थक कर आप हवाएँ बोए,
आप बिछाये राह में काटे आप ही उन पर सोये,

उल्टी बात करे !

पल पल बदले रंग यह नारी पल पल रूप भरे !
आप ही अपना रूप सँवारे आप ही जात से जाए,
आप ही अपने पीछे भागे आपही हाथ न आये,
आप ही अपने रंग से खेले आपही फिर शरमाये,
आप ही अपना भेद बता कर फिर पीछे शरमाये,

जीत को मात करे !
पल पल बदले रंग यह नारी पल पल रूप भरे !

संसार

कवियों ने संसार को कई पहलुओं से देखा है, और ऐसा ज्ञात होता है कि उन के हाथ भ्रांति के सिवा कुछ नहीं आया। पंजाब के प्रसिद्ध सूफ़ी कवि साईं बुल्हेशाह ने इसे भीतर से देखने का उपदेश दिया है :—

इस दुनिया विच अँधेरा है,
इह तिलकन बाज़ी बेहड़ा है,
वड़ अंदर देखो केहड़ा है,
बाहर खफ़तन पई ढुढेंदीऐ[१]!

वे सूफ़ी थे, फ़कीर थे, कदाचित् उन्हों ने ऐसा किया हो; परंतु जन-साधारण तो ऐसा नहीं कर सकते. और जन-साधारण के दुखों से दुखी कवि इस के भीतरी रूप को देख कर कब शांत हो कर संतोष से बैठ सकते हैं? अबुल असर 'हफ़ीज़' संसार को दुखी देखते हैं और एक गीत कहते हैं:—

दुखिया सब संसार,
प्यारे, दुखिया सब संसार!
मोह का दरिया, लोभ की नैया, कामी खेवनहार,
मौज के बल पर चल निकले थे, आन फँसे मँझधार,
प्यारे, दुखिया सब संसार!

और इन दुनिया वालों की दुनियादारी से भी कवि दुखी है :—

तन के उजले, मन के मैले, धन की धुन असवार,
ऊपर-ऊपर राह बतावें, भीतर से बटमार,

---

[२] साईं बुल्लेशाह कहते हैं कि इस दुनिया में चहुँदिशि अँधेरा ही अँधेरा है, यह तो एक फिसलते आँगन की नाईं है।।जो आता है फिसल जाता है। ऐ बावरी, तू इसे भीतर से देख। पागल, बाहर ही क्यों सर पटक रही है?

'अहसान' साहब ने भी 'संसार' पर एक गीत लिखा है और इसे सपना कहा है:—

सीस नवा करा झरना रोए, छोड़ के उत्तम देस।
उस की चिंता राम ही जाने, जिस का पी परदेस॥
सावन औ' फिर काली बदली, बूँदनियों के तार।
रीत जगत की प्रीत से खाली, सपना है संसार॥

इंद्रजीत शर्मा इसे 'झूठ' समझते हैं। समझते हैं संसार में सत्य कुछ नहीं, नित्य कुछ नहीं, सब झूठ है। इस लिए कहते हैं:—

झूठी है यह दुनियादारी, झूठा है व्योहार,
प्रेम है झूठा, प्रीत है झूठी, झूठा है सब प्यार,
प्यारे झूठा सब संसार!
रिश्ते-नाते झूठ के बंधन, हैं जी का जंजाल,
झूठ का चारों ओर जगत में फैल रहा है जाल,
प्यारे झूठा सब संसार!
झूठे ज्ञानी, झूठी बानी, झूठा दीन उपदेश,
झूठी रीत जगत की बाबा, देश हो चाहे विदेश,
प्यारे झूठा सब संसार!
झूठी नैया, झूठा खेवट, झूठे हैं पतवार,
भवसागर में आन फँसे हैं, कैसे हो उद्धार?
प्यारे झूठा सब संसार!

पंडित बिहारीलाल 'साबिर' को जग में प्रेम दिखाई देता है और वे लिखते हैं:—

४

यह जग प्रेम-पुजारी है बाबा !
बिरहन का मन प्रेम का मंदिर,
प्रियतम इस मंदिर के अंदर,
ईश्वर प्रेम, प्रेम है ईश्वर,
इस की गति न्यारी है बाबा !
यह जग प्रेम-पुजारी है बाबा !

और इतनी भिन्न बातों को देख कर कोई क्या निर्णय कर सके ? वास्तव में न संसार सपना है, न झूठ है, न प्रेम-पुजारी है, कुछ है तो अपने मन का प्रतिबिंब है। जैसा किसी का मन होता है वैसा ही उसे संसार लगता है।

जीवन

जीवन क्या, जग में झाँकी है !
झंकार कौन वीणा की है ?
है चमक मेघ की, बिजली की,
यह फुदकन है किस तितली की ?
डोरी यह किस के है कर में,
जो उड़ा रहा दुनिया भर में ?
यह उलझन कैसी बाँकी है !

श्री उदयशंकर भट्ट ने अपनी 'जीवन' शीर्षक कविता में कुछ ऐसे ही प्रश्न किए हैं। हां, यह उलझन ही है।

जीवन माया है अथवा माया ही जीवन है, इस का कोई पता नहीं चलता। वास्तव में माया, संसार और जीवन तीनों ही रहस्य हैं। जहां कवि माया और संसार की गुत्थी को नहीं सुलझा सके वहां जीवन की गुत्थी उन से क्या सुलझती ! नये कवियों ने मार्क्स और लेनिन के दर्शन से प्रभावित होकर जीवन दर्शन को एक दूसरे प्रकार से समझने का

प्रयास किया है। परन्तु अभी उस दर्शन का प्रतिबिंब उर्दू गीतों में नहीं आया।

उर्दू के इस दौर में जीवन पर भी गीत लिख गए हैं। मैं एक गीत देता हूं; जिस में जीवनी के बदले हुए रंगों का सुन्दर चित्रण किया गया है। रचयिता हैं 'मीरा जी'':—

रंग बदलता जाए जीवन, नया रंग भरभाये,
जग जीवन हर रंग का भेदी, रंग बदलता जाए,
जान जान कर ज्ञानी जीते, मूरख धोखे खाये,
जीवन रंग बदलता जाए!

जग जीवन है मन का मौजी, हँसे तो हँसता जाए,
आप हँसे औरों को हँसाये, हँसी न रुकने पाये!
हँसते हँसते हाथ बढ़ाये,
जिसको सामने हँसता पाये!
उसे बुलाये साथ मिलाये,
हँसते हँसते आगे जाए, पीछे कभी न आये,
जीवन रंग बदलता जाए!

जग जीवन है जन्म का रोगी, रोए तो: बरखा छाये!
आप रोए औरों को रुलाये, दर्द न मिटने पाये,
दीपक परवानों को जलाये, आप भी घुलता जाए!
जीवन रंग बदलता जाए!

जग जीवन है एक दिवाना, मुँह आई कह जाए,
और की बात सुने कब पल को, कहने पर जब आये!
इस को रोक नहीं है कोई, कहे तो कहता जाए,
सुनकर कोई माने न माने. इसको कौन सुझाये!

जीवन रंग बदलता जाए !

जग जीवन है गोरख धन्धा,
रङ्ग बिरंगा इसका फन्दा !

जब यह जाल बिछाने आए, कोई न बचने पाये,
जीवन रङ्ग बदलता जाए !

हर युग में आये सौ ज्ञानी, बैठे ध्यान लगाये !
भूल भुलैया में सब उलझे, कौन यह भेद बताये,
जग जीवन है एक पहेली, बूझे जो मिटजाए !

जीवन रङ्ग बदलता जाए !

'वक़ार' साहब ने लिखा है—

मोह चंचल की नदिया पर है, माया-रूपी घाट,
आशा नैया, काम खेवैया, लोभ हैं इस के पाट !
जीवन है इक रैन अँधेरी, साँस दुखों की बाट,
सम्मुख कजली-बन है भयानक, चिंता मन का रोग !
टेढ़ा मारग, लगी हुई है, बाघ के मुँह को चाट,
जीवन है इक रैन अँधेरी, सांस दुखों की बाट !

प्रेम विरह के गीत

(क) प्रेम के गीत

उर्दू के प्रगतिशील कवि श्री फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़' ने यद्यपि लिखा है 'और भी दुख हैं ज़माने में मुहब्बत के सिवा', फिर भी हर कवि के जीवन में एक न एक वक्त ऐसा आता है, जब उसे दुनिया में मुहब्बत के सिवा कुछ दिखाई नहीं देता।

जो दिल कि मुहब्बत का गुनहगार नहीं,
जो दिल कि मुहब्बत का सजावार नहीं।
पत्थर है उसे दिल न कहो ऐ 'आज़ार,
जिस दिल को मुहब्बत से सरोकार नहीं।

फिर आप जानते हैं कवि और सब कुछ होते होंगे, पत्थर-दिल नहीं होते! संसार के साहित्य में ऐसे अमर काव्यों की कमी न होगी जो किसी कवि ने अपने प्रेम में सफल व असफल होकर लिखे। फिर यह कैसे संभव था कि उर्दू कविता की कोई नई धारा बहती और उसमें प्रेम के गीत न लिखे जाते? पिछले दस-पन्द्रह वर्षों में बीसियों प्रेम के गीत लिखे गये हैं। मैं यहाँ केवल दो गीत दूँगा। एक तासीर साहब का है, जो उर्दू के पुराने कवि हैं और जिनके यहाँ आप को उर्दू कविता का हर रंग मिलेगा और दूसरा एक युवक कवि 'ज़फ़र' का। पहला गीत इस प्रकार है:–

तुम भी प्रीत करो तो जानो,
हम दुखियों की फ़रियादों को!
दिल से टीस उठे तो दिल से,
तुम भूलो सब बेदादों[1] को!

प्रीत करो तो जानो!

प्रीत करो अपने जैसे से,
सुन्दर सूरत पत्थर दिल से!
दर दर सर टकराओ जैसे,
दीवानी मौजें साहिल से!

---

[1] अत्याचार।

प्रीत करो तो जानो !

प्रीत के शोले ऐसे लपकें ;
जल-बुझ जाएं सब गुन-औगुन !
ना कोई अपना ना कोई दूजा ,
ना कोई बैरी ना कोई साजन !

प्रीत करो तो जानो !

'ज़फ़र' का गीत है :—

रोग लगा बैठा——कर के तुझ से प्रीत !
मेरी ठंडी साँसें आग ,
मेरी आहें दीपक राग ,
मेरे नग़मे दुख के गीत ,
रोग लगा बैठा——कर के तुझ से प्रीत !
मेरी आँखें वर्षा रैन ,
मेरा हर आँसू बेचैन ,
रोते रहना मेरी रीत !
रोग लगा बैठा——कर के तुझ से प्रीत !

(ख) विरह के गीत

संसार का साहित्य वियोग की करुण भावनाओं से भरा हुआ है। श्रीयुत पंत लिखते हैं :—

वियोगी होगा पहला कवि ,
आह से उपजा होगा गान ।

उर्दू में भी हिज्रो-फ़िराक़ सदैव से कवियों के आकुल मन में उथल-पुथल मचाते रहे हैं। वियोग चाहे किसी का हो, हृदय को विकल कर देता है। कौन जाने इस संसार में दिन-रात वियोग की अग्नि में कितने

हृदय जल कर भस्म हो रहे हैं ? भावुक पंजाब के प्राणों पर तो वियोग का साम्राज्य ही है। अपने माता-पिता की जुदाई के ख़याल से ही पंजबी बहन सिहर उठती है और जी में रो कर गा उठती है—

साडा चिड़ियाँ दा चंबा वे, बाबल असां उड़ जाना। [१]

और फिर—

खेड़न दे दिन चार नी माए बरजत नाहीं। [२]

पंजाबी युवती फ़ुरक़त की मारी बैठी है। कौवा मुंडेर पर आकर काँय काँय करता है परंतु निराशा इस हद तक बढ़ गई है कि कौवे के बोलने से भी आशा नहीं बँधती। जल कर उसे कहती है—

तेरी काँ काँ कागा अड़िया, मेरे जी नू साड़े।
ओह न आए, अखां पक गइयां, बीते कई दिहाड़े।
चंगा है जल-जल बुझ जाइये, मुकन सगर पुआड़े।
दोस भला की तेरा कागा, कर्म असाड़े माड़े। [३]

---

१ ऐ पिता, हम सहेलियों का गुट तो चिड़ियों के चंबे (झुंड) जैसा है, हमें तो एक न एक दिन विभिन्न दिशाओं में उड़ जाना है।

२ चार दिन ही तो खेलने के हैं, माँ, मुझे मत रोक!—इस एक ही वाक्य में माता-पिता के जुदाई के ख़याल और ससुराल के व्यस्त जीवन की झलक और उस से उत्पन्न होनेवाली कैसी हसरत मौजूद है, इस का पाठक भली भाँति अनुमान कर सकते हैं।

३ ऐ काग, तेरी कांय-कांय मेरे जी को जलाती है। प्रतीक्षा करते-करते मेरी आंखें पक गईं, दिन पर दिन बीत गए, पर वे नहीं आए (तेरे बोलने से आशा बँधे तो कैसे बँधे?) विरह की आग में तिल-तिल जलने से तो अच्छा है कि शीघ्र ही जल कर सदैव के लिए बुझ जायँ। (फिर दूसरे चरण जब निराशा चरम सीमा तक पहुंच जाती है तो, विरहिन कहती है) 'ऐ कौवे भला इस में तेरा क्या दोष है, हमारे ही भाग्य मंद हैं।'

उर्दू कविता में विरहिन के गीत हिंदी के प्रभाव के बाद ही लिखे गए हैं। उर्दू का हिज्रो-फ़िराक़ प्रेमी को ही तड़पाता रहा, प्रेमिका को नहीं, परन्तु जहां हिंदी ने अन्य बातों में पंजाब की उर्दू कविता पर प्रभाव डाला है, वहां विरहिनी की करुणा ने भी उर्दू शायरों को मोहित किया है।

आधुनिक उर्दू कविता में विरहिन के गीतों का आरंभ कैसे हुआ, इस विषय पर मैं कुछ नहीं कह सकता। इतना ही कहना काफ़ी है कि इस शीर्षक से अनगिनत गीत लिखे गए हैं। मुझे याद है, पन्द्रह सोलह वर्ष पहले जब उर्दू में ऐसे गीत नज़र न आते थे, मैं ने स्वयं एक गीत 'विरहिन का बसंत' शीर्षक लिखा था, जो गवर्नमेंट कालिज होशियार-पुर के हिंदी कवि-सम्मेलन में पढ़ा गया था। श्री 'हफ़ीज़' होशियारपुरी[1] ने भी, जो उस कालेज के छात्र थे, एक गीत लिखा था और मुसल-मान होते हुए भी हिंदी में अच्छा गीत लिखने पर उन की विशेष प्रशंसा भी हुई थी।

'वक़ार,' पंडित बिहारी लाल, पंडित इंद्रजीत शर्मा, श्री 'क़ैस', मक़बूल हुसेन, मीरा जी, अख़्तुलईमां और दूसरों ने विरह-भावनाओं को प्रदर्शित करने वाले बीसियों गीत लिखे हैं। सात आठ वर्ष पहले उर्दू के प्रसिद्ध कवि 'फ़ाख़िर' हरियानवी, जिन्होने 'वहां ले चल मेरा चरख़ा जहाँ चलते हैं हल तेरे,' 'ज़फ़रवाल' आदि नज़्में लिख कर उर्दू में काफ़ी ख्याति प्राप्त की थी 'विरहिन का गीत' शीर्षक से एक गीत लिखा था:—

घर है सूना रात उदास !
दीरघ दिन अँधियारी रातें, कैसे गुज़रेंगी बरसातें !
झूठी थीं सब उन की बातें, रहता है अब यह विश्वास !

---

[1] 'हफ़ीज़' जालंधरी और 'हफ़ीज़' होशियारपुरी, एम० ए०, दो भिन्न कवि हैं।

घर है सूना रात उदास !

मैं दुखियारी पीत की मारी, पड़ गई मुझ पर बिपता भारी !
मन में सुलग रही चिनगारी, कौन बुझाए दिल की प्यास ?

घर है सूना रात उदास !

छाई हैं घनघोर घटाएं, चलती हैं पुरशोर हवाएं,
मन के मीत अगर आ जाएं, तो पूरी हो मन की आस।

घर है सूना रात उदास !

इसी संबंध में श्री 'हफ़ीज' होशयारपुरी का एक गीत देने का लोभ मैं संवरण नहीं कर सकता। कोई विरह की मारी बैठी है, प्रतीक्षा करते-करते संध्या हो जाती है, परंतु उसका प्रियतम नहीं आता, जल कर कह उठती है :—

आग लगे इस मन को आग !

लो फिर रात विरह की आई, चारों ओर उदासी छाई,
जान मेरी तन में घबराई, अपनी क़िस्मत अपने भाग।

आग लगे इस मन को आग !

काली और बरसती रैन, उस बिन नींद को तरसे नैन,
जिस के साथ गया सुख चैन, उस की याद कहे, अब जाग,

आग लगे इस मन में आग !

जिस दिन से वह पास नहीं है, कोई ख़ुशी भी रास नहीं है,
जीने तक की आस नहीं है, जान को है अब तन से लाग !

आग लगे इस मन में आग !

कौन जिए औं किस के सहारे, मीठे- मीठे बोल सिधारे,
गीत कहां प्यारे- प्यारे ? अब न तान न अब वह राग !

आग लगे इस मन में आग !

और फिर जल कर ताना देते हुए कहती है:—

दरस दिखा कर जो छिप जाए, कौन ऐसे से प्रीत लगाए !
क्यों अपनी कोई दसा सुनाए, छोड़ मुहब्बत का खटराग !
आग लगे इस मन में आग !

श्री अमरचंद 'क़ैस' का गीत 'पी दर्शन की प्यास' भी काफ़ी लोकप्रिय हुआ था। लिखते हैं:—

फुलवाड़ी में फूल हैं फूले,
सखियों ने डाले हैं भूले,
वह अपनी दासी को भूले,
होकर किस के दास !
लगी है पी-दर्शन की प्यास।

सुख को मतलब बेचैनों से ?
काम है सारा दिन बैनों से,
कितने दूर हैं वह नैनों से—
जो थे हर दम पास ?
लगी है पी-दर्शन की प्यास !

बरसों बीते आँख लगाए,
इक जां पर सौ-सौ दुख पाए,
ये दिन आए उन को आए—
टूट चली है आस !
लगी है पी-दर्शन की प्यास !

मैं मानता हूँ कि इन गीतों में 'सखि, वे मुझ से कह कर जाते', 'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल,' 'तुम दुख बन इस पथ से आना' और ऐसे ही दूसरे उच्च कोटि के हिंदी गीतों की उड़ान नहीं, परंतु इतना मैं

कहूँगा कि इन सब में दिल है, दिल की कसक और दिल के उद्गार भी हैं और भाषा के अत्यंत सरल होने के कारण यह दिल में घर भी कम नहीं करते !

(ग) स्मृति के गीत

स्मृति के गीत भी वास्तव में विरह के गीत ही हैं, परंतु गत शीर्षक में मैं ने उन गीतों में से कुछ दिए हैं जो 'विरहिन' के नाम से लिखे गए हैं और यह शीर्षक तनिक व्यापक है। इस बात के अतिरिक्त मैं वर्तमान शीर्षक में यह भी दिखाना चाहता हूँ कि किस भांति विभिन्न कवियों ने एक ही भाव से प्रेरित होकर गीत लिखे हैं। कविता वास्तव में भाव का चित्र होती है और चूँकि इस संसार में एक-जैसी परस्थितियों में फँसे हुए मनुष्यों के दिलों में एक-जैसे उद्गार उठ सकते हैं, इस लिए उन भावों को जिस भाषा का चोला पहनाया जाता है, वह भी एक-जैसी हो सकती है। अच्छी कविता है भी वही जिसे पढ़ कर उस परिस्थिति से दो-चार होनेवाले उसमें अपने ही हृदय की प्रतिच्छाया देखें।

दिलवाले लोगों के जीवन में स्मृति भी काफ़ी दर्द पैदा किया करती है। श्रीमती महादेवी वर्मा की एक कविता में विरहिन का सारा जीवन बरसात की रात बन कर रह गया है, क्योंकि जीवन-आकाश पर कोई सुधि बन कर, स्मृति बन कर छा रहा है। लिखा है :—

बाहर घन तम, भीतर दुख तम, नभ में विद्युत् तुझ में प्रियतम,
जीवन पावस रात बनाने, सुधि बन छाया कौन ?

हां तो वर्षा ऋतु में, वर्षा ही क्यों, शीत, ग्रीष्म, पतझड़, वसंत, सब ऋतुओं में ही कौन जाने किस की सुधि किस के दिल को तड़पाती रहती है !

पंजाबी भाषा के कवि नंदकिशोर 'तेरी याद' नामक कविता में लिखते हैं:—

जिस वेले पत्तियाँ दे पक्खे, हस्स हस्स पौन हिलांदी ए,
जिस दम कुदरत धरती उत्ते पल्ले नवें बिछांदी ए,
फुलां दे जद मुखड़ां उत्ते ओस आँसू टपकांदी ए,
अग्ग मुहब्बत दी दिल जिस दम बुलबुल दा गरमांदी ए,
तेरी याद दिलां दे जानी क्यों उस वेले आंदी ए ? [१]

श्री अख़्तर हुसेन रायपुरी के भाई श्री मुज़फ़्फ़र हुसेन 'शमीम' ने, जो अपनी कविताओं में सरल हिंदी शब्द भर कर उन्हें संगीतमय बना देते हैं, एक गीत लिखा है। वह ऐसे ही भवों से परिपूर्ण है।

जब पिछले पहर की कोयल उठ कर प्रीत के गीत सुनाती है,
जब शब के महल से सुबह की दुल्हन आंखें मलती आती है,
जब सर्द हवा हर पगडंडी पर लहराती बल खाती है,
जब बात सबा से करने में एक-एक कली शरमाती है,
जब पहली किरण सूरज की उठ कर सैरे चमन को जाती है,
आकाश से ले पाताल तलक इक मस्ती सी छा जाती है,
तब क्या जाने कंबख़्त सबा चुपके से क्या कह जाती है ?
फिर दर्द-सा दिल में होता है, फिर याद तुम्हारी आती है !

पंजाबी के तरुण उर्दू कवि रणवीर सिंह 'अमर' ने भी अपनी एक कविता में बिलकुल एक ऐसा ही चित्र खींचा है। लिखते हैं :—

---

१ जिस समय बयार हँस हँस कर पत्तों के पंखों को हिलाती है, जिस समय प्रकृति धरती पर नए पल्लव बिछा देती है, जब फूलों के मुखों पर ओस अपने आंसू टपकाती है. और जब बुलबुल के हृदय में प्रेम की आग धधक उठती है; ऐ हृदयों के प्यारे, उससमय मुझे तेरी स्मृति क्यों नूतन बन बन आती है ?

जब नीले-नीले अंबर पर घनघोर घटा छा जाती है,
औ' सावन की मख़मूर[1] हवा जब रिंदों[2] को बहकाती है,
ख़ामोश अंधेरी रातों में, जब बिजली दिल दहलाती है,
औ, काली-काली बदली जब नयनों से नीर बहाती है,
उस वक़्त मेरे प्रीतम मुझ पर मदहोशी-सी छा जाती है,
इक दर्द-सा दिल में उठता है और याद तुम्हारी आती है।

श्री फ़िदा पटियाली का गीत ('तब याद सताती है तेरी') ऐसे ही भावों से ओतप्रोत है।

प्रकृति के गीत

एक व दो गीत उर्दू काव्य की इस नई धारा में अवश्य मिल जाएंगे साथ ही वन, 'वीरानों' पहाड़ों और नदियों पर भी सुन्दर गीत हैं। प्रकृति की सुषमा ने गज़ल और नज़्म लिखने वालों ही को नहीं मोहा गीतकारो को भी मोहा है मक़बूल हुसेन अहमदपुरी ने सर्दी को लेकर एक गीत लिखा। इसमें उन्होंने सर्दी के साथ ही एक देहाती कुटुंब का का जो वर्णन किया है वह सुंदर तो है ही पर साथ ही यथार्थ भी कितना है, इस का पाठक स्वयं अनुमान कर सकेंगे। लिखते हैं:—

आया है जाड़े का मौसम, सन सन चले पिछवाई।
शाम हुई सूरज है पीला, धूप में हलकी ज़र्दी छाई।
गिरे क़बूतर, कौवे लौटे, काँव काँव कर धूम मचाई।
आया है जाड़े का मौसम, सन सन चले हवा पिछवाई॥
मातादीन, बिहारी, बीरा, हैं ये तीनों भाई-भाई।
नंबरदार के खेत में मिलके, करते हैं तीनों नरवाई।
आया है जाड़े का मौसम, सन सन चले हवा पिछवाई॥

---

[1] मस्त। [2] मतवालों।

घास का गट्ठा सिर पर रक्खे, नदी पार से तीनों भाई।
आये और बहन ने जल्दी, कड़वा[1] डाल चिलम सुलगाई।
आया है जाड़े का मौसम, सन सन चले हवा पिछवाई॥
आग ताप के बैठे तीनों, जब तन में कुछ गर्मी आई।
ढोल उठा कर बिरहे छेड़े, कवित पढ़े, गाई चौपाई।
आया है जाड़े का मौसम, सन सन चले हवा पिछवाई॥

और फिर सर्दियों की रात का वर्णन करते हुए लिखते हैं:—

पंख पखेरू कोई न डोले, सायँ सायँ दे कान सुनाई।
हवा बजाए सीटी बन में, काली रात अँधेरी छाई।

खाते-पीते कुनबे का ज़िक्र करने के बाद फ़ाक़ामस्तों की बाबत लिखते हैं।

ऐसी रात में ऐ परमेश्वर रास आई कब कड़ी कमाई।
मेहनत करने वाले ने जब, पूरे पेट न रोटी खाई।

भारत के सुप्रसिद्ध उर्दू कवि मौलाना 'सीमाब अकबराबादी के सुपुत्र श्री एजाज़ सिद्दीक़ी ने तुहिन-कण और तारों पर सुन्दर गीत लिखा है—

ऐ सुन्दर ऐ अचपल तारो, ऐ रब के ज्ञानी सय्यारो[2]।
साँझ भई और लगे चमकने, काले बदरा बीच दमकने।
जग को सीधी बात बताते, ईश्वर का उपदेश सुनाते।
दूर भई जग की अँधियारी, सोवन लागी दुनिया सारी।
ओस पड़ी मोती बरसाए, फूल औ' पात के मुँह धुलवाए,
दूब पै अपना रंग जमाया, सब्ज़े को पुखराज बनाया,
भर दी ओस से डाली-डाली, सगरी रात करी रखवाली,
भोर भई तो माँद पड़े तुम! पापी जग से रूठ गए तुम!

अखतर-उल ईमान का एक गीत देखिए:—

---

[1] तमाखू। [2] घूमने वाला सितारा।

सूरज निकला रैन भँवर से
किरणे उठीं लजाती !
जाग उठी वह नींद की माती,
नयन कँवल से रस टपकाती,
गूँज गूँज लगे भँवरे आने
बेबस कलियों को बहकाने !
सूरज निकला रैन भँवर से,
किरणें उठी लजती !
सूरज निकला रैन भँवर से ,
किरणे उठी लजाती !
छप छप करती छन छन करती,
कली कली से अनबन करती,
रससागर में नहाती आई !
सुबह नाचती गाती !
सूरज निकला रैन भँवर से
किरणे उठीं लजाती !

(क) वसंत के गीत

चलने लगा बिल्लूर का साग़र किनारे जू,
पत्थर में जान फूँक दी बादे-बहार ने।[1]

(कैस जालंधरी)

---

[1] बिल्लूर (शीशे) का प्याला नदी के किनारे चलने लगा है—अर्थात् वसंत के समीरण से मतवाले होकर मयख्वार नदी के किनारे जाकर मदिरा-पान कर रहे हैं, और मदिरा का पात्र इस हाथ से उस हाथ में चल रहा है। कवि कहता है कि वसंत की बयार में वह जादू है कि पत्थर अर्थात् जड़ पदार्थों में भी इस ने जान फूँक दी है।

उस वसंत ऋतु को आते देख कर, जिसके आगमन पर पत्थरों तक में भी जान आ जाती है, उर्दू का एक कवि अपने ग़म को भूल जाना चाहता है और निश्चिंत हो कर कहता है:—

छलकता हुआ कैफ़[1] का जाम ले कर,
नसीमे बहारी[2] का पैग़ाम ले कर,
वसंत आ रहा है, बसंत आ रहा है!
जलाएगा अब क्या भला सोज़[3] हम को,
भुलाएँगे रंजो मुहन[4] और ग़म को,
वसन्त आ रहा है, वसन्त आ रहा है!

अपने गीत 'पुरानी बसंत' में अब्दुल असर 'हफ़ीज़' भी इस विभ से प्रेरित होकर कहते हैं—

उम्र घट गई तो क्या, डोर कट गई तो क्या?
यह हवाए तुंदो-तेज़, रुख़ पलट गई तो क्या?
आ गई बसन्त रुत
और इक पतङ्ग दे!
रङ्ग दे, रङ्ग दे कदीम रंग!

और पंडित इंद्रजीत शर्मा, जिन्होंने उर्दू में अपनी पुस्तक 'नैरंगेफ़ितरत' लिखने के बाद इस रंग को भी अपने गीतों से काफ़ी समृद्ध बनाया है 'वसंत' शीर्षक गीत में लिखते हैं—

आओ सखी री चलें कुंज में छाई है हरियाली,
फूलों की भरमार है ऐसी लदी है डाली-डाली,

---

[1]मस्ती। [2]वसंत का समीरण। [3]दर्द। [4]दुख।

गेंदा और गुलाब खड़े हैं लिए हाथ में प्याली,
आँख खोल कर ताक-झाँक में नरगिस है मतवाली !

इसी उल्लास के रंग में एक और भी गीत है। लिखने वाले प.. 'वनवासी' हैं :—

सजनी , आओ बसंत मनायें !
प्रीत के ही वे रङ्ग रँगाएं !
सुन्दर निर्मल, हो फुलवार !
और जहाँ हो,
फूलों की महकार !
भवरों की गुँजार !
ऐसे में फिर खुशी मनाएं !
सजनी, आओ बसन्त रँगाए !

परंतु दुनिया में सुख ही सुख हो, यह बात तो नहीं। सुख की आड़ में दुख और हर्ष के दामन में विषाद है। बसंत में सभी उल्लास और हर्ष से विभोर हो उठते हों, इस दुखी संसार में यह कहां ! 'ग़ालिब' ही कहते हैं :—

उग रहा है दरो दीवार से सब्ज़ा ग़ालिब।
हम बयाबां में हैं और घर में बहार आई है ॥

अब्दुल असर 'हफ़ीज़' भी जहां सरसों के फूलने का, सखियों के झूलने का, तरुणों के गीत गाने का, मनचलों के पंतग उड़ाने का ज़िक्र करते हैं, वहां उस युवती को भी नहीं भूलते, जिस ने बसंत के आने पर फूलों के पीले गहने तो पहन लिए हैं, परंतु प्रियतम परदेश में हैं इस लिए—

है नगर उदास
नहीं पी के पास
ग़मो रंजो यास[1]
दिल को पड़े हैं सहने !

उसी विरहिन के हार्दिक मर्म को पंजाब के तरुण कवि, जनाबे 'फ़ैस एक सरल गीत में व्यक्त करते हैं—

फूली फुलवारी-फुलवारी;
फूल-फूल फूले लहराए;
झूम-झूम कर भँवरा गाए;
महकी क्यारी-क्यारी !

फूली फुलवारी-फुलवारी !
सखियाँ झूलें और झुलाएं,
रल-मिल कर सब मंगल गाएं,
मैं पापिन दुखियारी !

फूली फुलवारी-फुलवारी !

× × ×

सजनी, लिख भेजो कोई पाती !
आई बसंत पिया नहीं आये,
किस विध चैन दुखी मन पाये !
आग बिरह की जिया जलाये,

---

[1] निराशा

बात कही नहीं जाती !
सजनी, लिख भेजो कोई पाती !

और ताना देते हुए लिखो, कि—

वा रसिया भूले बिरहन को,
खो बैठी मैं जीवन-धन को,
चैन नहीं है पापी मन को,
नाम जपूं दिन-राती !
सजनी, लिख भेजो कोई पाती !

लिखो कि—

घर को आओ भिखारन के धन !
सदके[1] तुम पर जीवन यौवन,
लौट आओ परदेसी साजन,
फ़ितरत[2] है मदमाती !
सजनी, लिख भेजो कोई पाती !

और फिर बसंत के दिन मालिन को सरसों के फूल लाते देख कर विरहिन दुखित हो जाती है, और चिढ़ कर उस से कहती है—

ऐ मालिन इन फूलों को तू, जा ले जा मेरे सामने से;
यह लहू रुलाती है मुझ को, सूरत मतवाली सरसों की।
यह ज़र्दी इन की लाली है, पीलापन है गहना इन का;
मैं जन्म-जली दुख की मारी, लूं छीन न लाली सरसों की।
जब आए बसंत मेरे मन का, तो लाख बसंत मनाऊं मैं;
सरसों के हार पिरोऊं मैं, और गीत बसंत के गाऊं मैं।

---

[1] निछावर। [2] प्रकृति

होली के गीत

होली और वसंत का चोली-दामन का-सा साथ है। एक की याद आते ही दूसरे का चित्र आँखों के सम्मुख खिंच जाता है। उन दिनों की स्मृति भी जागृत हो उठती है जब वसंतोत्सव मनाये जाते थे, और होल खेली जाती थी ; जब भारत ख़ुशहाल था, संपन्न था और देश का कोना-कोना ब्रज बन जाता था, नाचता, गाता और फाग मनाता था। फिर यह कैसे संभव था कि भगवान् कृष्ण और वसंत के गीत तो गाये जाते पर होली को विस्मृति के गर्त में फेंक दिया जाता ?

इस रंग में होली के गीत भी गाये गये हैं, और ख़ूब गाये गये हैं परंतु उन में उल्लास नहीं है, हर्ष नहीं है। जब ब्रज वह ब्रज नहीं रहा तो होली फिर वह होली कहां रहती ! आजकल जो होली खेली जाती है वह होली कहां है, होली का स्वाँग मात्र है। 'वक़ार' साहब ने इसी वर्तमान दशा का चित्र खींचा है। एक दुखिया अपनी सखी से कहती है:—

होली खेलें किस के सँग आली !

ब्रज में अब वह बात नहीं है, काहन वाली घात नहीं है।
जीवन का वह रंग नहीं है, प्रेम का पहला संग नहीं है।।
नगर-नगर से प्रीत उठी है, डगर-डगर से रीत उठी है।
खेल कहां ! इस खेल में चूके, सखियां भूकीं बालक भूके।।
कौन के रँग में चोली रँगाऊं, कौन से मुँह से फाग सुनाऊं !
बस में नहीं है मन साजन का, राग रंग रूप है मन का।।
मुरली चुप, टूटा मृदंग आली !
होली खेलें किस के संग आली !

और फिर मज़दूर की होली में भावों की तीव्रता देखिए :—

कष्ट उठाए औ' दुख झेले,
मैं ने काने पापड़ बेले,
मेरे रक्त से होली खेले,

सरमाया[1] चालाक।

नङ्गा रह कर सर्दी काटी,
भूका रह कर ख़ाक भी चाटी,
नीचे माटी ऊपर माटी

मेरी होली ख़ाक!

और अपनी दीन दशा से दुखी होकर अछूत पुकार उठता है :—

होली आई कैसे खेलूं ?

मेरा रङ्ग है फीका-फीका,
कंबख़्ती बदहाली-सी का,
हाल बुरा है मेरे जी का,

होली आई कैसे खेलूं ?

हिंदू कुछ बेरङ्ग हैं मुझ से,
आमादाये-जङ्ग[2] हैं मुझ से,
मेरा भी दिल तङ्ग है मुझ से,

होली आई कैसे खेलूं ?

लेकिन फिर भी होली के दिन रंग उड़ाया जाता है। स्वाँग ही सह पर त्योहार निभाया जाता है। सखी उदास है, वह होली न खेले, अछूत और श्रमी दुखी हैं, वे होली न खेलें, और कवि भी इन दुखियों के दुख से

[1] पूंजीवादी। [2] लड़ने को तैयार।

दुखी हो कर होली न खेलें, परंतु दूसरे तो खेलेंगे। उस सूरत में शायर का कर्तव्य केवल नसीहत करना रह जाता है, यदि होली खेलना ही है तो ऐसी होली खेल जिससे—

> बिछड़े हैं जो वह मिल जाएं,
> मन की कलियां फिर खिल जाएं,
> बैरी देखें औ' हिल जाएं,
> तेरे घर का मेल!
> ऐसी होली खेल!

लोरियां

हर देश में और देश की हर भाषा में लोरियां हैं। लिखने में यह बहुत कम आती हैं, पर हर देश, हर नगर और हर गाँव में स्त्रियां अपनी सीधी सरल ज़बान में लोरियां गाती हैं। कवि भी कभी-कभी लोरियां लिखते हैं और उन की लिखी हुई लोरियों में सरलता के साथ-साथ कविता भी होती है।

'यशोधरा' में श्री मैथिलीशरण जी गुप्त ने एक बहुत सुंदर लोरी लिखी है। लोरी का यह निम्नलिखित पद दु:खिनी यशोधरा के हृदय में प्रति-पल जलने वाली अग्नि का द्योतक है :—

> रहे मंद ही दीपक माला,
> तुझे कौन भय कष्ट कसाला?
> जाग रही है मेरी ज्वाला,
>
> सो मेरे आश्वासन सो!

उर्दू कविता के इस रंग में भी लोरियां लिखी गई हैं। पंडित सोहन लाल 'साहिर' बी० ए० ने भी एक लोरी लिखी है। लोरी देने वाली मां यहां भी यशोधरा जैसी परिस्थिति में है, और भाव इस में गुप्त जी की लोरी जैसे ही हैं। लड़के का पिता उस की मां को छोड़ गया है। मां बच्चे को सुलाती और अपने दुःख की कहानी कहती है। एक बंद देखिए--

सो जा मेरे राजदुलारे, सो जा मेरे आँख के तारे,
तेरी मां ने ग़म का गहना, बच्चे तेरी खातिर पहना!
मैं न रहूँगी तब तू रहना, जब वह आएं तब यह कहना—
रो-रो के अम्मा बेचारी, तक-तक कर थक-थक कर हारी,
गिन-गिन कर रातों के तारे! सो जा मेरे राजदुलारे!

एक मुसलमान मां की लोरी है—

सो जा मेरे प्यारे, सो जा!
मेरे राजदुलारे, सो जा!

नींद की परियो आओ आओ, मीठी मीठी लोरियां गाओ;
मेरी जान है नन्हा प्यारा, मेरा मान है नन्हा प्यारा,
ज्यों-ज्यों तू परवान[1] चढ़ेगा, जग में मेरा नाम बढ़ेगा,

सो जा मेरे प्यारे सो जा!
मेरे राजदुलारे सो जा!

हिम्मत अज़मत[2] चाकर तेरी, हशमत[3] शौकत चाकर तेरी,
तख्त भी तेरा ताज भी तेरा, बख्त भी तेरा बाज[4] भी तेरा,
कैसे-कैसे काम करेगा, पैदा जग में नाम करेगा,

[1]जवान होगा। [2]प्रतिष्ठा। [3]शान-शौकत। [4]कर जो छोटे राजा बड़े राजाओं को देते हैं।

सो जा मेरे प्यारे सो जा!
मेरे राजदुलारे सो जा!

धूम से तेरा ब्याह रचाऊं, गोरी चिट्टी बेगम लाऊं,
घर औ' दौलत तुझ पर वारूं, राज को तेरे सदक़े[1] वारूं,
गोद खिलाऊँ तेरे बच्चे, सो जा सो जा मेरे बच्चे,

सो जा मेरे प्यारे सो जा!
मेरे राजदुलारे सो जा!

एक दूसरी लोरी सुनिए। देहात की मुसलमान माँ लोरी दे रही है—

नमगादड़ ने धूम मचाई, धुमसा छाया राम दोहाई।
आई रात अँधेरी छाई, हरयाली[2] ने लोरी गाई,

अगला झूले बगला झूले,
सावन मास करेला फूले[3]।

प्यारी नींद का प्यारा आना, भारी पलकों से पहचाना,
लो हम गाएं प्रेम का गाना, अल्लाह आमीं[4], तुम सो जाना—

अगला झूले बगला झूले,
सावन मास करेला फूले।

हामिद, सरवर, नैयर सोया, मोहन अपने घर पर सोया।
जो था बाहर भीतर सोया, सोजा, सोजा, सब घर सोया!

अगला झूले, बगला झूले,
सावन मास करेला फूले।

---

[1] निछावर। [2] लोरी देने वाली का नाम। [3] एक देहाती लोरी का पहला बंद जिस का लोरी से कोई संबंध नहीं होता। [4] आमीन का संक्षिप्त रूप।

बच्चे को नींद से जगाने के लिए भी लोरियां गाई जाती हैं। पंजाब की मां अपने 'कान्ह' को जगाने के लिए पल भर में यशोदा बन जाती है और बच्चे को प्यार से जगाती हुई कहती है :—

बासी रोटी तजरा मक्खन, नाल देनियां दही,
जागिये गोपाललाल, जागदा क्यों नहीं[1] ?

गीतों के इस रंग में भी बच्चे को जगाते समय गाई जाने वाली लोरी के दो बंद देता हूं :—

जागो मेरे प्यारे जागो !

दिल में बसने वाले जागो, मनमोहन मतवाले जागो।
घर भर के उजियाले जागो, गुल्शने-दिल के लाले जागो।

मादकता के प्याले जागो,
जागो मेरे प्यारे जागो !

तुतली बोली बोल सुनाओ, उट्ठो, दौड़ो, गोद में आओ,
लस्सी पीओ माखन खाओ, गुड़िया लेकर उठ [illegible]

घर भर में इक रास रचाओ,
जागो मेरे प्यारे जागो !

प्रगतिवादी गीत

उर्दू हो चाहे हिंदी, कविता में (कविता क्या समूचे साहित्य में) पिछले कुछ वर्षों से नये युग का आविर्भाव हुआ है। साधारणतः इस युग को प्रगतिवादी युग कहा जाता है। या तो यदि हम प्राचीन काल)

---

[1]बासी रोटी और ताज़ा मक्खन तेरे लिए तैयार है, मैं तुझे [illegible] भी दे रही हूं, ऐ मेरे गोपाल जाग ! तू जागता क्यों नहीं ?

से अब तक की कविता का अध्ययन करें तो पायेंगे कि प्रत्येक नया युग जो पिछले युग का स्थान लेता है, अपनी गति में प्रगति ही लेकर आता है। परन्तु इस पर भी किसी युग को यह नाम नहीं दिया गया।

इस युग में हिंदी कविता की भाँति उर्दू कविता ने भी नये दृष्टि-कोण अपनाये हैं। संक्षेप में इस युग की कविता निम्नलिखित गुणों को अपने में समाए हुए है:—

(१) आदर्श के बदले यथार्थ की अभिव्यक्ति।

(२) यथार्थ में सामाजिक यथार्थ (Social-Realty) का समावेश

(३) वर्ग-गत संघर्ष का व्यक्तीकरण।

(४) किसान मज़दूर, निचले मध्यवर्ग तथा उच्च वर्ग की दशा का चित्रण—आर्थिक विषमता के दृष्टिकोण से।

(५) किसान मज़दूर वर्ग को अपनी सत्ता समझने में सहायता देना और राजनीतिक आंदोलनों का साथ देना।

वास्तव में इन छहों को मार्क्सवाद अथवा प्रगतिवाद का नाम दिया जा सकता है। वर्तमान कवियों अथवा उन पुराने कवियों में जो वर्तमान धारा का साथ दे रहे हैं, सभी ने मार्क्स तथा लेनिन को पढ़ा हो, ऐसी बात नहीं। पिछले चन्द वर्षों से समस्त संसार में जो वर्ग गत संघर्ष चल रहा है; साम्राज्य और साम्यवादी शक्तियों में जो जंग हो रही है, उसका प्रभाव अनायास ही यहां के जनसाधारण पर पड़ा है और ज्ञात अथवा अज्ञात रूप से उसका प्रतिबिंब कविता में आ गया है और वह अधिक सोद्देश्य हो गई है। फल यह है कि इस युग की रूमान कविता भी आदर्श संसार के बदले इसी दुनिया में रहती है और समाज के अमृत के साथ यथार्थ के हलाहल का भी चित्रण करती है।

उर्दू में इस युग का आरंभ फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ ने "मुझ से पहली सी मुहब्बत मेरी महबूब न मांग" और "चन्द रोज़ और मेरी जान फ़क़त चन्द ही रोज़" ऐसी कविताओं को लिख कर किया। "मौज़ूए सखुन" नामक कविता में उन्हों ने लिखा है:—

और भी दुख हैं ज़माने में मुहब्बत के सिवा !
लज्ज़तें और भी हैं वसल की लज्ज़त के सिवा !

प्रेयसि के अनुपम सौन्दर्य का नज्ज़ारा करते करते कवि की आंखें सहसा जीवन की यथार्थताओं पर चली जाती हैं और वह कह उठता है :—

अनगिनत सदियों के तारीक बहीमाना तलिस्म !
रेशमो-अतलसो-कमख्वाब में बुनवाये हुए !
जा-बजा बिकते हुए कूचा-ओ-बाज़ार में जिस्म !
ख़ाक में लिथड़े हुए ख़ून में नहलाए हुए

जिस्म निकले हुए इमराज़ के तन्नूरों से,
पीप बहती हुई गलते हुए नासूरों से,
छोड़ जाती है उधर को भी नज़र क्या कीजै,
अब भी दिलकश है तेरा हुस्न, मगर क्या कीजे,
मुझ से पहली सी महब्बत मेरी महबूब न मांग !

साहिर लुध्यानवी की एक कविता 'ताजमहल' देखिए :—

ताज मेरे लिए इक मज़हरे उलफ़त ही सही !
तुझको इस वादिये रंगी से अक़ीदत ही सही !
मेरी महबूब कहीं और मिलाकर मुझको !

बज़्में शाही में ग़रीबों का गुज़र क्या मानी !
उस में उलफ़त भरी रूहों का सफ़र क्या मानी !

मेरी महबूब पसे पर्दा-ए-तशहीरे वफ़ा,
तूने सितवत के निशानों को तो देखा होता !
मुर्दा शाहों के मक़ाबर से बहलने वाली,
अपने तारीक मकानों को तो देखा होता !

अनगिनत लोगों ने दुनिया में महब्बत की है,
कौन कहता है कि सादिक न थे जज़्बे उनके,
लेकिन उनके लिये तशहीर का सामान नहीं !
क्योंकि वे लोग भी अपनी ही तरह मुफ़लिस थे !

ये इमारातो-मक़ाबर, ये फ़सीलें ये हिसार,
मुतलक़ुल हुक्म शहनशाहों की अज़मत के सुतूं !
सीनाए दहर के नासूर हैं कुहना नासूर,
जज़्ब है इनमें तेरे औ' मेरे अजदाद का ख़ूं !

मेरी महबूब उन्हें भी तो महब्बत होगी !
जिनकी सन्नाई ने बख़्शी है इसे शक्ले जमील !
उनके प्यारों के मक़ाबर रहे बेनामो नमूद !
आज तक उन पै जलाई न किसी ने क़िन्दील !

यह चमनज़ार, यह जमना का किनारा, यह महल,
ये मन्नक़श दरोदीवार, यह महराब ये ताक़ !
इक शहनशाह ने दौलत का सहारा लेकर,
हम ग़रीबों की महब्बत का उड़ाया है मज़ाक़ !
मेरी महबूब कहीं और मिला कर मुझको !

यह वर्ग-संघर्ष गीतों में और भी तीव्र होकर प्रस्फुटित हुआ है। अब्दुल मजीद भट्टी का गीत "अन्याये" देखिए:—

राजकुमारी झूला झूले, दासी उसे झुलाये,
मूरख जाने फल कर्मों का, मै जानूँ अन्याये,
मुझ से न देखा जाए!

माँगे भीख न पाये कोई, कोई ऐश मनाये,
मूरख जाने लेख की रेखा, मैं जानूँ अन्याये,
मुझ से न देखा जाए!

गद्दी पर धनवान बिराजे, कंगला कष्ट उठाये,
मूर्ख जाने अक़्ल की लीला, मैं जानूँ अन्याये!
मुझ से न देखा जाए

दाता तू है सब का दाता,
औ' मुनसिफ़ कहलाये,
इस पर यह शैतानी चाला, तुझ से देखा जाए,
मुझ से न देखा जाए!

सैय्यद मुतलबी फ़रीदाबादी का गीत "हैइया" "हैइया" देखिए। राजभवन बन रहा है और मजदूर छत के लिए लोहे का गरडर चढ़ा रहे हैं। ज़ोर लगा रहे हैं और "हैइया" "हैइया" कहते हुए गा रहे हैं:—

गाटर लेना कैसे भाई ऐसे भाई हैइया हैइया!
बोझ उठालो बोझ उठाया महल सरा का हां हां भाई!
महल सरा का हां हां भाई बोझ उठा लो बोझ उठाया!
ऊँचा करलो हैइया हैईया बोझ उठा लो हैइया हैइया!

बोझ उठाया हैइया हैइया

हाथ बचा के हां हां भाई पैर बचा के हां हां भाई !
बोझ उठा लो बोझ उठाया ऊँचा करलो हैइया हैइया !
शेर बहादुर हैइया हैइया ऊँचा करलो महल सरा को !
बोझ उठा लो बोझ उठया कैसे भाई हैइया हैइया !
शेर बहादुर हैइया हैइया आगे सरके हैइया हैइया !

शेर बहादुर हैइया हैइया !
हां हां भाई हैइया हैइया !

पेट पलेगा म्हारा तिहारा महल बनेगा राजा जी का !
पेट पलेगा म्हारा तिहारा बाग बनेगा राजा जी का !
फूल खिलेंगे हां हां भाई जश्न उड़ेगें हां हां भाई !
पेट पलेगा म्हारा तिहारा चार महीने म्हारा तिहारा !
पेट पलेगा म्हारा तिहारा म्हारा तिहारा म्हारा तिहरा !
हां हां भाई म्हारा तिहारा शेर बहादुर हैइया हैइया !

कैसे भाई हैइया हैइया
पेट पलेगा हैइया हैइया

गीत लम्बा और अटपटा है क्योंकि छत ऊँचा है और मज़दूर पढ़े-लिखे नहीं, परन्तु इसी अटपटे गीत में उनकी जागती हुई आत्मा का प्रतिबिम्ब साफ़ झलक जाता है।

देश के विभाजन के साथ ही जो साम्प्रदायिक हत्याकांड हुआ है वह भी उर्दू के गीत-लेखकों की दृष्टि में रहा है और जिस प्रकार कथा-लेखक ने उसे हर दृष्टिकोण से देखा इसी प्रकार उर्दू कवियों ने भी उस पर बीसियों दर्द दुख, ग़म व ग़ुस्से से भरी कविताएं और गीत लिखे हैं। मैं यहाँ एक ऐसा गीत देता हूँ जिसमें दंगे की ज़द में आई हुई

एक लड़की आखिर वेश्या बनने पर विवश हो गई है। तभी आज़ादी मिले एक वर्ष गुज़र जाता है और' जश्नेआज़ादी' (स्वतंत्रता-दिवस) मनाया जाता है। तब वेश्या फूट पड़ती है। अब्दुल मजीद भट्टी के शब्दों में उसकी कटु व्यंगपूर्ण कहानी सुनिए :—

मैं कब कैसे उठवाई गई,
मैं किस किस घर में बिठाई गई,
क्या क्या नहीं मेरे दाम उठे,
कब आए हुए नाकाम उठे,

लेकिन अब इसका ज़िक्र नहीं!
अब कल की मुझे कुछ फ़िक्र नहीं!

किस किस का सोग मनाती मैं,
हां किस किसका ग़म खाती मैं,
जो बीत गई सो बीत गई,
मैं जीवन बाज़ी जीत गई,

अब कोई दुख और रोग नहीं!
मां बाप का ग़म और सोग नहीं!

जब लपकी हुई किरपानें थीं,
औ' ढाल ये बाहें रानें थीं,
जब ज़द पर जान जवानी थीं,
इक पल में ख़त्म कहानी थीं,

मैं क्या कहती औ' क्या करती!
मैं किसकी आन पे कट मरती!

जीना था मुझे मैं जीती हूँ,
जी भर के खिलाती पीती हूं,
मैं जीने के गुर जान गई,
सब सुर सरगम पहचान गई,

अब नाचती हूं मैं गाती हूं!
नयनों के तीर चलाती हूं!

आज़ादी का दिन आता है,
मेरा भी जी लहराता है,
जब तुम यह जश्न मनाओगे,
क्या मुझको भी बुलवाओगे,

मैं शौक से नाचूं गाऊंगी!
मैं सब का जी बहलाऊँगी!

हां हां तुम क्यों घबराते हो,
किस बात से तुम शरमाते हो,
मैं अब तो किसी की बेटी नहीं,
और मेरी कोई हेटी नहीं,

औरत की कुछ भी हस्ती है
आज़ादी कितनी सस्ती है!

बलराज 'कोमल' का गीत इसी हत्याकांड की एक दूसरी भटकी हुई आत्मा की पुकार चित्रित करता है जिसका दर्द अनायास ही हृदय को छू लेता है। एक कमसिन लड़की विभाजन के बाद नये देश में आगई है। उसका समस्त कुटम्ब साम्प्रदायिकता की भेंट हो गया है।

इस नये देश में यह दयावान दिखाई देने वाले एक अपरिचित का रास्ता रोकती है, और बेबसी के करुण स्वर में कहती है :—

अजनबी अपने कदमों को रोको ज़रा !
जानती हूँ, तुम्हारे लिये गैर हूँ.
फिर भी ठहरो ज़रा,
सुनते जाओ यह आंसू भरी दास्ताँ !
साथ लेते चलो !

आज दुनिया में मेरा कोई नहीं !
मेरी अम्मी नहीं,
मेरे अब्बा नहीं,
मेरी आया नहीं,

मेरा नन्हा सा मासूम भैया नहीं !
मेरी इसमत[1] की मग़रूर[2] किरणें नहीं !
वह घरौंदा नहीं जिसकी छाया तले,
लोरियों के तरन्नुम को सुनती रही !
फूल चुनती रही,
गीत गाती रही, मुस्कराती रही !
आज कुछ भी नहीं !
आज कुछ भी नहीं !

अजनबी अपने क़दमों को रोको ज़रा,
जानती हूं तुम्हारे लिये ग़ैर हूं !
फिर भी ठहरो ज़रा !
सुनते जाओ यह आंसू भरी दास्ताँ !

[1]स्त्रीत्व । [2]गर्वीली ।

साथ लेते चलो,
मेरी अम्मी बनो,
मेरे अब्बा बनो,
मेरी आया बनो,
मेरा नन्हा सा मासूम भय्या बनो !
मेरा कुछ तो बनो,
आज दुनिया में मेरा कोई भी नहीं !
अजनबी अपने क़दमों को रोको ज़रा !

मज़ाक़ और व्यंग्य के गीत

मैं ने गीतों के विभिन्न रूप केवल यह दर्शाने के लिए दिए हैं कि उर्दू काव्य के इस रंग ने भी व्यापक सूरत प्राप्त की है। इस युग में काव्य के हर पहलू पर गीत लिखे गए हैं। इन में व्यथा है, विरह है, प्रेम है, अग्नि है, प्रकृति-सौंदर्य है, रहस्यवाद तथा प्रगतिवाद है। एक चीज़ है जिस के संबंध में मैं अभी तक कुछ नहीं कह पाया, और वह है हास्यरस। परंतु यदि इस युग की कविताओं की छानबीन की जाए तो आप को हास्यरस की कविताएं भी मिलेंगी। यह बात और है कि कहीं हम ज़ोर से हँस दें, कहीं मुसकरा कर रह जाएं और कहीं हमारी हँसी दिल की चहारदीवारी तक ही परिमित रह जाय। 'वक़ार' साहिब के 'मेरे फूट गए हैं भाग' नामक गीत ही को लीजिए। देखिए पंजाब के अनपढ़ कुटुंब के द्वंद्वमय गृह-जीवन के चित्र के साथ ही गीत में व्यंग्य की कितनी अधिक पुट है। सास बहू की नालायक़ियों का रोना रोती है, उसे गालियां देती है और साथ ही वावेला भी किए जाती है:—

चरखे तार न चूल्हे आग, मेरे फूट गए हैं भाग!

बहू अभागिन जब से आई,
रहती है हर रोज़ लड़ाई,
पीने खाने में चतुराई,

काम को कहती है खटराग! मेरे फूट गए हैं भाग!

इधर-उधर की बातें कर ले,
स्वाँग हज़ारों दिन में भर ले,
नाम जो चाहो, लाखों धर ले,

मुँहफट, बोले जैसे काग! मेरे फूट गए हैं भाग।

चटक-मटक में सब से न्यारी,
गुन जो देखो औगुनहारी,
कुल-खोनी यह चंचल नारी,

इस को डस ले काला नाग! मेरे फूट गए हैं भाग!

मि० 'मुज़फ़्फ़र' आहसानी ने शिक्षित बेकारों की दशा का कैसा व्यंग्यात्मक चित्र खींचा है! लिखते हैं:—

भूक लगी है भूक! मुज़फ़्फ़र, भूक लगी है भूक!

बी० ए० कर के बेकारी है,
जीने तक से लाचारी है,
नादारी सी नादारी है,

हूक उठती है हूक! मुज़फ़्फ़र, भूक लगी है भूक!

नादारी में प्रीत लगाई,
प्रीत लगा कर मुँह की खाई,
बिन पैसे का बाप न भाई,

चूक गया मैं चूक ! मुजफ़्फ़र भूक लगी है भूक !

'आज़र' जालंधरी ने लिखा है:—

पैसे के हैं दुनिया में तलबगार बहुत,
बन जाते हैं पैसे से यहाँ यार बहुत,
पैसा हो अगर पास तो फिर ऐ 'आज़र',
ग़मख्वार बहुत, मूनसो दिलदार बहुत।

इसी पैसे के विषय में पंडित इंद्रजीत शर्मा ने एक गीत लिखा है—

पैसा है सरताज जगत में, पैसा है सरताज !
पैसे ही की सरदारी है, पैसा है सरताज।
पैसा है तो मान है प्यारे, पैसा है तो लाज।
पैसा है सरताज जगत में, पैसा है सरताज।
जब तक पैसा रहे गांठ में, कोई न बिगड़े काज।
पैसा है तो सेठ कहावे, बिन पैसे मुहताज।
पैसा है सरताज जगत में, पैसा है सरताज !

'ईंट को पत्थर' शीर्षक कविता में 'आतिश' हरियानवी लिखते हैं—

भेड़ ने बरसों ऊन कटाई, क्यों खाएं पर तरस कसाई।
शेर की मूँछ से बाल जो तोड़े, किस ने इतनी हिम्मत पाई ?
क्यों करता है उस को 'जी, जी', जिसने तुझ पर ईंट उठाई ?
जिसने तुझ पर ईंट उठाई, उस को पत्थर मार।

अंतिम शब्द

अंत में दो एक बातें इन गीतों और पुस्तक में दिए गए संकलन के बारे में कहना चाहता हूँ।

पहली बात तो यह है कि शायद उच्च कोटि की हिंदी कविता का रसास्वादन करने वाले पाठकों को इनमें हिंदी गीतों की सी उड़ान तथा उन के गूढ़ भाव न दिखाई दें और वे इनको देख कर आधुनिक उर्दू कविता के संबंध में ग़लत राय क़ायम कर लें। उन पाठकों से मैं केवल इतना कहना चाहता हूँ कि इन ये गीतों को समालोचना की कसौटी पर कसते समय यह भूल नहीं जाना चाहिए कि गीत उर्दू के शायरों के लिखे हुए हैं जिन में से अकसर हिंदी लिपि तक से अपरिचित हैं, जिन के पास सुन्दर तथा जँचे-तुले हिंदी शब्दों का इतना आधिक्य नहीं जितना हिंदी कवियों के पास है, और जिन्हें शब्दों की उपयुक्तता का भी इतना ज्ञान नहीं। उनकी कठिनाइयों को हिंदी का वह कवि भली-भाँति समझ सकेगा जो उर्दू लिपि तक से अपरिचित हो और फिर भी उर्दू नज़्में तथा गज़लें अथवा उर्दू मसनवियां व रुबाइयां लिखने का प्रयास करे। फिर भी जैसा मैं ने पहले कहा था हिंदी और उर्दू के मिश्रण से पैदा होनेवाले इन गीतों में बहुत कुछ है—व्यथा-वेदना, आशा-निराशा, हर्ष-उल्लास, उमंग-तरंग, विषाद-अवसाद के साथ-साथ इन में हृदय है और उस की कसक तथा उस के कोमलतम उद्गार भी हैं। यदि सरलता और भावप्रवणता उत्तम काव्य की ख़ूबियां हैं, तो यह गीत अवश्य ही काव्य के उत्तम उदाहरण हैं, और साहित्य में इन का अपना स्थान रहेगा। और मैं यह कह दूँ कि जनसाधारण को क्लिष्ट और दुरूह शब्दों से पूर्ण गूढ़ भावों वाली कविताओं के मुक़ाबले में ये गीत अपने अधिक समीप जान पड़ेंगे और जनता इन्हें अधिक प्यार करेगी और अपनाएगी। उर्दू के युवक आलोचक श्री मुख़्तार सिद्दीक़ी के साथ मैं भी पाठकों से यह अनुरोध करूंगा कि गीतों में (विशेष कर पढ़े जाने के बदले गाए जाने वाले गीतों में) इतनी ताब नहीं होती कि वे उच्च काव्य की बारीक़ियों के बल पर पसन्द किए जा सकें। यदि पाठकों में कुछ संतोष

और गुनगुनाने की आदत है तो इन में से अधिकांश को अवश्य पसन्द करेंगें। ग़ज़लों का चोंचला और चुटीलापन भी पाठक को गीतों में न मिलेगा। गीत वास्तव में बेचैनी के क्षणों की वे हल्की और गहरी लगावटें हैं जो एक विशेष गेयता के द्वारा शब्दों में आ गई हैं। उन का रंग उस सूरत में दिल पर जम सकता है यदि दिल की धड़कनों से वे लगावटें आप से आप छेड़ करें। दूसरी बात मैं इन गीतों में प्रयुक्त हिंदी शब्दों तथा उनके उच्चारणों के बारे में कहना चाहता हूँ और वह, जैसा मैं पहले भी कह चुका हूँ, यह है कि इन गीतों में हिंदी शब्द कुछ तब्दीलियों के साथ प्रयोग किए गए हैं। इस के तीन कारण हैं। सब से बड़ा कारण इस परिवर्तन का यह है कि हिंदी के बहुत से शब्द उर्दू लिपि में शुद्ध लिखे ही नहीं जा सकते और चूँकि यह गीत उर्दू लिपि में लिखे गए हैं, उर्दू कवियों द्वारा लिखे गए हैं और उर्दू मासिक साप्ताहिक तथा दैनिक पत्रों में छपे हैं, इस लिए जैसे ये शब्द उर्दू लिपि में आ सकते थे वैसे ही कवियों ने इन का प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर 'शक्ति', 'शांति' आदि शब्दों को उर्दू में लिखते समय 'शक्ती' तथा 'शांती' ही लिखा जायगा और इस लिये महाकवि इक़बाल तथा दूसरे कवियों ने इन्हीं बदले हुए उच्चारणों से इन का प्रयोग किया है। जैसेः—

शक्ती भी शांती भी भक्तों के गीत में है।

दूसरा कारण इस तब्दीली का पंजाबी भाषा है। पंजाबी भाषा वास्तव में संस्कृत से ही निकली हुई है, परंतु शताब्दियों के हेर-फेर से इस में बहुत अंतर आ गया है। उर्दू के इन गीतों में प्रयुक्त होने वाले शब्दों में, बहुत से कवियों ने, वही उच्चारण हिंदी का उच्चारण समझ कर प्रयुक्त किया है। उदाहरण के तौर पर 'तत्व' को पंजाबी भाषा में

'सत' और 'सत्य' को 'सत' कहा जाता है। कवि इक़बाल ने पंजाबी होने के कारण इन संस्कृत शब्दों का वही उच्चारण लिया है जो पंजाब में प्रचलित है; उदाहरणतया:—

जान जाए हाथ से जाए न सत,
है यही इक बात हर मज़हब का तत।

मैंने इस संग्रह में जो गीत दिए हैं उन में आप को ऐसे हिंदी शब्द भी मिलेंगे जो पंजाबी भाषा में बदलने के बाद उर्दू में लिए गए हैं।

तीसरा कारण यह है कि आधुनिक उर्दू काव्य पर हिंदी का जो प्रभाव पड़ा है, वह हिंदी की आधुनिक कविताओं का ही नहीं वरन् ब्रजभाषा से लेकर खड़ी बोली तक में लिखी जानेवाली सब कविताओं का है। यह विषय अपने में ही काफ़ी लंबा है और मैं इसे भाषा-संबंधी छान-बीन करनेवालों के लिए छोड़कर संग्रह में दिए गए गीतों के संबंध में कुछ कहूँगा।

उर्दू काव्य के इस युग में इतने गीत लिखे गए हैं कि उन से कई संग्रह तैयार हो सकते हैं। इस छोटे से निबंध में सब गीत देना न तो ठीक है न संभव ही; इस लिए जहां तक मुझ से हो सका है मैं ने हर 'स्कूल' के कवियों के गीत देने का प्रयास किया है। फिर भी हो सकता है, कुछ रह गए हों। साथ ही संग्रह में मैं ने वे नज़्में व ग़ज़लें भी दे दी हैं जो हिंदी के बहुत समीप हैं। उद्देश्य मेरा केवल हिंदी-भाषियों को उर्दू के इस युग की कविताओं से परिचित कराना है और साथ ही मैं इस अभियोग का उत्तर देना चाहता हूँ जो पंजाब पर लगाया जाता है कि पंजाब हिंदी के लिए मरुभूमि है। इन गीतों में मैं ने कुछ कवियों को छोड़ कर अधिकतर गीत पंजाब के उर्दू कवियों के ही दिए हैं और उन में भी उर्दू के मुसलमान कवियों को अधिक स्थान दिया है। उर्दू कविता की

वर्तमान धारा को देख कर कौन कह सकता है कि पंजाब हिंदी के लिए मरुभूमि है, और यहां हिंदी से छुआछूत का बर्ताव किया जाता है?

इन गीतों का संग्रह करने में मुझे तीन वर्ष से अधिक लग गए और यथासंभव मैं ने इसे १९३८ तक अप-टू-डेट बनाने का प्रयास किया है, पर फिर भी हो सकता है कि कुछ सुंदर गीत मेरी दृष्टि से न गुज़रे हों इस के लिए मुझे अपनी मुसीबतों और परेशानियों से शिकायत है, जिन के कारण मैं कुछ अर्से के लिए पत्र-पत्रिकाओं का भली-भाँति अध्ययन नहीं कर सका। क़ानून के अध्ययन और आर्थिक कठिनाइयों के अतिरिक्त मेरी पत्नी की लंबी बीमारी और मृत्यु इस काम में बड़ी बाधा बनी रही। मेरी न्यूनताओं और त्रुटियों के अतिरिक्त इस बात का विचार करके कि उर्दू में इन गीतों की कोई छपी हुई पुस्तक नहीं, और संकलन के लिए मुझे अधिकतर पत्र-पत्रिकाओं का ही आश्रय लेना पड़ा है, पाठक यदि इस संग्रह में कोई ख़ामी पाएं तो मुझे क्षमा कर दें।

अंत में यह कृतघ्नता होगी, यदि मैं उन कवियों को धन्यवाद न दूं जिन्हों ने मुझे अपनी कविताएं इस संग्रह में छापने की आज्ञा देने की कृपा की है। इस काम में सहायता देने के लिए जिन पत्र-पत्रिकाओं के संपादकों ने मुझे सहायता दी उन का भी मैं बहुत आभारी हूँ।

उपेंद्रनाथ अश्क

१८४, अनारकली, लाहौर

हफ़ीज़ जालंधरी

महाकवि इक़बाल की भाँति हफ़ीज़ जालंधरी ने भी एकता, प्रेम और स्वतंत्रता के गीत गाए और इक़बाल की भाँति यह भी राजनीति के शिकार हो गए, परन्तु बाह्य जीवन में वे चाहे जिस राजनीतिक गुट के साथ रहे हों, व्यक्तिगत जीवन में वे सदैव अपने विचारों को अक्षुण्ण बनाए रहे। इस सब के बावजूद वे उर्दू के उन दो तीन युग प्रवर्तक कवियों में से हैं, जिन्हों ने उर्दू को क्लिष्टता की धारा से निकाल कर उसे सरल मार्ग पर लगाया। वे उर्दू में एक नया रंग लेकर आए और उनके रंग को जनसाधारण ने अपने दिलों में स्थान दिया। नये छंद, मादक संगीत, स्थानीय रंग और सरल भाषा—हफ़ीज़ के गीतों के यही गुण हैं जिन के कारण हफ़ीज़ अरब और फ़ारस के कवि न होकर भारत के कवि हैं।

जालंधर (पूर्वी पंजाब) के निवासी होने के कारण भारत का उन पर अधिकार भी है। यह और बात है कि पिछले साम्प्रदायिक हत्याकांड और विभागजनित कलुषित राजनीति के कारण वे जालंधरी कहलाते हुए भी जालंधरी नहीं रहे।

परमात्मा के हुज़ूर में

तूही सब का पालनहार !

तू ने यह संसार बनाया, इतना सारा खेल रचाया।
मोती हीरे सोना रूपा, तेरी दौलत तेरी माया।

दिन के रुख़[1] पर तेरा परतव[2], रात के सिर पर तेरा साया।
फूलों से धरती को ढाँपा, तारों से आकाश सजाया।
आग हवा मिट्टी औ' पानी, सब में जाँदारों[3] को पाया।
तू ही पालनहार है सब का, सब तेरे बालक हैं .खुदाया।

तू सब से रखता है प्यार!
तू ही सब का पालनहार!

हर इक ने यह बात है मानी, कोई नहीं है तेरा सानी[4]।
दुनिया फ़ानी[5] है तू बाक़ी[6], तू बाक़ी है दुनिया फ़ानी।
तेरे नाम से हो जाती है, पैदा मुश्किल में आसानी।
दान भी तेरा, देन भी तेरा, तू ही दाता तू ही दानी।
तेरे भरोसे पर जीते हैं, क्या ज्ञानी औ' क्या अज्ञानी।

क्या मुफ़लिस[7] औ' क्या ज़रदार[8]!
तू ही सब का पालनहार!

बसंत

(बसंती तराना से)

लो फिर बसंत आई, फूलों पै रंग लाई।

चलो बे-दरंग[9],
लबे आबे-गंग[10],
बजे जलतरंग,

मन पर उमंग छाई, फूलों पै रंग लाई!

---

[1]मुख। [2]प्रतिबिंब। [3]चेतन जिन में जान है। [4]तेरे जैसा दूसरा। [5]नश्वर। [6]अमर। [7]निर्धन। [8]धनी। [9]बे-रोकटोक, बे-खटके। [10]गंगा के पानी के किनारे।

लो फिर बसंत आई।

आफ़त[1] गई खिज़ां[2] की, क़िस्मत फिरी जहां की।

चले मैनुसार[3] ,
सुए लालाज़ार[4] ,
मये परदादार[5] ,

शीशे के दर से झाँकी, क़िस्मत फिरी जहां [illegible]।

आफ़त गई खिज़ां की।

फूली हुई है सरसों, भूली हुई है सरसों!

नहीं कुछ भी याद ,
यों ही बमुराद[6] ,
यों ही शाद-शाद,[7]

गोया रहेगी बरसों, भूली हुई है [illegible]।

फूली हुई है सरसों।

लड़कों की जंग देखो, डोर और पतंग देखो।

कोई मार खाय ,
कोई खिलखिलाय ,
कोई मुस्कराय ,

तिफ़ली[8] के रंग देखो, डोर और पतंग देखो।

लड़कों की जंग देखो।

---

[1]आपत्ति, मुसीबत। [2]पतझड़। [3]मय (मदिरा) [illegible]। [4]बाग़ की ओर। [5]शीशे के परदे में छुपी हुई मदिरा। [6] [illegible] [7] [illegible]लासि [illegible] [8]बचपन।

है इश्क़[१] भी जुनूं[२] भी, मस्ती भी जोशे-ख़ूं[३] भी!
कहीं दिल में दर्द,
कहीं आह सर्द,
कहीं रंग ज़र्द,
है यूं भी और यूं भी! मस्ती भी जोशे-ख़ूं भी,
है इश्क़ और जनूं भी!
इक नाज़नीं[४] ने पहने, फूलों के ज़र्द गहने।
है मगर उदास,
नहीं पी के पास,
ग़मो रंजो-यास,
दिल को पड़े हैं सहने, इक नाज़नीं ने पहने
फूलों के ज़र्द गहने[५]।

रखवाला लड़का

('तारों भरी रात' से)

रखवाला लड़का, खेतों का दूल्हा, बंसी बजा कर, गाने का रसिया,
मेड़ों के ऊपर, फिरता है तन्हा[६], हाथों में बंसी, पैरों से नंगा,

---

१ प्रेम, अनुराग। २ उन्माद। ३ रक्त का जोश। ४ तरुणी। ५ हफ़ीज़ की बहार ईरान की बहार नहीं हिन्दुस्तान की बहार है, जिसे भारत में बसंत कहते हैं। हफ़ीज़ के यहां बसंत में सरसों फूलती है; खेतों और वाटिकाओं में हिंदुस्तानी बहार आती है; लड़के डोर और पतंग के लिए आपस में लड़ते हैं—कोई मार खाता है, कोई हंसता और कोई खिलखिलाता है। ख़ून में जोश आता है, प्रेम और उन्माद में मस्ती पैदा होती है। दूसरी ओर घर में एक सती, पतिव्रता तरुणी है, जिस ने उत्सव की ख़ातिर शकुन मनाने के लिए फूलों के पीले गहने तो पहन लिए है, परंतु चूंकि प्रियतम परदेस में हैं, इस लिए उदास है। यह है हफ़ीज़ का स्थानीय रंग जो उसे भारत का कवि बनाता है। ६ अकेला।

अलबेले पन में . असली फबन में ,
गोकुल के बन में , जैसे कन्हैया !
बंसी की लय में गुम हैं फिज़ाएं , फिरती हैं मदहोश[1] हर सू हवाएं !
जादू है क्या है ? या मोजज़ा[2] है !
कोहो-बयाबां,[3] खेत और मैदां, बाहोश[4] बेहोश, सब .खुद फ़रामोश !
क्यों ओ गलेबाज़[5] ! तेरा यह अंदाज़ ,
यह सोज़[6] यह साज़[7], तुझ को पता है।
जादू है क्या है ? या मोजज़ा है !

जाग सोज़े इश्क़ जाग

जाग सोज़े इश्क़[8] जाग , जाग सोज़े-इश्क़ जाग !
जाग काम देवता , फ़ितना-हाए नौ[9] जगा।
बुझ गया है दिल मेरा , फिर कोई लगन लगा।
सर्द हो गई है आग। जाग सोज़े-इश्क़ जाग !

पड़ गई दिलों में फूट , क्या बजोग[10] पड़ गया ?
पिरथ्वी पर चार कूँट। एक सोग पड़ गया ।
सर - निगूं है शेषनाग। जाग सोज़े-इश्क़ जाग !

तू ने आँख बन्द की , कायनात सो गई ।
हुस्ने .खुद-पसंद[11] की , दिन से रात हो गई।
ज़र्द पड़ गया सुहाग । जाग सोज़े इश्क़ जाग !

---

[1]मदमत्त । [2]अलौकिक । [3] पहाड़ और मरुस्थल । [4] होश वाले । [5] मादक कंठवाले । [6]दर्द [7] साज़ के अर्थ बोजे के होते है, रखवाले का साज़ उस की बंसरी ही है । [8] प्रेमकी जलन । [9] नए फ़ितने-फ़साद । [10] वियोग का पंजाबीउच्चारण । [11]आत्म-गर्व

तू जो चश्म वा करे[१], हर उमंग जाग उठे !
आहो-नाला[२] जाग उठे, राग रंग जाग उठे।
जोग से मिले विहाग। जाग सोज़े-इश्क़ जाग !

फिर उसी उठान से, तीर उठे कमां[३] उठे !
सब्र[४] की ज़बान से, शोरे-अलअमां उठे !
जाग उठे दिलों के भाग। जाग सोज़े-इश्क जाग !

जाग ऐ नज़र-फ़रोज़[५], जाग ऐ नज़र-नवाज़[६],
जाग ऐ ज़माना.सोज़[७], जाग ऐ ज़माना-साज़[८] !
जाग नींद को त्याग ! जाग सोज़े-इश्क जाग !

मन है पराये बस में

पूरब में जागा है सवेरा, दूर हुआ दुनिया का अँधेरा,
लेकिन घर तारीक[९] है मेरा।

पच्छम में जागी हैं घटाए, फिरती हैं सरमस्त हवाएं,
जाग उठो मैख़ाने[१०] वालो, पीने और पिलाने वालो,
ज़हर मिलाओ रस में !
मन है पराये बस में !

बाग़ में बुलबुल बोल रही है, नरगिस[११] आँखें खोल रही है,
शबनम[१२] मोती रोल रही है।

---

[१] आंख खोले। [२] निःश्वास और क्रन्दन। [३] कमान। [४] संतोष। [५] नयनों को अच्छे लगने वाले। [६] आंखों को ठंडक पहुंचाने वाले। [७] दुनिया को जलाने वाले। [८] जमाने को देखे हुए चालाक। [९] अँधेरा। [१०] मदिरालय। [११] पुष्प विशेष। [१२] ओस

आम पै कोकिल कूक उठीहै, सीने में इक हूक उठी है,
बन जाऊं न कहीं सौदाई[1] ! जानवरों की राम-दुहाई,

चुभती है नस-नस में।
मन है पराये बस में !

बीत गया दिन रात भी आई, तारों ने महफ़ल भी सजाई,
उस ने मगर सूरत न दिखाई।

वहम[2] कई टाले हैं मैं ने, तारे गिन डाले हैं मैं ने,
वादे का तो किस को यक़ीं[3] है, आँख में लेकिन नींद नहीं है,

नींद ने खाली क़समें।
मन है पराये बस में।

लोगो छोड़ो दुनियादारी, जान गया उलफ़त[4] मे तुम्हारी,
तह कर दो यह नसीहत[5] सारी।

मुझ को तुम से काम ही क्या है ? मेरा नंगो-नाम[6] ही क्या है ?
इस दुनिया की प्रीत यही है, रस्म यही है रीत यही है,

टूट गई सब रस्में !
मन है पराये बस में !

कौन बताये उलफ़त क्या है ? दिल क्या, दिल की हक़ीक़त[7] क्या है
मर मिटने में लज्ज़त[8] क्या है ?

बेदर्द इस को क्या पहचाने ? जिस पर बीती हो वह जाने !
देख ऐ ज्ञानी, दुनिया है फ़ानी[9] ! हाय मुहब्बत, हाय जवानी !

---

[1]पागल। [2]शंका [3]विश्वास। [4]प्रेम। [5]शिक्षा, उपदेश। [6]मान-प्रतिष्ठा। [7]वास्तविकता। [8]आनंद। [9]नश्वर।

आग लगी है खस में।
मन है पराये बस में।

दोस्तो उस का नाम न पूछो, कुछ भी नहीं है, काम न पूछो,
उस के सिवा पैग़ाम[१] न पूछो—

मेरा भी तुम नाम न लेना, मिल जाए तो यों कह देना—
इक दीवाना चुप रहता है, कहता है तो यह कहता है,
'मन है पराये बस में!
मन है पराये बस में!'

एक अभिलाषा

('पुरानी बसंत' से)

रंग दे, रंग दे क़दीम[२] रंग!

रंग दे क़दीम रंग, बेदरेग़[३], बेदरंग[४],
जिस की ज़ौ[५] से मात हो रंगबाज़िए फ़िरंग[६]।
इश्क़ के लिबास को, रंग शोख़ो-शंग दे!

रंग दे, रंग दे क़दीम रंग!

रंग दे, रंग दे क़दीम रंग!
एक ही उमंग दे, एक ही तरंग दे,
दीन धर्म मिट न जाय, पासे नामो-नंग[७] दे;
दामने दराज़[८] दे, या क़बाए तंग[९] दे,

---

१ संदेश। २ पुराना। ३ नस्संकोच। ४ निश्चित। ५ चमक। ६ विदेश की रंगबाज़ी। ७ नाम और इज़्ज़त का विचार। ८ खुला दामन। ९ तंगचोला।

रंग दे, रंग दे क़दीम रंग !
रंग दे, रंग दे क़दीम रंग !

उम्र घट गई तो क्या, डोर कट गई तो क्या !
यह हवाए तुंदो[1] तेज़, रुख़ पलट गई तो क्या !
आ गई बसंत रुत, और एक पतंग दे !

रंग दे, रंग दे क़दीम रंग !
रंग दे, रंग दे क़दीम रंग !

सुलह हो कि जंग हो, साथियों का संग हो।
सब हमें पसंद है, ख़ून हो कि रंग हो।
ख़ून हो कि रंग हो, एक रंग रंग दे !

रंग दे, रंग दे क़दीम रंग !

प्रेम-प्रदर्शन

मेरे दिल का बाग़, प्यारी, मेरे दिल का बाग़ ।
मैं हूं दिल के बाग़ का माली, लाया हूं फूलों की डाली ।
नाज़ुक नाज़ुक फूल हैं जैसे उजले औ' बेदाग़[2] ,
ऐसे ही बेदाग़ है प्यारी, मेरे दिल का बाग़ ।
प्यारी, मेरे दिल का बाग़ !

उलफ़त[3] का इहसास[4], प्यारी, उलफ़त का इहसास—
उलफ़त है फूलों का गहना, ख़ुशबूओं में रहना-सहना ।
मद्धम, हलकी, भीनी-भीनी, इन फूलों की बास !
मीठा-मीठा दर्द हो जैसे, उलफ़त का इहसास !

---

[1]मंद। [2]बिना दाग़ के (उज्ज्वल)। [3]प्रेम। [4]अनुभूति।

प्यारी, उलफ़त का इहसास !

उलफ़त का इज़हार[1], प्यारी उलफ़त का इज़हार—
मेरी ठंडी ठंडी आहें, तेरी यह हैरान निगाहें,
इन फूलों की हर डाली है, इक गुलशन बेख़ार[2] !
इन फूलों की रंगत जैसे, उलफ़त का इज़हार !
प्यारी, उलफ़त का इज़हार !

अंधी जवानी

घटाएं छाई हैं घनघोर ; घटाएं छाई हैं घनघोर !
घटाएं काली काली, ख़ूब बरसने वाली,
मतवाली, पुरशोर ! घटाएं छाई हैं घनघोर !
गुलशन की गुलपोश अदाएं, आमों की ख़ामोश फ़िज़ाएं,
कोयल की मदहोश सदाएं, बन में बोल रहे हैं मोर !
घटाएं छाई हैं घनघोर !

जवानी ले आई बरसात ; जवानी ले आई बरसात !
जवानी, हाय, जवानी ! सरशारी[3] नादानी[4],
मस्तानी, बदज़ात ! जवानी ले आई बरसात !
बैठा हूं अब मर्ग[5] किनारे, करता हूं हूरों के नज़ारे,
आह, निगाहें, आह, इशारे ! छाई निगह[6] पर काली रात।
जवानी ले आई बरसात !

मुहब्बत आहों का तूफ़ान; मुहब्बत आहों का तूफ़ान, !
मुहब्बत प्यारी-प्यारी, मीठी सी बीमारी,

---

[1]प्रदर्शन। [2]अकंटक। [3]उद्दंडता। [4]मूर्खता। [5]मृत्यु। [6]दृष्टि।

बेचारी, अनजान ! मुहब्बत ! आहों का तूफ़ान ,
इक कश्ती मल्लाह से ख़ाली, मैं ने उठा तूफ़ान में डाली,
इस कश्ती का अल्लाह वाली, पार लगाएगा रहमान !

मुहब्बत आहों का तूफ़ान !

'जोश' मलीहाबादी

'जोश' मलीहाबादी उर्दू दुनिया में "शायरे इन्क़लाब" के नाम से प्रसिद्ध हैं। हिन्दुस्तान के गतिशील जीवन के साथ आपकी कविता भी इस प्रकार गतिशील रही है कि इस गतिविधि का हर मोड़ उनकी कविता में चित्रित हो गया है। जहां तक शैली का सम्बन्ध है, 'जोश' की कविता में तूफ़ान की सी आमद और चढ़े हुए सागर का सा ज़ोर है। शब्द पर शब्द और पंक्ति पर पंक्ति ऐसे चढ़ी आती है जैसे लहर पर लहर।

'जोश' ख़ासी कठिन भाषा लिखते हैं, पर पिछले चन्द वर्षों आप ने गीत भी लिखे हैं जिनमें उनकी कविता के अधिकांश गुण वर्तमान हैं।

मुरली

यह किन ने बजाई मुरलिया,
हिरदे में बदरी छाई!

(१)

गोकुल बन में बरसा रंग,
बाजा हर घर में मिरदंग!
ख़ुद से खुला हर इक जूड़ा,
हर इक गोपी मुस्काई!

यह किन ने बजाई मुरलिया ,
हिरदे में बदरी छाई !

(२)

ज़मुना जल के हलकोरे ,
बन गये नयन के डोरे !
कलियां चटकीं गुलशन में ,
तारों ने ली अँगड़ाई !
यह किन ने बजाई मुरलिया ,
हिरदे में बदरी छाई !

(३)

चहके बहले नर नारी ,
सब मिल मिल बारी बारी !
छलकें पनघट पै गगरियाँ ,
अर्जुन ने धनक लचकाई !
यह किन ने बजाई मुरलिया ,
हिरदे में बदरी छाई !

नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी ?

नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी !
दुनिया यही दुनिया है तो क्या याद रहेगी !

आकाश पै निखरा हुआ सूरज का है मुखड़ा ,
औ' धरती पै उतरे हुए चेहरों का है दुखड़ा ,

दुनिया यही दुनिया है तो क्या याद रहेगी !
नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी !

कब होगा सवेरा, कोई ऐ काश बता दे,
किस वक़्त तक ऐ घूमते आकाश बता दे,
इन्सान पै इनसान की बेदाद[1] रहेगी !
नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी !

चहकार से चिड़ियों की चमन गूंज रहा है,
झरनों के मधुर राग से बन गूंज रहा है,
पर मेरा तो फ़रयाद से मन गूंज रहा है,
कब तक मेरे होंटो पै यह फ़रयाद रहेगी !
नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी !

(२)

नगरी मेरी बरबाद है बरबाद है बरबाद,
बरबाद है बरबाद !

इशरत[2] का इधर नूर उधर ग़म का अँधेरा,
साग़र का इधर दौर उधर खुश्क ज़बां है,
आफ़त का यह मंजर[3] है क़यामत का समां है,
आवाज़ दो इंसाफ़ को इंसाफ़ कहां है !
रागों की कहीं गूंज कहीं नाला-ओ-फ़रयाद,
नगरी मेरी बरबाद है बरबाद है बरबाद,
बरबाद है बरबाद !

हर शै में चमकते हैं इधर लाख सितारे,
हर आंख से कहते हैं उधर खून के धारे !

---

१ अत्याचार । २ सुख वैभव । ३ दृश्य ।

हँसते हैं चमकते हैं इधर राज दुलारे,
रोते हैं बिलकते हैं उधर दर्द के मारे!

इक भूक से आज़ाद तो सौ भूक से नाशाद,
नगरी मेरी बरबाद है बरबाद है बरबाद!

नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी,
दुनिया यही दुनिया है तो क्या याद रहेगी?

ऐ चाँद उम्मीदों को मेरी शमअ दिखादे,
डूबे हुए खोए हुए सूरज का पता दे!
रोते हुए जुग बीत गया अब तो हँसा दे,
ऐ मेरे हिमालय मुझे यह बात बतादे!

होगी मेरी नगरी भी कभी खैर से आज़ाद,
नगरी मेरी बरबाद है बरबाद है बरबाद!
बरबाद है बरबाद!

नगरी मेरी कब तक योंही बरबाद रहेगी,
दुनिया यही दुनिया है तो क्या याद रहेगी!

आग लगादें

आग लगादें आग!
आओ इस पापी दुनिया में आग लगादें आग!

आंखों वाले सीस नवाएँ अंधे हों सरदार,
कोयल से नज़राना मांगे कव्वे का दरबार!
एक तरफ़ हैं मोटे ताज़े एक तरफ़ बीमार,

उनके गले में गोरी बाहें इनके गले में नाग !
आग लगादें आग !
कुत्ता सोए गद्दी पर औ' टहले चौकीदार,
आदम का बांका बेटा औ' भडुवे का ब्योपार !
एक तरफ़ हैं धन वाले औ' एक तरफ़ नादार,
उनके मुँहमें शक्कर हैं औ' इनके मुँह में आग !
आग लगादे आग !
आओ इस पापी दुनिया में आग लगादें आग !

दिलेरी

मैं धीरे धीरे क्यो बोलूं ?

(१)

थर थर थर क्यों काँपूं,
क्यों अपना मुँह ढांपूं,
क्यों न घूंघट के पट खोलूं,
मैं धीरे धीरे क्यों बोलूं ?

हाँ मोरी होगी जीत,
कुछ चोरी किया है पीत,
क्यों ना बढ़ के मोती रोलूं;
मैं धीरे धीरे क्यों बोलूं ?

मिलता है किसको चैन,
जगना तो है दिन रैन,

क्यों ना पी से मिल के सो लूं,
मैं धीरे धीरे क्यों बोलूं!

इक फूल खिला था जंगल में

इक फूल खिला था जंगल में!

उस फूल का इक रखवाली था रखवाली था और माली था!
अब फूल की सूखी डाली है, औ' जेल के अन्दर माली है!
सब कहते हैं माली खूनी है, वह खूनी है बातूनी है!
यह सच है वह बातूनी है, पर झूठ है यह वह खूनी है!

इक फूल खिला था जंगल में!

उस फूल का इक रखवाली था रखवाली था औ' माली था!
वह फूल है अब मुरझाया सा, मुरझाया सा कुम्हलाया सा!
अब पानी देगा कौन उसे, जौवानी देगा कौन उसे!
रखवाली है जंजीरों में, अब माली है जंजीरों में!

इक फूल खिला था जगल में!

उस फूल का इक रखवाली था रखवाली था औ' माली था!
जंजीरों में अब माली है, अब फूल है औ' पामाली है!
सकते में डाली डाली है, औ' बाग़ का सीना ख़ाली है!

इक फूल खिला था जंगल में!

उस फूल का इक रखवाली था रखवाली था औ' माली था!

सैर की दावत

(१)

जंगल में है रंग!

गोरी,
चल भी मोरे संग,
जंगल है गुलज़ार,
या इक सुन्दर नार,
चोली जिसकी तंग,
जंगल में है रंग,

गोरी,
चल भी मोरे संग !

(२)

हर पत्ते में गीत,
हर झोंका इक गीत,
हर नद्दी मिरदंग,
जंगल में है रंग;

गोरी,
चल भी मोरे संग !

(३)

हलकी हलकी धूप,
धूप के अन्दर रूप,
रूप के अन्दर रंग,
चल भी मेरे संग !

गोरी,
जंगल में है रंग,

बरस रहा है पानी

बरसों से बरस रहा है पानी !

फिर भी मेरी जमीं प्यासी,
हर बाग़ पै है छाई उदासी,
हर गुल का है रंग अरग़वानी
बरसों से बरस रहा है पानी !

आकाश पै गा रहे हैं बादल,
पुरवाई की बाज रही है छागल,
महगाई वही वही गिरानी,
बरसों से बरस रहा है पानी !

वह काल पै काल पड़ रहे हैं,
भूके मर मर के सड़ रहे हैं,
झोकों पै है मौत की कहानी,
बरसों से बरस रहा है पानी !

सुनसाँ है तन नगर की गलियां,
मुरझाई पड़ी हैं मन की कलियाँ,
दम तोड़ रही है ज़िन्दगानी,
बरसों से बरस रहा है पानी !

हर अब्र की छाओं में जलापा,
हर साये में रेंगता बुढ़ापा,
हर मोड़ पर ऊँघती जवानी,
बरसों से बरस रहा है पानी !

हर रूख है मुरक्काए गुलामी,
हर लब है गवाह तिश्ना कामी,
हर आँख है मुहरे नातवानी,
बरसों से बरस रहा है पानी!

सोता है भगवान

क्या सोता है भगवान?

(१)

धरती हाले डोले,
झटके औ' हिचकोले,
पत्थर हो गये पीले,
क्या कर न उड़े औसान!
क्या सोता है भगवान!

(२)

गिरती दीवारों ने,
जलते अंगारों ने,
चलती तलवारों ने,
कर डाला है हलकान!
क्या सोता है भगवान!

(३)

जो नगरी थी आबाद,
लाज भरी और आज़ाद,
हर दिल था जिसमें शाद,

वह नगरी है वीरान !
क्या सोता है भगवान ?

घुस आया घर मे चोर ,
कब होवेगी अब भोर ,
ऐसा हो पवन का ज़ोर ,
जैसे अर्जुन के बान !
क्या सोता है भगवान ?

तूफ़ान

सांपों के कुचलने की क़सम खाई हो जिसने,
दुनिया के बदलने की क़सम खाई है जिसने,
तूफ़ान हूँ तूफ़ान !

उन पाप के महलों को गिरा दूंगा मैं इक दिन ,
इन नाच के रसियों को नचा दूंगा मैं इक दिन ,

मिट जाएँगे इंसान सूरत के यह हैवान ,
भूँचाल हूँ भूँचाल तूफ़ान हूँ तूफ़ान
तूफ़ान हूँ तूफ़ान !

तड़पूँगा तो हर चादरे ज़र चाक करूंगा ,
भड़कूंगा तो हर लाख का घर खाक करूंगा ,

कड़कूंगा तो हर बैर के उड़ जाएँगे औसान !
भूँचाल हूँ भूँचाल हूँ तूफ़ान हूँ तूफ़ान !
तूफ़ान हूँ तूफ़ान !

बिगड़े हुये संसार के ढांचे को हिलाकर,
ले जाऊँगा बिफरे हुये धारो में बहाकर,
उभरेंगे नयी शान से डूबे हुये इंसान!
भूचाल हूँ भूचाल हूँ तूफ़ान हूँ तूफ़ान!
तूफ़ान हूँ तूफ़ान!

सांपों के कुचलने की क़सम खाई हो जिसने!
दुनिया के बदलने की क़सम खाई हो जिसने!

'अख़्तर' शेरानी

अभी जब मैं यह पंक्तियां लिखने बैठा, लाहौर से ख़बर मिली कि 'अख़्तर' शेरानी का देहांत हो गया। 'अख़्तर' की उमर अधिक न थी पर शराब और तन्हाई ने उनके शरीर को बहुत पहले खोखला कर दिया था।

स्व० 'अख़्तर' रियासत टोंक के रहने वाले थे। उनके साथ उर्दू की रूमानी कविता ने जन्म लिया, पली और परवान चढ़ी। उनकी कविताओं में पाठक अपने आपको चांद-सितारों की घाटियों में पाता है, जहां फूलों की सुगंधि से बयार उन्मत्त है, जहां संसार का कोलाहल चुप हो गया है और जहां स्निग्ध ज्योत्स्ना की चादर ओढ़े 'रेहाना'' 'मरजाना या 'सलमा' कवि की थकी हुई रूह को शांति प्रदान करने आती हैं अहमद नदीम क़ासिमी, अलताफ़ मशहदी, क़तील शफ़ाई और आधुनिक युग के कई कवियों की कविताओं में अख़्तर शेरानी का प्रभाव साफ़ झलकता है, लेकिन इसमें अत्युक्ति नहीं कि रूमानी कविता में स्व० 'अख़्तर' से कोई नया कवि बाज़ी नहीं मार सका। कदाचित् इसलिये कि पिछले छै सात वर्षों से देश की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति ऐसी संकटपूर्ण हो गई है कि कवि के काल्पनिक रूमान में यथार्थ का हलाहल मिल गया है। कल्पना की मदिरा ने लाल परी के संग मिल कर स्व० 'अख़्तर' को कभी यथार्थ संसार में नहीं आने दिया, इसलिये वे अपने पथ के अकेले पथिक रहे।

स्व० 'अख़्तर' ने ठीक अर्थों में गीत नहीं लिखे पर उनकी नज़्मों गीतों की सी मिठास, लोच और गेयता है।

बांसुरी की धुन

बरसात का यह मौसम, यह नीलगूं[१] घटाएं,
यह बागोबन का आलम, यह गुलफ़िशां फ़िज़ाएं[२],
यह रस भरी हवाएं!

यह रंगो बू के तूफ़ां, यह विरज के नज़ारे,
यह जन्नती ख़याबां[३], जमना के यह किनारे,
यह सीन प्यारे-प्यारे!

यह कोयलों की कूकू, यह मोर की सदाएं[४],
यह नाज़नीने आहू[५], औ' यह ग़रीब गाएं,
यह नश्शागूं फ़िज़ाएं!

सब्ज़ा[६] निखर रहा है, वादी[७] महक रही है,
नक्शा बिखर रहा है, बुलबुल चहक रही है,
फ़ितरत[८] बहक रही है!

ठहरो मगर यह आवाज़, देखो कहां से आई?
यह निकहते-फ़सूंसाज़[९], किस गुलिस्तां से आई?
किस आसमां से आई?

इस बांसुरी की लय में, अल्लाह क्या असर[१०] है!
इस उड़ने वाली मय में, क्या सेह्र कारगर है[११]?
जो है वह बेख़बर है!

---

[१]नीली। [२] फूल बरसाने वाला वातावरण। [३] स्वार्गीय क्यारियां। [४] स्वर। [५] मृगछौनी सी तरुणी। [६] हरियाली। [७] घाटी। [८]प्रकृति। [९] मंत्रमुग्ध कर देने वाली सुगंधि। [१०]प्रभाव। [११]कौन सा भारी जादू किया है।

यह कौन इस समय में, बंशी बजा रहा है ?
इस दर्जा मस्त लय में, उल्फ़त लुटा रहा है ?
नग़मे बहा रहा है।

देखो तो पास चल कर, शायद है कोई जोगी,
या गाँव से निकल कर, आया है कोई भोगी ?
संसार का बरोगी[१] !

शायद कोई रिषी है, सन्यास की लगन में !
शायद कोई मुनी है, मसरूफ़[२] कीर्तन में !
तौहीद[३] के भजन में !

हां आओ पास चल कर, पूछें कि नाम क्या है ?
तलवों से आँखें मल कर, पूछें की काम क्या है ?
इस का पयाम[४] क्या है ?

ठहरो ज़रा, निगाहें पहचानती हैं इस को,
फ़ितरत की जलवागाहें[५], सब जानती हैं इस को,
औ' मानती हैं इसको !

हां हां यह बंशीवाला, चूकी नज़र हमारी,
यह बिरज का ग्वाला, है नंद का मुरारी।
औ' आरज़ू[६] हमारी !

इक जोशे सरमदी[७] में, बंसी बजा रहा है,
दुनियाए बे ख़ुदी[८] में, फ़ितने उठा रहा है,

१वैरागी। २ निमग्न। ३परमात्मा के भजन में। ४संदेश। ५जहां प्रकृति अपने पूर्ण प्रकाश में रहती है। ६आकांक्षा। ७मस्ती के जोश में। ८निमग्नता के संसार में।

महशर[1] जगा रहा है!

बंसी में से परेशां, नग़में मचल रहे हैं।
या सैकड़ों गुलिस्तां, करवट बदल रहे हैं।

औ' फूल उगल रहे हैं!

यह नग़मे सुन के फ़ितरत, खोई सी जा रही है,
मौसीक़िये मुहब्बत[2] के ज़ख्म खा रही है।

औ' मुसकरा रही है।

एक देहाती गीत सुन कर

सुनो यह कैसी आवाज़ आ रही है? कोई गांवों की लड़की गा रही है।
सहर[3] के धुँधले-धुँधले मंज़रों[4] को, शराबे नग़मा[5] से नहला रही है।
उठी है शायद आटा पीसने को, कि चक्की की सदा[6] भी आ रही है।
ग़मों से चूर अपने नन्हे दिल को, तराना[7] छेड़ कर बहला रही है।
फ़िज़ा[8] पर, बस्तियों पर, जंगलों पर, धुआंधार एक बदली छा रही है।
छमाछम मेह की बूँदें पड़ रही हैं, कि सावन की परी कुछ गा रही है।
यह बादल हैं कि हैं सावन के सपने, हवा जिन को उड़ा कर ला रही है।
यह बिजली है कि इक मरमर की नागिन, धुएं के झील पर लहरा रही है।
यह बूँदें हैं कि बिजली आसमां से, सितारे तोड़ कर बरसा रही है।
यह बादल की गरज, बिजली का कड़का, ख़ुदाई सारी लरज़ी[9] जा रही है।
मगर वह ग़मज़दा[10] मासूम[11] लड़की, बराबर गीत गाए जा रही है।
कुछ ऐसा नातवां[12] नग़मा है गोया, कोई नन्ही कली मुरझा रही है।

---

[1] प्रलय। [2] प्रेम-संगीत। [3] प्रातःकाल। [4] दृश्यों। [5] संगीत की सुरा। [6] आवाज़। [7] संगीत। [8] प्रकृति। [9] कांपी। [10] दुखी। [11] सरल हृदय। [12] दुर्बल।

घरों पर, खेतियों पर, क्यारियों पर, उदासी ही उदासी छा रही है।
यह घर सुसराल होगा शायद इस का, जभी मां बाप की याद आ रही है।
जभी मसरूफ़[1] है आहोफ़ुग़ां[2] में, जभी ग़मगीन लय में गा रही है।

"यह बरखा रुत भी बीती जा रही है!

हवा जो गांव को महका रही है, मेरे मैके से शायद आ रही है!
घटा की ऊदी-ऊदी चुनरियों से, मेरी सखियों की बू-बास आ रही है।
मुझे लेने न आए अच्छे बाबल, तुम्हारी याद आफ़त ढा रही है।
मेरी अम्मा को हो इसकी ख़बर क्या, कि चंपा इस जगह घबरा रही है।
न ली भैया ने भी सुध-बुध हमारी, जहां से चाह उठती जा रही है।
भला क्यों कर थमें आंसू कि जी पर, उदासी की बदरिया छा रही है।
गया पींगें बढ़ाने का ज़माना, वह अमरय्यों पै कोयिल गा रही है।"
योंही वह अपनी ग़मगीं रागनी से, दरो-दीवार को तड़पा रही है।
सियाही उड़ती जाती है उफ़क़[3] से, अरूसे-सुब्ह[4] बढ़ती आ रही है।
शिवाले में गजर[5] भी जाग उट्ठा, ठनाठन-ठन की आवाज़ आ रही है।
कोई चिड़िया निकल कर घोसले से, घने जंगल में मंगल गा रही है।
कोई बकरी कहीं करती है में-में, कोई बछिया कहीं चिल्ला रही है।
मगर इन सब से बे परवा वह लड़की, बराबर गीत गाए जा रही है।
इसे सुन-सुन के कब तक सर धुनोगे? बस 'अख़तर' सोने दो, नींद आ रही है।

परदेसी की प्रीत

परदेसी की प्रीत है झूठी, झूठी परदेसी की प्रीत!
हारे हुए की जीत है झूठी, दुनिया की यह रीत है झूठी,
परदेसी की प्रीत है झूठी, झूठी परदेसी की प्रीत!

---

[1] संलग्न। [2] शोकोद्‌गार। [3] प्राची। [4] सुबह की दुलहन। [5] घंटा।

परदेसी से दिल का लगाना, बहते पानी में है नहाना !
कोई नहीं नदिया का ठिकाना, रमते जोगी किस के मीत ?
परदेसी की प्रीत है झूठी, झूठी परदेसी की प्रीत !

उड़ती चिड़िया गाती जाए, मीठा गीत मिठास बहाए,
यूं परदेसी मन को लुभाए, उड़ गई चिड़िया उड़ गया गीत !
परदेसी की प्रीत है झूठी, झूठी परदेसी की प्रीत !

मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है !

('कलियां' से)

न फूलों की तमन्ना[१] है, न गुलदस्तों की हसरत है,
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है !

अभी उलटा नहीं बादे-बहारी[२] ने नक़ाब[३] इन का,
अभी मह्‌फ़ूज़[४] है इक ख़िलवते रंगीं[५] में ख़्वाब इन का,
अभी सरमस्तियों में रात दिन सोने की आदत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है !

अभी टूटा नहीं सूरज की किरनों से हिजाब[६] इन का,
अभी रुसवा[७] नहीं है गुलफ़रोशां[८] में शबाब[९] इन का,
अभी छाई हुई दोशीज़गी[१०] की सादा रंगत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है !

---

१ आकांक्षा । २ वसंत का समीरण । ३ घूंघट । ४ सुरक्षित । ५ रंगीन एकांत ।
६ लज्जा । ७ बदनाम । ८ फूल बेचने वालों । ९ जवानी । १० कौमार्य ।

बहारिस्तान के मंदिर की इन को देवियां कहिए,
जो गुल को कृष्ण कहिए, इन को उस की गोपियां कहिए,
कोई जाने मलाहत[1] है कोई जाने सबाहत[2] है।
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है!

कोई छू ले अगर इन को, तो यह कुम्हला के रह जाएं,
हया[3] में इस क़दर डूबें कि बस मुरझा के रह जाएं,
अभी अल्हड़पने के दिन हैं, शरमाने की आदत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है!

मेरा बस हो तो 'अख़तर' मैं इन्हीं का रंग हो जाऊं!
हमेशा के लिए इन चंपई परदों में सो जाऊं!
मुझे इन की रसीली गोद में मरने की हसरत है।
मुझे तो कुछ इन्हीं बीमार कलियों से मुहब्बत है!

ऐ इश्क़ हमें बर्बाद न कर

ऐ इश्क़ न छेड़ आ आ के हमें, हम भूले हुओं को याद न कर,
पहले ही बहुत नाशाद[4] हैं हम, तू और हमें नाशाद न कर,
क़िस्मत का सितम[5] ही कम नहीं कुछ, यह ताज़ा सितम ईजाद[6] न कर,
यों ज़ुल्म न कर बेदाद[7] न कर, ऐ इश्क़ हमें बरबाद न कर!

जिस दिन से बँधा है ध्यान तेरा, घबराए हुए से रहते हैं,
हर वक़्त तसव्वुर[8] कर-कर के, शरमाए हुए से रहते हैं,

[1] हलका रंग। [2] लाल और श्वेत रंग। [3] शर्म। [4] दुखी। [5] अत्याचार।
[6] आविष्कार। [7] ज़ुल्म। [8] कल्पना।

कुम्हलाये हुए फूलों की तरह, कुम्हलाए हुए से रहते हैं,
पामाल[1] न कर, बर्बाद न कर, ऐ इश्क़ हमें बर्बाद न कर!

जिस दिन से मिले हैं, दोनों का, सब चैन गया आराम गया,
चेहरों से बहारे-सुब्ह गई, आँखों से फ़रोग़े शाम[2] गया,
हाथों से खुशी का जाम छुटा, ओठों से हंसी का नाम गया,
ग़मगीन बना, नाशाद न कर, ऐ इश्क़ हमें बर्बाद न कर!

रातों को उठ-उठ रोते हैं, रो-रो के दुआएं करते हैं,
आंखों में तसव्वुर, दिल में खलश, सर धुनते हैं, आहें भरते हैं,
ऐ इश्क़ यह कैसा रोग लगा, जीते हैं न ज़ालिम मरते हैं,
यह ज़ुल्म तू ऐ जल्लाद न कर, ऐ इश्क़ हमें बर्बाद न कर!

दो दिन में ही इहदे तिफ़ली[3] के, मासूम[4] ज़माने भूल गए,
आंखों से व' खुशियां मिट सी गईं, लब[5] को वे तराने भूल गए,
उन पाक[6] बहिश्ती ख्वाबों[7] के, दिलचस्प फ़िसाने भूल गए,
इन ख्वाबों से यूं आज़ाद न कर, ऐ इश्क़ हमें बरबाद न कर!

उस जाने हया[7] का बस नहीं कुछ, बेबस है! पराए बस में है,
बेदर्द दिलों को क्या हो खबर, जो प्यार यहां आपस में है,
है बेबसी ज़हर और प्यार है रस, यह ज़हर छिपा इस रस में है,
कहती है हया फ़रयाद न कर, ऐ इश्क़ हमें बर्बाद न कर!

---

[1] संध्या की रौनक। [2] पददलित। [3] बचपन का ज़माना। [4] सरल। [5] ओंठ। [6] पवित्र। [7] स्वर्गीय स्थान।

निर्वासित

('ओ देस से आने वाले बता' से)

ओ देस से आनेवाले बता, किस हाल में है याराने वतन ?
आवाराए-ग़ुरबत[1] को भी सुना, किस रंग में है कनआने[2] वतन ?
वे बाग़े वतन, फ़िरदौसे वतन, वे सरवे[3] वतन रीहाने[4] वतन ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या अब भी वहां के बाग़ों में, मस्ताना हवाएं आती हैं ?
क्या अब भी वहां के परबत पर, घनघोर घटाएं छाती हैं ?
क्या अब भी वहां की बरखाएं, वैसी ही दिलों को भाती हैं ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या अब भी वतन में वैसे ही, सरमस्त नज़ारे होते हैं ?
क्या अब भी सुहानी रातों को, आकाश पै तारे होते हैं ?
जो खेल हम खेला करते थे, क्या अब भी वे सारे होते हैं ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या शाम पड़े सड़कों पै वही, दिलचस्प अँधेरा होता है ?
औ' गलियों की धुँधली शमओं पर, सायों का बसेरा होता है ?
बाग़ों की घनेरी शाख़ों में, जिस तरह सवेरा होता है ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या अब भी वहां वैसी ही जवां, और मदभरी रातें होती हैं ?
क्या रात भर अब भी गीतों की, औ' प्यार की बातें होती हैं ?

---

[1] देश के मित्र। [2] निर्वास में भटकने वाले। [3]-वृक्ष विशेष।

वे हुस्न के जादू चलते हैं, वे इश्क़ की घातें होती हैं?
ओ देस से आनेवाले बता!

क्या अब भी वहां के पनघट पर, पनहारियां पानी भरती हैं?
अँगड़ाई का नक़्शा बन-बन कर, सब माथे पै गागर धरती हैं?
औ' अपने घरों को जाते हुए, हँसती हुई चुहलें करती हैं?
ओ देस से आनेवाले बता!

बरसात के मौसम अब भी वहां, वैसे ही सुहाने होते हैं?
क्या अब भी वहां के बाग़ों में, झूले औ' गाने होते हैं?
औ' दूर कहीं कुछ देखते ही, नौ-उम्र दीवाने होते हैं?
ओ देस से आनेवाले बता!

क्या अब भी पहाड़ी चोटियों पर, बरसात के बादल छाते हैं?
क्या अब भी हवाए साहिल[1] के, वे रसभरे झोंके आते हैं?
क्या रसिया[2] की ऊँची टेकरी पर; लोग अब भी रसिया[3] गाते हैं?
ओ देस से आनेवाले बता!

क्या अब भी पहाड़ी घाटियों में, घनघोर घटाएं गूँजती हैं?
साहिल के घनेरे पेड़ों में, वर्षा की हवाएं गूँजती हैं?
झींगुर के तराने जागते हैं, मोरों की सदाएं गूँजती हैं?
ओ देस से आनेवाले बता!

क्या शहर के गिर्द अब भी हैं रवां[4], दरयाए हसीं[5] लहराए हुए?
ज्यों गोद में अपनी मन को लिए, नागन को कोई थर्राए हुए?

---

[1]समुद्रतट की वायु। [2]स्थान विशेष। [3]एक गीत। [4]बहता हुआ। [5]सुंदर नदी।

या नूर की हँसली हूर[1] की गरदन में हो अयां[2] बल खाए हुए ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या शाम को अब भी जाते हैं, अहबाब[3] किनारे दरिया पर ?
वे पेड़ घनेरे होते हैं, शादाब[4] किनारे दरिया पर ?
औ' प्यार से आकर झांकता है, महताब[5] किनारे दरिया पर !
ओ देस से आनेवाल बता !

क्या आम के ऊँचे पेड़ों पर, अब भी वह पपीहे बोलते हैं ?
शाखों के हरेरी[6] परदों में, नग़मों के ख़ज़ाने खोलते हैं ?
सावन के रसीले गीतों से, तालाब में अमरस[7] घोलते हैं ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या अब भी गजरदम[8] चरवाहे, रेवड़ को चराने जाते हैं ?
औ' शाम के धुँधले सायों से हमराह[9] घरों को आते हैं ?
औ' अपनी रसीली बाँसरियों में, इश्क़ के नग़मे गाते हैं ?
ओ देस से आनेवाले बता !

क्या 'भाँची' पै अब भी सावन में, वर्षा की बहारें छाती हैं ?
मासूम घरों से भोर भए, चक्की की सदाएं आती हैं ?
औ' याद में अपने मैके की, बिछुड़ी हुई सखियाँ गाती हैं ?
ओ देस से आनेवाले बता !

शादाबो शगुफ़्ता[10] फूलों से, मामूर[11] हैं गुलज़ार[12] अब कि नहीं ?
बाज़ार में मालन लाती है, फूलों के गुँधे हार अब कि नहीं ?

---

[1] सुंदरी। [2] स्पष्ट। [3] मित्र। [4] लहरानेवाले। [5] चांद। [6] हरे। [7] अमृत। [8] सवेरे [9] साथ। [10] ताज़ा और खिले हुए। [11] भरे हुए। [12] बाग़।

औ' शौक से टूटे पड़ते हैं, नौखेज़[1] ख़रीदार अब कि नहीं?
ओ देस से आनेवाले बता!

क्या हम को वतन के बाग़ और मस्ताना फ़िज़ाएं भूल गईं?
वर्षा की बहारें भूल गईं, सावन की घटाएं भूल गईं?
दरया के किनारे भूल गए, जंगल की हवाएं भूल गईं?
ओ देस से आनेवाले बता!

क्या अब भी किसी के सीने में, बाक़ी है हमारी चाह बता!
क्या याद हमें भी करता है, यारो में कोई आह बता!
ओ देस से आनेवाले बता, लिल्लाह बता लिल्लाह बता!
ओ देस आनेवाले बता!

---

[1] युवक।

'साग़र' निज़ामी

यू० पी० के इस जादूगर का नाम किस ने नहीं सुना ? अपने कल-कंठ से निकले हुए मादक संगीत का आवरण अपने सरल गीतों और सुंदर नज़्मों को पहना कर श्रोताओं को उस ने बीसियों बार मुग्ध किया है। मुशायरों में उस के तराने गूँजते हैं, रेडियो पर उस के नग़में सुनाई देते हैं। 'साग़र' की भाषा सीधी-सादी हिंदुस्तानी है, और भावों में हिंदी की पुट है। अलंकार उस की उँगलियों पर खेलते हैं और जब वह अपनी जादू भरी आवाज़ में गाता है तो फ़िज़ा का कण-कण झूम कर रह जाता है।

तुम मुझ से क्यों रूठे ?

मेरे मन में प्रेम जो फूटा, तुम मुझ से क्यों रूठे !
चंदरमा[1] आकाश से फूटा, धरती से गुल-बूटे,
ताक-झाँक की धुन में सूरज चमका, तारे टूटे,
रात मिलन के कारन दिन से साँझ की नगरी छूटे,
तुम मुझ से क्यों रूठे ?

प्रीत की छाती से नद्दी फूटी, शोर मचाती !
मौजों का सारंग बजाती, मीठे नग़में गाती,
मीठे-मीठे नग़में गाती, मोती ख़ूब लुटाती,
जिस ने देखे, उस ने पाए, जिस ने पाए, लूटे।
तुम मुझ से क्यों रूठे !

---

[1] चंद्रमा।

सीपी की गोदी में मोती, घुट-घुट कर रह जाए,
चमक-दमक में से उस की सीपी काँपे औ' थर्राए,
बरखा की इक बूंद का बोसा[१] मोती को गरमाए,
मोती सीपी के पट खोले औ' घबरा कर फूटे।
तुम मुझ से क्यों रूठे?

टहनी में कुछ कलियां फूटीं, कलियों में सौ रंग,
रंगों से इक ख़ुशबू बरसी औ' ख़ुशबू से उमंग,
कँवल-कँवल भँवरों ने छेड़ा ऋतू-राज का चंग[२],
शबनम के सौ प्याले इक चुम्मे के दहन[३] में टूटे।
तुम मुझ से क्यों रूठे?

पुजारन

ऐ मंदिर का राज़[४] पुजारन, ऐ फ़ितरत[५] का साज़[६] पुजारन!
प्रेम-नगर की रहने वाली, हर की बतियां कहने वाली,
सीधी-सादी भोली-भाली, बात निराली गात निराली,
गर्दन में तुलसी की माला, दिल में इक ख़ामोश शिवाला,
ओंठों पर पैमाने[७] रक़्सां[८], आँखों में मैख़ाने रक़्सां।

ऐ देवी का रूप पुजारन!
तेरा रूप अनूप पुजारन!

भीनी-भीनी बू[९] सारी में, सारी मद में तू सारी में,
आँखों में जमुना की मौजें, बालों में गंगा की लहरें,
नूर तेरे रुख़सारे हसीं[१०] पर, रंगीं टीका पाक जबीं[११] पर,

[१]चुंबन। [२]बाजा विशेष। [३]मुख। [४]रहस्य। [५]प्रकृति। [६]बाजा। [७]मदिरा का प्याला। [८]नृत्य करता हुआ। [९]सुगंधि। [१०]सुंदर कपोल। [११]पवित्र मस्तक।

जैसे फ़लक[1] पर सुब्ह का तारा, रौशन रौशन प्यारा प्यारा,
शर्मीली मासूम[2] निगाहें, गोरी-गोरी नाज़ुक बाहें।

ऐ देवी का रूप पुजारन !
तेरा रूप अनूप पुजारन !

फूलों की इक हाथ में थाली, मोहन[3], मदमाती, मतवाली,
नीची नज़रें तिरछी चितवन, मस्त पुजारन हरि की जोगन,
चाल है मस्तानी मतवाली, और कमर फूलों की डाली,
दिल तेरा नेकी की मंज़िल, लाखों बुतख़ानों का हासिल[4],
हस्ती तुझ में झूम रही है, मस्ती आँखें चूम रही है।

ऐ देवी का रूप पुजारन !
तेरा रूप अनूप पुजारन !

नूर के तड़के[5] घाट पै जाकर, गंगा का सम्मान बढ़ा कर,
फिर लेकर ख़ुशबूएं सारी, चंदन, जल, औ' दूब सुपारी,
सुब्ह के जलवों को तड़पा कर, नज़्ज़ारों[6] से आँख बचा कर,
ऐ मंदिर में आनेवाली, प्रेम के फूल चढ़ाने वाली,
हस्ती भी है गुल्शन तुझ से, सूरज भी है रौशन तुझ से।

ऐ देवी का रूप पुजारन !
तेरा रूप अनूप पुजारन !

लौट चली तू करके पूजा, देख लिया ईश्वर का जल्वा,
ठहर-ठहर ऐ प्रेम-पुजारन, मैं भी कर लूं तेरे दर्शन !
देख इधर घूँघट को हटा कर, अपने पुजारी पर किरपा[7] कर !

---

[1] आकाश। [2] अकलुष। [3] सुन्दर। [4] सार। [5] प्रातःकाल। [6] दृश्यों। [7] कृपा।

सब की पूजा ज़ुह्‌दो-ताक़त[1], मेरी पूजा तेरी उलफ़त !
हरि का घर है तेरा पैकर[2], तू ख़ुद है इक सुन्दर मंदिर।

ऐ देवी का रूप पुजारन !
तेरा रूप अनूप पुजारन !

आँख में मेरी है इक आँसू, जैसे हो नद्दी पे जुगनू,
माला में इस को शामिल कर, यह मोती है तेरे क़ाबिल[3]।
ध्यान से अपने प्राण बचा कर पाँव में तेरे आँख मिला कर,
प्रेम का अपने नीर बहा दूं, सब कुछ तुझ पै भेंट चढ़ा दूं।
पापी दिल मेरा सुख पाए, मेरी पूजा क्यों रह जाए ?

ऐ देवी का रूप पुजारन !
तेरा रूप अनूप पुजारन !

आ तेरी सूरत को पूजूं, मैं जीवित मूरत को पूजूं !
तू देवी मैं तेरा पुजारी, नाम तेरा हर साँस से जारी।
लाग की आग ने तन को भूना, फिर मंदिर है दिल का सूना।
मन में तेरा रूप बसा लूं, तुझ को मन का चैन बना लूं !
छिप जा मेरे दिल के अंदर, हो जाएं आबाद यह मंदिर !

ऐ देवी का रूप पुजारन !
तेरा रूप अनूप पुजारन !

तुझ को दिल के गीत सुनाऊं, फिर चरनों में सीस नवाऊं !
तीन लोक, आकाश झुका दूं, धरती की शक्ती लचका दूं !
तारे, चाँद औ' भूरे बादल, बाग़, नदी, दरिया औ' जंगल,

---

[1] नेकी। तपस्या। [2] मुख। [3] योग्य।

पर्बत, रूख औ' मसजिद मंदिर, साक़ी पैमाना औ' सागर,
दुनिया हो तेरे क़दमों पर, क़दमों के नीचे मेरा सर!

ऐ देवी का रूप पुजारन!
तेरा रूप अनूप-पुजारन?

एक पुजारन एक पुजारी, प्रीत की रीतें कर दें जारी,
देश में प्रीत और प्यार को भर दें, प्रेम से कुल संसार को भर दें,
लोभ मोह के बुत को तोड़ें, पाप, क्रोध का नाम न छोड़ें,
प्रेम का रस दौड़े रग-रग में, हो इक प्रेम की पूजा जग में,
दोनों इस धुन में मर जाएं, तीरथ एक अजीब[१] बनाएं।

ऐ देवी का रूप पुजारन!
तेरा रूप अनूप पुजारन!

यह फूल भी उठा ले

जल्वे तेरे अनोखे, ग़मज़े[२] तेरे निराले,
चितवन है सीधी-सादी, तेवर हैं भोले-भाले,
कुहनी तक आस्तीनें, आँचल कमर में डाले,
रुख़सार[३] गोरे-गोरे, यह बाल काले-काले,
ओ फूल चुनने वाली!

इक हाथ टोकरी पर, इक हाथ है कमर पर,
ढलका हुआ दुपट्टा, ताज़ें-ग़रूर[४] सर पर,
है इक नज़र क़दम पर, औ' इक क़दम नज़र पर,
क्यों वह ख़राम[५] तेरा, पामाल कर[६] न डाले?
ओ फूल चुनने वाली!

---

[१]विचित्र। [२]अदाएँ। [३]कपोल। [४]गर्व का मुकुट। [५]चाल। [६]पददलित।

तू फूल चुन रही है, औ' फूल झड़ रहे हैं,
बल तेरी त्योरियों में रह-रह के पड़ रहे हैं!
क्या तेरी टोकरी में तारे से जड़ रहे हैं?
हसरत से बाग़ वाले फिरते हैं दिल सम्हाले!

ओ फूल चुनने वाली!

फूलों में मैं ने अपना दिल भी मिला दिया है,
फूलों में मिल मिला कर वह फूल बन गया है।
आएगा काम तेरे, यह तेरे काम का है,
ओ फूलचुनने वाली, यह फूल भी उठाले!

ओ फूल चुनने वाली!

भिखारन

देख के दिल भर आया मेरा, आ मैं भर दूं कासा[1] तेरा।
लूट ले जितना लूटा जाए, माँग ले जो कुछ माँगा जाए,
दिल ले ले, ईमान भी ले ले, जो चाहे तो जान भी ले ले!
वह भी तेरा दिल भी तेरा, सामाने-महफ़िल[2] भी तेरा,
साग़र तेरा साकी तेरा, तू मेरी, और बाक़ी तेरा!

आह भिखारन, वाह भिखारन!
आह न भर लिल्लाह भिखारन!

आ मैं तेरे बाल सवारूं, नज़्ज़ारों से गाल सँवारूं,
रूह बना कर तन में रक्खूं, आँखों की चितवन में रक्खूं,
बन जा, बन जा, दिल की रानी, इस दुनिया में कर सुल्तानी!

---

[1] प्याला। [2] सभा का सामान।

मैं तेरा जोगी बन जाऊं, दर पर सायल बन कर आऊं,
तुझ से माँगूं भीख सकूं[1] की, हो जाए तकमील जनूं[2] की!
आह भिखारन, वाह भिखारन!
आह न भर लिल्लाह भिखारन!

भिखारी की सदा

बात न पूछे बाबा कोई!
बात न पूछे कोई बाबा दर दर दी आवाज़,
क्या बजता है अब भी पापी यह जीवन का साज़!
तूफ़ाँ सर पर रात अँधेरी हरदम इक मँझधार!
मेरा प्याला नैया है और क़िस्मत खेवनहार!
बात न पूछे बाबा कोई!

यह गढ़ तारों के हमसाये[3], यह ऊंचे अस्थान,
यां मांगे पर भी मिलता है, कब भिक्षू को दान!
जिस को देखो दाता है औ' सब दाता हैं चोर,
इस नगरी में सब कोई बाबा पक्का लाल कठोर,
बात न पूछे बाबा कोई!

चांद सितारे लानत भेजें, सूरज दे धत्कार,
बैठे-बैठे ध्यान में मुझ को धक्के दे संसार।
माया बिन जीवन है जग में जीवन का अपमान।
माया ही जंजाल है बाबा, माया ही निर्वान!
बात न पूछे बाबा कोई!

---

[1]शांति। [2]उन्माद की पूर्णता। [3]पड़ोसी।

मीरा जी

राशिद और फ़ैज़ के साथ मीरा जी भी उर्दू कविता के अति आधुनिक युग के बानी हैं। राशिद और फ़ैज़ गीतों की इस धारा से प्रभावित नहीं हुए, परन्तु मीरा जी ने कविताओं की भाँति गीत भी बड़ी संख्या में लिखे हैं। अब तक इस नए रंग में हर तरह की शायरी की जाती थी, पर मुक्त छंद में लिखी जानेवाली रहस्य-रोमेंस तथा वेदनामय गीतों का अभाव था। मीरा जी ने उसे पूरा किया है और इन्साफ़ तो यह है कि बड़ी सफलता से पूरा किया है।

मीरा जी का वास्तविक नाम बहुतों को ज्ञात नहीं। उर्दू संसार में आप इसी नाम से प्रसिद्ध हैं और नज़्मों तथा गीतों के अतिरिक्त पुराने देशीय तथा विदेशीय कवियों पर लेख लिखने और उनकी कविताओं का हिन्दुस्तानी कविता में अनुवाद करने में आपने ख़ूब नाम पाया है।

लाहौर की प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका "अदबी दुनियाँ" के सम्पादन-विभाग से आप आल इंडिया रेडियो, दिल्ली पहुँचे और वहाँ से कई दूसरे साहित्यिकों की भाँति बम्बई। आजकल आप बम्बई में हैं। आपके गीतों के तीन संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

चल-चलाव

तुम दूर ही दूर से देखो हमें,
हम दूर ही दूर से देखें तुम्हें,
योंही नाव बहे, नदिया भी बढ़े, बढ़ते बढ़ते सागर से मिले।

आए न किनारा पास कभी,
हों पूरी न दिल की आस कभी,
कोई आह भरे, कोई चुप ही रहे, ज्यों फुलवारी में हो फूल खिले।

तुम दूर ही दूर से देखो हमें,
हम दूर ही दूर से देखें तुम्हें,

सच बात यह है हमें प्रीत नहीं,
जहाँ हार नहीं, वहाँ जीत नहीं,
अब जो भी सुने, चाहे तो हँसे, चाहे तो कहें क्या बात कहीं।

आकाश पै तुम इक तारा हो,
चाहे और का चाहे हमारा हो,
यह बात पहेली बिन बूझी, जब बूझ चुके तब मान कही।

जब ऐसी निर्बल कामना हो,
संजोग से कैसे सामना हो,
जो दुख आए सहता जाए; प्रेमी का दोष यह अपना है।

हम ऐसा भूला भूलते हैं,
जो बीत चुके उसे भूलते हैं,
यह ज्ञान यह ध्यान है रखवाला हर बात यहाँ की सपना है।

एक तस्वीर

सोलह सिंगारों से सज कर इक गोरी सेज पर बैठी है।
प्रीतम आए नहीं, आएँगे, चुपके रस्ता तकती है।

लाख लगा कर पाँव सजाए जगमग जगमग करते हैं,
प्रेमी[1] का दिल, गर्म उबलते, वहशी .खूं से भरते हैं।
नयनों में काजल के डोरे अंग-अंग बरमाते हैं।
नन्हे, काले-काले बादल जग पर छाए जाते हैं।

माथे पर सेंदुर की बिंदी या आकाश पै तारा है,
देख के आजाएगा जो भूला भटका आवारा है।
नर्म, रसीले, साफ़ फिसलते, गाल पै तिल का भँवरा है,
रोम-रोम उस मदमाती का जैसे सँवरा-सँवरा है।

कानों में दो बूँदे, जैसे नन्हे-मुन्ने झूले हैं,
चंचल, अचपल सुंदरता के सुख में सब कुछ भूले हैं।
चूड़ा बेल बना लिपटा है, बाहें मानों डाली हैं,
बेल औ' डाली की रूहें यों मस्त हैं, मद मतवाली हैं।

लेकिन पीतम आए नहीं, आएँगे, आ जाएँगे,
इंद्रनगर की ख़ुशियों वाली बस्ती में ले जाएँगे।

पाँवों की पाज़ेबें[2] फिर प्रेमी का राग सुनाएँगी!
मीठे लम्हों की बातों के गीतों से बहलाएँगी!

(१)

जब आते हुए रोका न तुम्हें, फिर जाते हुए क्या रोकेंगे?
जब झोंका हवा का आता है,
पत्ती-पत्ती को हिलाता है,

---

[1] उर्दू में प्रेमी प्रेम करने वाले को कहते हैं जो चाहे नारी हो चाहे पुरुष और प्रीतम वह जिससे प्रेम किया जाए। [2] पायलें।

औ जब फुलवारी झूम उठे, जैसे आता है जाता है !
जब आते हुए रोका न तुम्हें, तब जाते हुए क्यों रुकेंगे ?

(२)

जब रात जगत पर छाती है,
तारों की सभा जमाती है,

सब आँखमचोली खेलते हैं, जब आए सवेरा जाती है !
जब आते हुए रोका न तुम्हें, फिर जाते हुए क्यों रोकेंगे ?

(३)

आती रुत कोई न रोक सका,
जाती रुत कोई न रोक सका,

जग में दिल का दुख, दिल का सुख लाती रुत कोई न रोक सका !
जब आते हुए रोका न तुम्हें, तब जाते हुए क्यों रोकेंगे ?

(४)

यह आना जाना बहाना है,
और पल का मिलना फ़साना है,

जो आए पिए, पीकर चलदे, जीवन ऐसा मैख़ाना है !
जब आते हुए रोका न तुम्हें, तब जाते हुए क्यों रोकेंगे ?

प्रिय से कैसे बात करे

प्रिय से कैसे बात करे !
जी ही जी में डरे !

कहे से जाने क्या कोई समझे,
अच्छे को भी बुरा कोई समझे,
जग की आँख न देखे गुण को,

खोटे इसको खरे !
प्रिय से कैसे बात करे !
सूखे ताल जब बरखा जाए ,
जीं से सावन रीत भुलाए ,
पीत की रीत अनोखी देखी, नयन भरे के भरे !
प्रिय से कैसे बात करे !

आप बनाए आप ही उलझे ,
उलझे तो सुलझाए सुलझे ,
दूर-दूर से देखे सपने ,
किस पर दोष धरे !
प्रिय से कैसे बात करे !

जग जीवन है चंचल नारी ,
इसका खेल है हर दम जारी ,
कोई जीते, अमर हो जाए ,
कोई हारे मरे !
प्रिय से कैसे बात करे !
दाता से यही माँगे भिखारी ,
पल में महक उठे फुलवारी ,
प्यासे पहुँचे मंजिल पर, फल फूलें पात हरे !
प्रिय से कैसे बात करे !

उजाला

आशा आई सारे मन के दुख मुझ को इक पल में भूले ,
मनमंदिर में, सुख-संगत ने ऐसी उमंगें आन जगाईं ,
जैसे कोई सावन रुत में फुलवारी में झूला झूले !

कोमल लहरें मेरे मन में एक अनोखी शोभा लाईं,
जैसे ऊँचे-नीचे सागर में दो कूंजें[1] उड़ती जाएँ,
मधु रुत का ज्यों समा सुहाना मन को चंचल नाच नचाए!
हैरानी है, मेरे मन में ऐसी बातें कहाँ से आईं!
मन सोया था, सोए हुए को कौन पुकारे! कौन जगाए!
जैसे कोई नवजीवन का हरकारा[2] संदेसा लाए!
जिस के मन में आशा आए, बस वही समझे, वही बताए!

रात की अनजान प्रेयसी

मैं धुँधली नींद में लिपटा था, सो पर्दों से वह जाग उठी,
हलके-हलके बहती आई औ' छाई मीठी ख़ुशबू-सी!
बारीक दुपट्टा सिर पै लिए, औ' अंचल को क़ाबू में किए,
चंचल नयनों को ओट दिए, शरमीला घूँघट थामे थी!
निर्दोष बदन इक चंद्रकिरण, उठता जोबन, बस मन-मोहन,
मैं कौन हूँ, क्या हूँ, क्या जाने? मन बस में किया औ' भूल गई!
जब आँख खुली औ' होश आया, तब सोच लगी, उलझन-सी हुई,
फिर गूँज सी कानों में आई, यह सुन्दरि थी सपनों की परी!

संयोग

दिन ख़त्म हुआ, दिन बीत चुका।
धीरे-धीरे हर नज्मे-फ़लक इस ऊँचे-नीचे मंडल से
चोरी-चोरी यों देखता है,
जैसे जंगल में कुटिया के इक सीधे-सादे द्वारे पर
कोई तनहा, चुपचाप खड़ा, छिप कर घर से बाहर देखे।

---

[1]पक्षी विशेष। [2]दूत।

जंगल की हर इक टहनी ने सब्ज़ी छोड़ी, शर्मा के छिपी तारीकी में।
औ' बादल के घूँघट की ओट से हो तकते-तकते चंदा का रूप बढ़ा !

यह चंदा—कृष्ण, सितारे हैं—झुरमुट वृंदा की सखियों का !
यह ज़ुहरा नीले मंडल की राधा बन कर क्या आई है ?
क्या राधा की सुन्दरता चाँद बिहारी के मन भाएगी ?
जङ्गल की घनी गुफाओं में जुगनू, जगमग करते, जलते बुझते चिंगारे हैं !
औ' झींगुर ताल किनारे से गीतों के तीर चलाते हैं,
नग़मों में बहते जाते हैं।

लो' रात की दुल्हन जो शर्माती थी, अब आ ही गई।
हर हस्ती पर अब नींद की गहरी मस्ती छाई—ख़ामोशी !
कोयल बोली !—

औ' रात की इस तारीकी में ही दिल को दिल से मिलाए हैं
प्रेमी प्रेयसि !
हाँ हम दोनो !

मार्ग

मुझे चाहे न चाहे दिल तेरा, तू मुझ को चाह बढ़ाने दे,
इक पागल प्रेमी को अपनी चाहत के नग़में गाने दे !

तू रानी प्रेम-कहानी की, चुपचाप कहानी सुनती जा,
यह प्रेम की वाणी सुनती जा, प्रेमी को गीत सुनाने दे !

गर भूले से तू इस जज़्बे का, गीत जवाबी गा बैठी,
यह जादू सब मिट जाएगा, इस को जोबन पर आने दे !

हाँ, जीत में नश्शा कोई नहीं, नश्शा है जीत से दूरी में,
यह राह रसीली चलता हूं, इस राह पर चलता जाने दे !

मैखाने की चंचल

"कभी आप हँसो, कभी मैन हँसे,कभी नैन के बीच हँसे कजरा,
कभी सारा सुन्दर अंग हँसे, कभी अंग रुके, हँस दे गजरा।

यह सुन्दरता है या कविता, मीठी-मीठी मस्ती लाए,
इस रूप के हँसते सागर में डगमग डोले मन का बजरा!

क्या नाज़ अनोखे और नए सीखे इंदर की परियों से,
औ' ढंग मनोहर औ' ज़हरी सूझे सागर की परियों से।

यह मोहिनी मद मतवाली है, यह मयख़ाने की चंचल है,
वह रूप लुटाती है सब में पर आधे मुँह पर अंचल है।

पहले सपने में आती है, पाजेबों की झंकारों में,
फिर चैन चुरा कर तन-मन का, छिप जाती है सय्यारों[१] में।

---

१. सितारों।

अज़मत अल्लाह खां

श्री अख़तर हुसैन रायपुरी लिखते हैं—"स्वर्गीय अज़मत अल्लाह ने जब कविता शुरू की उस समय वे जवानी की चौखट पर खड़े थे, दूसरे नौजवानों की तरह उन के लिए भी दुनिया बाग़ां और बहारां के सिवा कुछ न थी। उन के दिल में भी रूप की प्यास थी। उन की कविता भी जवानी के रस में डूबी हुई है। लेकिन उस में एक दर्द है मीठा-मीठा, उस में एक कसक है आनंद देने वाली! उसे पढ़ने के बाद ऐसा मालूम होता है जैसे कोई नशा उतर गया; जैसे किसी ख़ूबसूरत चीज़ के पास से हम उठ कर चले आए हैं।"

उन के छंदों और उनकी कविता में करुण-रस के संबंध में मैं पहले लिख चुका हूं। यहां केवल इतना लिखना चाहता हूं कि अज़मत अल्लाह दिल्ली के निवासी थे, वहीं से डिग्री ली और हैदराबाद के शिक्षा-विभाग में इन्सपेक्टर नियुक्त हुए। आप के जीवन का उद्देश्य उर्दू-हिंदी को एक ही लड़ी में पिरोना था। किंतु मृत्यु ने इस होनहार युवक को हम से छीन लिया। अभी आपने २६ बहारें भी न देखी थीं कि १९२८ में आप का देहांत हो गया।

तुम्हें याद हो कि न याद हो

ये पड़ोसी हम, पै यह हाल था कि घरों में खिड़की बनाई थी।
ये अज़ीज़[1] हम, यह ख़याल था कोई शै[2] न हम में पराई थी।
तुम्हें याद हो कि न याद हो!

---

[1] प्रिय। [2] वस्तु।

वह जो खेलते थे हंसी-हंसी, हमें खेल की सभी बात थी,
न बुरी-बुरी, न भली-भली, यही धुन थी दिन, यही रात थी,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

वह लड़ाइयां भी कभी-कभी, कभी रूठना, कभी मन गए,
अभी कन्नियां तो मिलाप अभी, अभी चुटकियां, अभी क़हक़हे,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

वह हमारी आँख-मचोलियाँ, वह छिपों को ढूँढ़ निकालना,
यूँ ही नाचना, यूँ ही तालियां, यूँ ही हाथ पैर उछालना,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

वह तुम्हारी गुड़िया की शादियां, वह मेरा बरात का इंतज़ाम[1],
मेरा बाजा टीन का, सीटियां, बड़ा शोरो-गुल, बड़ी धूम-धाम,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

मेरा बन के काजी वह बैठना, कि बयान इस का फ़ज़ूल है,
मेरा पूछना वह कड़क के—'क्या मियां गुड्डे गुड़िया क़बूल है !'
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

तुम्हें उन्स[2] था तो मुझी से था, था लड़कपना पै यह हाल था,
मेरी बात ने तुम्हें ख़ुश किया, मेरा अपना दिल भी निहाल था,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

यों ही खेल-खेल के जब कभी, कोई दूल्हा बनता दुल्हन कोई,
मेरी तुम हमेशा बन्नो[3] बनी, बहुत इस पै उड़ती थी जो हँसी,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

---

[1] प्रबंध। [2] प्रेम। [3] नव-वधू।

हमें क्या खबर थी बसंत की, गए दिन भी औ' वह पड़ोस भी ,
था पढ़ाई से न चिंतित[1] जी, पड़ी यादे-तिफ़ली[2] पै ओस-सी ,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

मुझे दी पढ़ाई ने फिर निजात[3], लगी आने ब्याह की अक़्ल भी ,
मुझे याद आई पराई बात, वह तुम्हारी भोली-सी शक़्ल भी ,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

हुआ याद से मुझे जोश भी, पै यह याद ख्वाब की नक़्ल थी ,
न था इन दिनों कोई होश भी, गए दिन दिनों की शक़्ल भी ,
तुम्हें याद हो कि न याद हो !

बरसात

(मुक्त छंद में)

आए बादल काले--काले ,
झूमते हाथी मतवाले ,
उड़ते, फिरते, तुलते झुकते ,
एक अँधेरी देकर छाए ,
डेरे चार तरफ़ डाले ।

पवन के घोड़े सहमे ठिठके ;
जिस ने दिल पर बोझ सा रक्खा ,
गर्मी से दिल .घबराया ,
एक ख़ामोशी, सन्नाटा-सा ।

---

[1]निश्चिंत । [2] बचपन की स्मृति । [3] मुक्ति ।

वह आकाश के बिगड़े तेवर,
त्योरी पर बल-सा आया,
बरसेगा औ' बरसाएगा,
बिजली चमकी अंगारा-सी।

आग की नागन लहराई,
लहरिया काढ़ा, बेल बनाई,
भाप के दरिया में क़ुदरत[1] ने,
नूर[2] की मछली तैराई,
इधर-उधर तड़पी तड़पाई।

बादल बिखरे, नीला अंबर,
डूबते सूरज ने झाँका।
किरण सुनहरी, तिरछी-तिरछी,
बिखर हवा में, खुलती-खेलती,
मेघ का सारा रंग लिया,
आकाश पै इक आग लगाई।

नीला अंबर, तनहा सूरज,
रंग में डूबे हुए बादल,
खुली फुनगों में हलकी धूप।
धोई नहाई भूमि सुंदर,
सर पै सुनहरा-सा आँचल,
क़ुदरत का एक सुहाना रूप।

---

१ प्रकृति। २ ज्योति।

दिल न यहां लगाइए

दाम[1] में यां न आइए, दिल न यहां लगाइए,
जान मिली है इस लिए दुख में उसे गँवाइए!
उम्र हवा है कुछ नहीं, साँस में सब उड़ाइए,
दाम में यां न आइए, दिल न यहाँ लगाइए!

इसका इलाज कुछ नहीं, दिल में अगर वफ़ा[2] न हो,
फूल में जैसे रंग हो, बास का कुछ पता न हो!
दुःख उठाइये मगर, आह न लब पै लाइए,
दाम में यां न आइये, दिल न यहाँ लगाइए!

गोरख-धंधा

एक खलश-सी, एक चुभन-सी जिसमें मज़ा भी आता है,
जान की तह में बैठा है कुछ बेचैनी या खटका है।
चुटकियां बैठा लेता कोई, एक खटकता-सा कांटा,
एक खलश-सी एक चुभन-सी जिसमें मज़ा भी आता है।

साँस के झोंकों से यह शगूफ़ा[3] जान का जब तक खिलता है,
सुख-दुख का है गोरख-धंधा दिल का लंगर हिलता है।
कोई छिप कर दिल में इस वीणा के तार बजाता है,
एक खलश-सी, एक चुभन-सी जिसमें मज़ा भी आता है।

---

[1] जाल। [2] आसक्ति। [3] बिना खिली कली।

वह 'आज' हूँ जिसका 'कल' नहीं है

कोई शै बुरी भली नहीं है, कोई बात यां अटल नहीं है,
यह है ज़िन्दगी अजब पहेली, कोई इसका यां तो हल नहीं है।
वह हूं फूल, जिसका फल नहीं है! वह हूं 'आज', जिसका 'कल' नहीं है!

अभी कुछ न हुई थी सयानी, कि उठा बड़ों का सिर से साया,
तो ज़माने ने यह पलटा खाया, कि किसीको फिर न अपना पाया।

न खबर ज़रा भी ली किसी ने, पड़े अपने जान ही के लाले,
मेरे सामने खड़े थे फ़ाक़े[१], पड़ी क्या ग़रज़ किसी को, पाले।

यह कड़े दिलों की तोताचश्मी[२], मेरे दिल में तीर सी है बैठी,
गई मन के फूल की तरावट[३], उड़ी ओस की तरह से नेकी।

न रहा किसी पै कुछ भरोसा, न रहा कोई मेरा सहारा,
न रही किसी की मैं हो प्यारी, न रहा मेरा ही कोई सहारा!
वह हूं फूल, जिसका फल नहीं है! वह हूं 'आज', जिसका 'कल' नहीं है!

जिसे देखो अपने दाँव में है, चला दाँव और वह पछाड़ा,
कि यह ज़िन्दगी है एक कश्ती, यह जहाँ है इक बड़ा अखाड़ा।
वह हूं फूल जिसका फल नहीं है! वह हूं 'आज', जिसका 'कल' नहीं है।

मेरा वतन

मेरी जान हो कि मेरा बदन, तेरी जल्वागाह[४] है ऐ वतन[५]
तेरी खाक उनका खमीर[६] है!

---

[१]उपवास। [२]आखें फेर लेना। [३]ताज़गी। [४]जल्वे का स्थान, अर्थात् मेरी जान और मेरे शरीर में ऐ देश, तेरा ही रूप प्रकट है। [५]देश। [६]तेरी खाक से वे पैदा हुए हैं।

मेरे ख़ून में है झलक तेरी, मेरी नब्ज़[1] में है चमक तेरी,
मेरा साँस तेरा सफ़ीर है !

जिन्हें प्रीत के उन्हें जीत है, यही जग में जीत की रीत है,
तेरे दिल जिगर भी हैं बेवफ़ा[2] !

हमें ग़ैरियत[3] यह मिटानी है ! हमें जीत आप यह पानी है !
कि हो भाई-भाई से आशना !

मेरा जान हो कि मेरा बदन ! तेरी जल्वागाह है ऐ वतन,
तेरी ख़ाक उनका ख़मीर है !

---

[1]नाड़ी। [2]कृतघ्न, प्रेम-रहित। [3]दुराव।

श्री ख़ुशी मुहम्मद नाज़िर

श्री ख़ुशी मुहमम्द नाज़िर रियासत जम्मू और काश्मीर के मिनिस्टर और गवर्नर रहे। रिटायर होकर वे चक झुमरा, ज़िला लायलपुर, में आ गए। वहीं से उनकी कविताओं, क़सीदों और सेहरों का पहला संग्रह "नग़मए फ़िरदौस" के नाम से प्रकाशित हुआ।

वे न अपने सेहरों के लिये प्रसिद्ध हैं न क़सीदों और अन्य नज़्मों के लिये। उन्हें ख्याति उनकी कविता "जोगी" के कारण मिली। "जोगी" का आरंभ जैसा कि पाठक देखेंगे (अपनी अन्य कविताओं की भाँति) उन्होंने क्लिष्ट उर्दू में किया पर न जाने क्यों, कदाचित इसलिए कि उन्होंने एक हिंदू जोगी को अपनी कविता का विषय बनाया अथवा इसलिए कि उसमें जिन भावनाओं को व्यक्त किया वे हिंदू दर्शन से मिल जाती थीं, अथवा उनके मित्र हिंदू थे, दूसरे ही बंद से (जैसा कि पाठक देखेंगे) उनकी भाषा सरल हो गई और फिर तो वे इस भाषा के प्रवाह में बह गए।

श्री नाज़िर हिन्दू मुस्लिम दंगों से बड़े दुखी थे। उनकी इस व्यथा का प्रतिबिम्ब जोगी में है। देश में बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता की बीमारी को देखकर उन्होंने वर्षों पहले लिखा था—

काश शैख़ो बरहमन मिल कर करें कुछ रोक थाम,
वरना भारत पर कोई भारी अज़ाब आने का है!

उनकी यह भविष्यवाणी कितनी सच्ची साबित हुई!

जोगी

(भाग एक)

कल सुब्ह के मतलाए तावाँ से, जब आलम बुक़्आए नूर हुआ,
सब चाँद सितारे माँद हुए, खुरशीद का नूर ज़हूर हुआ!
मस्ताना हवाए गुलशन थी, जानाना अदाए गुलबन थी,
हर वादी वादिए ऐमन थी, हर कूचे पै जल्वए नूर हुआ!
जब बादेसबा मिज़राब बनी, हर शाखे निहाल रुबाब बनी,
शमशादो चनार रूबाब हुए, हर सरवो समन तम्बूर हुआ!
सब तायर मिल कर गाने लगे, मस्ताना वह तान उड़ाने लगे,
अशजार भी वज्द में आने लगे, गुलज़ार भी बज़्मे सरूर हुआ!
सब्ज़े ने बिसात बिछाई थी, और बज़्मे निशात सजाई थी,
बन में, गुलशन में आँगन में, फ़र्शे सिंज़ाबो समूर हुआ!

था दिलकश मंज़िरे-बाग़े जहाँ और चाल सबा की मस्ताना,
इस हाल में एक पहाड़ी पर जा निकला नाज़िर दीवाना!

चीलों ने झंडे गाड़े थे, परबत पर छावनी छाई थी,
ये खेमें डेरे बादल के, कुहरे ने कनात लगाई थी!
यां बर्फ़ के तोदे गलते थे, चाँदी के फ़व्वारे चलते थे,
चश्मे सीमाब उगलते थे, नालों ने धूम मचाई थी!
इक मस्त क़लन्दर जोगी ने, परबत पर डेरा डाला था,
थी राख जटा में जोगी की, औ' अंग भभूत रमाई थी!
था राख का जोगी का बिस्तर, औ, राख का पैराहन तन पर,
थी एक लँगोटी ज़ेबे कमर, जो घुटनों तक लटकाई थी!
सब खल्क़ खुदा से बेगाना, वह मस्त क़लन्दर दीवाना,
बैठा था जोगी मस्ताना, आँखों में मस्ती छाई थी!

जोगी से आँखें चार हुईं और झुक कर हमने सलाम किया,
तीखे चितवन से जोगी ने तब नाज़िर से यह कलाम किया!

क्यों बाबा नाहक़ जोगी को, तुम किस लिये आके सताते हो,
हैं पंख पखेरू बनबासी, तुम जाल में इन को फँसाते हो!
कोई झगड़ा दाल चपाती का, कोई दावा घोड़े हाथी का,
कोई शिकवा संगी साथी का, तुम हमको सुनाने आये हो!
हम हिरसो हवा को छोड़ चुके, इस नगरी से मुँह मोड़ चुके,
हम जो ज़ंजीरें तोड़ चुके, तुम लाके वही पहनाते हो!
तुम पूजा करते हो धन की, हम सेवा करते साजन की,
हम जोत जगाते हैं मन की, तुम उसको आके बुझाते हो!
संसार से यां मुख फेरा है, मन में साजन का डेरा है,
यां आँख लड़ी है प्रीतम से, तुम किस से आँख मिलाते हो!

यूं डांट डपट कर जोगी ने अब हम से यह इरशाद किया,
सिर उसके झुका कर चरणों पर जोगी को हमने जवाब दिया!

हैं हम परदेसी सैलानी, यूं आँख न हम से चुरा जोगी,
हम आये हैं तेरे दर्शन को, चितवन पर मैल न ला जोगी!
आबादी से मुँह फेरा क्यों, जंगल में किया है डेरा क्यों,
हर महफ़िल में, हर मंज़िल में, हर दिल में है नूरे खुदा जोगी!
क्या मस्जिद में क्या मन्दिर में, सब जल्वा है वजहुल्लाह[1] का,
परबत में नगर में सागर में, हर[2] उतरा है हर जा जोगी!
जी नगर में ख़ूब बहलता है, वां हुस्न पै इश्क़ मचलता है,
वां प्रेम का सागर चलता है, चल दिल की प्यास बुझा जोगी!
वां दिल का ग़ुँचा खिलता है, गलियों में मोहन मिलता है,

---

[1] ईश्वर के मुखमण्डल का। [2] ईश्वर।

चल शहर में संख बजा जोगी, बाज़ार में धूनी रमा जोगी!
फिर जोगी जी बेदार हुए इस छेड़ ने इतना काम किया,
फिर इश्क़ के उस मतवाले ने यह वहदत का इक जाम दिया!
इन चिकिनी चुपुड़ी बातों से, मत जोगी को फुसला बाबा,
जो आग बुझाई जतनों से, फिर इस पै न तेल गिरा बाबा!
है शहरों में ग़ुल-शोर बहुत, और काम क्रोध का ज़ोर बहुत,
बसते हैं नगर में चोर बहुत, साधों की है बन में जा बाबा!
हैं शहर में शोरिशे-नफ़सानी, जंगल में हैं जल्वए रूहानी,
है नगरी डगरी कसरत की, बन वहदत का दरिया बाबा।
हम जंगल के फल खाते हैं, चश्मों से प्यास बुझाते हैं,
राजा के न द्वारे जाते हैं, परजा की नहीं परवा बाबा!
सिर पर आकाश का मंडल है, धरती पे सुहानी मखमल है,
दिन को सूरज की महफ़िल है, शब को तारों की सभा बाबा!
जब झूम के याँ घन आते हैं, मस्ती का रंग जमाते हैं,
चश्मे तंबूर बजाते हैं, गाती है मलार हवा बाबा!
जब पंछी मिल कर गाते हैं, पीतम के संदेस सुनाते हैं,
सब के बरिहृ झुक जाते हैं, थम जाते हैं दरिया बाबा!
है हिरसो हवा का ध्यान तुम्हें, औ' याद नहीं भगवान तुम्हें,
सिल पत्थर-ईंट-मकान तुम्हें, देते हैं यह राह भुला बाबा!
परमात्मा की वह चाह नहीं, और रूह को दिल में राह नहीं,
हर बात में अपने मतलब के, तुम घड़ लेते हो खुदा बाबा!
तन मन को धन में लगाते हो, हर नाम को दिल से भुलाते हो,
माटी में लाल गँवाते हो, तुम बन्दए हिरसो हवा बाबा!
धन दौलत आनी जानी हैं यह दुनिया राम कहानी है,
यह आलम आलमे फ़ानी है बाक़ी है ज़ाते खुदा बाबा!

(भाग दो)

जब से मस्ताने जोगी का, मशहूरे जहां अफ़साना हुआ,
उस रोज़ से बन्दए- नाज़िर भी, फिर बज़्म में नग़मा सरा न हुआ।
कभी मंसबो जाह की चाट रही, कभी पेट की पूजापाट रही,
लेकिन यह दिल का कँवल न खिला, और गु़ुंच-ए-ख़ातिर वा न हुआ।
कहीं लाग रही, कहीं पीत रही, कभी हार रही, कभी जीत रही,
इस कलियुग की यही रीत रही, कोई बंद से ग़म की रिहा न हुआ।
यूँ तीस बरस जब तीर हुए, हम कारे जहाँ से सैर हुए,
था अहदे - शबाब सराबे-नज़र, वह चश्म-ए-आबे बक़ा न हुआ।
फिर शहर से जी उकताने लगा फिर शोक महार उठाने लगा,
फिर जोगी जी के दर्शन को नाज़िर इक रोज़ रवाना हुआ।

× ×

कुछ रोज़ में नाज़िर जा पहुँचा, फिर होशरुबा नज़्ज़ारों में,
पंजाब के गर्द ग़ुबारों से, कश्मीर के बाग़ बहारों में।
फिर बनबासी बैरागी का, हर सिम्त सुराग़ लगाने लगा,
बनिहाल के भयानक ग़ारों में, पंजाल की काली धारों में।
अपना तो ज़माना बीत गया, सरकारो में दरबारों में,
पर जोगी, मेरा शेर रहा, परबत की सूनी ग़ारों में।
वह दिन को टहलता फिरता था, इन कुदरत के गुलज़ारों में,
और रात को महवे-तमाशा था, अम्बर के चमकते तारों में।
बरफ़ाब का था इक ताल यहां, या चाँदी का था थाल यहां,
अलमास जड़ा था ज़मुर्रद में, यह ताल न था कोहसारों में।

तालाब के एक किनारे पर, यह बन का राजा बैठा था,
थी फ़ौज खड़ी दीवारों की, हर सिम्त बुलन्द हसारों में।
यां सब्ज़ाओ-गुल का नज़ारा था, और मंज़र प्यारा-प्यारा था,
फूलों का तख्त उतारा था, परियों ने इन कोहसारों में।
यां बादे सहर जब आती थी, भैंरों का ठाठ जमाती थी,
तालाब रुबाब बजाता था, लहरों के तड़पते तारों में।
जब जोगी ज़ोशे-वहदत में, हर-नाम की ज़र्ब लगाता था,
इक गूँज सी चक्कर खाती थी, कोहसारों की दीवारों में।

इस इश्क़ो-हवा की मस्ती से, जब जोगी कुछ हुश्यार हुआ,
इस ख़ाकनशीं की ख़िदमत में, यूं नाज़िर अर्ज़ गुज़ार हुआ।

कल रश्के-चमन थी ख़ाके वतन है आज वह दश्ते बला जोगी,
वह रिश्ताए उल्फ़त टूट गया कोई तस्मा लगा न रहा जोगी।
बर्बाद बहुत से घराने हुए, आबाद हैं बन्दी ख़ाने हुए,
नगरों में है शोर बपा जोगी, गाँवों में है आहोबुका जोगी।
वह जोशे-जुनूं के ज़ोर हुए, इंसान भी डंगर ढोर हुए,
बच्चों का है क़त्ल रवा जोगी, बूढ़ों का है ख़ून हवा जोगी।
यह मस्जिद में और मन्दिर में, हर रोज़ तनाज़ा कैसा है,
परमेश्वर है जो हिन्दू का, वही मुस्लिम का है ख़ुदा जोगी।
काशी का वह चाहने वाला है, यह मक्के का मतवाला है,
छाती से तो भारत माता की, दोनों ने है दूध पिया जोगी।
है देश में ऐसी फूट पड़ी, इक क़हर की बिजली टूट पड़ी,
रूठे मित्रों को मना जोगी, बिछड़े बीरों को मिला जोगी।
कोई गिरता हो, कोई चलता हो, गिरते को कोई कुचलता हो,
सबको इक चाल चला जोगी, औ' एक डगर पर ला जोगी।

वह मैकदा ही बाक़ी न रहा, वह ख़ुश न रहा, साक़ी न रहा,
फिर इश्क़ का जाम पिला जोगी, यह लाग की आग बुझा जोगी।
परबत के न ख़ाली रूखों को, यह प्रेम के गीत सुना जोगी,
यह मस्त तराना वहदत का, चल देस की धुन में गा जोगी।
भक्तों के क़दम जब आते हैं, कलजुग के क्लेश मिटाते हैं,
थम जाता है सैले-बला जोगी, रूक जाता है तीरे क़ज़ा जोगी।

नाज़िर ने जो यह अफ़सानाए ग़म रूदादे वतन का याद किया,
जोगी ने ठंडी साँस भरी ओ' नाज़िर से इरशाद किया।

बाबा हम जोगी बनबासी, जंगल के रहने वाले हैं,
इस बन में डेरे डाले हैं, जब तक ये बन हरियाले हैं।
इस काम क्रोध के धारे से, हम नाव बचाकर चलते हैं,
जाते या मुँह में मगरमच्छ के, दरिया के नहाने वाले हैं।
है देश में शोर पुकार बहुत, और झूठ का है परचार बहुत,
वां राह दिखाने वाले भी, बेराह चलाने वाले हैं।
कुछ लालच लोभ के बंदे हैं, कुछ मकर फ़रेब के फंदे हैं,
मूरख को फँसाने वाले हैं, ये सब मकड़ी के जाले हैं।
जो देश में आग लगाते हैं, फिर उस पर तेल गिराते हैं,
ये सब दोज़ख का ऍधन हैं, ओ' नरक के सब यह नवाले हैं।
भारत के प्यारे पूतों का, जो ख़ून बहाने वाले हैं,
कल छायों में जिसकी बैठेंगे, वही पेड़ गिराने वाले हैं।
जो ख़ून ख़राबा करते हैं, आपस में कटकट मरते हैं,
यह बीर बहादुर भारत को, ग़ैरों से छुड़ाने वाले हैं।
जो धर्म की जड़ को खोदेंगे, भारत की नाव डुबो देंगे,
यह देस को डसने वाले हैं, जो साँप बग़ल में पाले हैं।

जो जीव की रक्षा करते हैं, औ' ख़ौफ़े ख़ुदा से डरते हैं,
भगवान को माने वाले हैं, ईश्वर को रिझाने वाले हैं।
दुनिया का है सिरजनहार वही, मौजूद वही मुख़्तार वही,
यह काबा, कलीसा, बुतख़ाना, सब डौल उसी के डाले हैं।
वह सब का पालनहारा है, यह कुनबा उसी का सारा है,
ये पीले हैं या काले हैं, सब प्यार से उसने पाले हैं।
कोई हिन्दी हो कि हजाज़ी हो, कोई तुर्की हो कोई ताज़ी हो,
जब छीर पिया इक माता का, सब एक घराने वाले हैं।
सब एक ही गत पर नाचेंगे, सब एकही राग अलापेंगे,
कल श्याम कन्हैया फिर बन में, मुरली को बजाने वाले हैं।
आकाश के नीले गुंबद में, यह गूँज सुनाई देती है,
अपनों को मिटाने वालों को, कल ग़ैर मिटाने वाले हैं।
यह प्रेम सँदेसा जोगी का, पहुँचा दो उन महापुरषों को,
सौदे में जो भारतमाता के, तन मन के लगाने वाले हैं।
परमात्मा के वह प्यारे हैं, और देस के चाँद सितारे है,
अंधेर नगर में वहदत की, जो जोत जगाने वाले हैं।

नाज़िर तुम भी यहीं आ बैठो और बन में धूनी रमा बैठो!
शहरों में गुरू फिर चेलों को कोई नाच नचाने वाले हैं।

सैयद मुतलवी फ़रीदाबादी

सैयद मुतलवी फ़रीदाबादी के सम्बन्ध में उर्दू के प्रसिद्ध गल्प-कार श्री राजिन्दर सिंह बेदी ने उनके संग्रह "हैय्या, हैय्या" की भूमिका में लिखा है कि वे कदाचित् उर्दू में पहले कवि हैं जिन्होंने जनता की 'आसों' और 'प्यासों' का इतने निकट से अनुभव किया है और उन्हें अपने गीतों के कलेवर में ढाला है।

जोश मलीहाबादी की भाँति मुतलवी के यहाँ भी हमारे देश के राजनीतिक जीवन का हर पेचोख़म नज़र आजाएगा। अंतर केवल यह है कि जहाँ जोश की आम भाषा अत्यन्त क्लिष्ट होती है वहाँ मुलतवी की बड़ी सरल और फिर निचले तबके से जोश की हमदर्दी बौद्धिक है लेकिन मुतलवी वास्तविक !

नाव खेने वाले मज़दूरों का गीत

ओ	ओ	ओ	ओ
हो	हो	हो	हो
लो	लो	लो	लो
ढो	ढो	ढो	ढो
चलो	चलो	चलो	चलो
बढ़ो	बढ़ो	बढ़ो	बढ़ो
चलो बढ़ो	चलो बढ़ो	चलो बढ़ो	चलो बढ़ो

नाव में बैठी राजा की नार, पातर नाचें बारम्बार ।
पायल देत रही झंकार, ढोलक बोले गिड़गिड़ तार ।
ताली बाजें, बाजे तार, गूँज रही नदिया, संसार ।
रानी के नाओ-खेवनहार, धूप में म्हारी नाओ मँझधार ।

चलो चलो बढ़ो बढ़ो

पेट की आग से नाव चले, चलो चले चलो चले ।
रस्सी के घिस्सों से छाती जले, कितनी जले चलो चले ।
मंज़िल पारेंगे दीवे बले, दीबे बले दी वे बले ।
कष्टी बुरे, अकष्टी भले, हमी बुरे वही भले ।

चलो चलो बढ़ो बढ़ो

सो गई नाव में कामिनि नार, नौकर चाकर भये तैयार ।
भादों की घाम जले संसार, हीरों की धरती बनी अंगार ।
चाबुक दोनों रहे फटकार, आगे टंडियल पीछे जमादार ।
रोको तो होवे पारामार, रौली करें हैं, होई उदार ।

चलो चलो बढ़ो बढ़ो

मज़दूरी करके पछताए, पछताए फिर करने आये ।
छाती कटाई पैर जलाये, रात हुई लई मेंहदीं लगाए ।
दिन निकले फिर करने आए, दो दो आने सबने पाए ।
दिन दिन पेट की आग जलाए, इस अगनी को कौन बुझाए ।

चलो चलो बढ़ो बढ़ो

कोई नाव पड़े सुख पाएँ, कोई रात दिना दुखियाएँ ।
मनमानी कोई अपनी दिखाएँ, कोई माँग कर दिल बहलाएँ ।

कोई पहन पहन मर जाएँ, कोई मरे पर कफ़न न पाएँ।
इस दुनिया को आग लगाएँ, बल्ली तोड़ें बेड़ा डुबाएँ।

चलो चलो बढ़ो बढ़ो

चलो..............चलो.........ब...ढ़ो..............बढ़ो ।
चलो............लो..........लो.... ..बढ़ो .... .ढ़ो.....ढ़ो ।
लो......लो........लो.....लो........ढ़ो........ढ़ो..... ढ़ो ।
ओ..........ओ..........ओ...........ओ............ओ ।
ओ...............ओ............. ..ओ...............ओ ।

ओ.........ओ

ओ !

सावन पिया बिन

सावनवा पिया बिन कित आवे चैन, कित आवे चैन चित्त कित पावे चैन
सावनवा पिया बिन कित आवे चैन !

मेहा बरसे झालें लेवे बरस बरस मोहे दुख देवे !
रूखों में अँम्बिया झूले लेवे कोयल कूके सुन मेरे बैन !

किस बिध आवे चैन !

सावनवा पिया बिन कित आवे चैन, कित आवे चैन चित्त कित पावे चैन
सावनवा पिया बिन कित आवे चैन !

पुकार पपीहे की गोली सी लागे पी पी कहकर मोसे भागे ।
मोरनियां लिये पीछे आगे नाचे मोर चलावे सैन ।

लगे सब दुख दैन !

सावनवा पिया बिन कित आवे चैन, कित आवे चैन चित्त कित पावे चैन।
सावनवा पिया बिन कित आवे चैन !

यह सैना है जग से न्यारी जिसके सिपाही नर औ नारी !
जेलके पंछी देश पुजारी देश के दुखं से सब बेचैन !
उनके न्यारे दिन औ रैन !

सावनवा पिया कित आवे चैन, कित आवे चैन चित्त कित पावे चैन !
सावनवा पिया बिन कित आवे चैन !

क्या वां भी सजन हैं देश की बातें वैसे ही दिन औ वैसी ही रातें,
वैसी ही धुन में कटत बरसातें क्या वां भी पी जागो दिन रैन !
क्या वां भी नहीं है साजन चैन,

सावनवा पिया कित आवे चैन, कित आवे चैन चित कित पावे चैन !
सावनवा पिया बिन कित आवे चैन !

धरती मां छाती से लगाले

पच्छम उमड़े बादल काले पूरब फैले धुएँ के गाले !
पटम हुए सब आँखो वाले कौन भला इस काल को टाले !
खांडे बाजें चमकें भाले नाग खड़े हैं जीभ निकाले !
तोपें खोल रही धम्माले तड़ तड़ तड़ तड़ गोली चाले !
बहने लागे खून के नाले कट कट गिरते गोरे काले !
सभी किसान हैं सभी ग्वाले सब मज़दूरी करने वाले !
आ ऊपर से कौन सम्हाले

तेरे ही बच्चे तेरे ही बाले
धरती मां छाती से लगा ले !

मेहनत में ये जुटने वाले रात दिना ये लुटने वाले !
दीन धर्म पर मिटने वाले जेलों में ये पिटने वाले !
शेरों जैसे डटने वाले अड़ कर फिर ना हटने वाले !
सूत बानाये बटने वाले, नाम ख़ुदा के रटने वाले !

इन मरतों को कौन बचाले
तेरे ही बच्चे तेरे ही बाले
धरती मां छाती से लगाले !

दोनों ओर किसानों के दल हैं मज़दूरों के किसानों के दल हैं !
भूखों और बदहालों के दल हैं मूरख औ' अनजानों के दल हैं !
छाए उन पर चालों के दल हैं गोरों पीलों कालों के दल हैं !
धन और दौलत वालों के दल हैं लच्छमी और मतवालों के दल हैं !
महजिद गिरजा शिवालों के दल हैं सब धोखों में किसानों के दल हैं,

इन धोखों से कौन निकाले
तेरे ही बच्चे तेरे ही बाले
धरती मां छाती से लगाले !

पंछी से

कब तक बोलेगा मीठे बोल समय है मूरख आज अमोल !
उठ औ' पिंजरे के पट खोल !
घध्घट करत अँध्यारी रात बम बरसत हैं सारी रात !
तू भी अपना शंख टटोल !

खोल के बाहर आजा पंछी पंख पवन में फैला पंछी !
पिंजरे में रह कर पंख न तोल !

जेल चला है देस-सिपाही

जेल चला है देस-सिपाही रानी तुझको छोड़ !

तेरी याद नहीं भूलेगी मन की बगिया में तू झूलेगी !
ठंडे सांस यहां तू लेगी दिल की कली वां ना फूलेगी !

पलक उठा मत दिल को तोड़,
मत दुगदा में मुँह को मोड़,

चला है तुझको छोड़ !

जेल चला है देस-सिपाही रानी मुझको छोड़ !

फिर अच्छे दिन आएँगे रानी बिछड़े फिर मिल जाएंगे रानी !
देश के बासी गाएंगे रानी झंडो को लहराएंगे रानी !

दो ही दिन की बात है प्यारी, पल्ला मेरा छोड़ !
मत दुगदा में मुँह को मोड़ ,

चला है तुझको छोड़ !

जेल चला है देस-सिपाही, 'रानी तुझको छोड़ !

सुबह के सितारे से

उमड़ते रहें तेरी किरणों के धारे यूँ ही जगमगाते रहें ये सितारे।
तेरे गो बहुत दिलरुबा हैं नज़ारे सुलाखों से ना झांक हमको प्यारे।

चमक, हां चमक सुबह के ओ सितारे !
हमेशा चमक सुबह के ओ सितारे !

हमें देखने में मज़ा क्या धरा है, मज़ा जेल में क्या जो आफ़त भरा है।
उन्हीं क़ैदियों का यह आफ़तकदा है, लगाते हैं जो शाम को गाके नारे।

लगाते हैं नारे वतन के दुलारे!
हमेशा चमक सुबह के ओ सितारे!

तुझे देख याद आगई इक हसीं की, खिली चाँदनी सी किसी नाज़नीं की।
कहीं तू न बिंदी हो उसकी जबीं की, जिसे मैंने पाया था जमुना किनारे।

किनारे जो हैं दिल में सरसब्ज़ सारे!
हमेशा चमक ओ सुबह के सितारे!

मगर बेमज़ा हैं ये रंगीन यादें, नहीं मइर में दिल वे ग़मगीन यादें।
न अब दे सकेंगी वे तस्कीन यादें, फ़रायज के कुछ और ही हैं इशारे।

इशारे कि आकाश के तोड़ो तारे!
हमेशा चमक ओ सुबह के सितारे!

वहां साज भी जिसके बासी हैं हमदम, उठाए मुसावाते आलम के परचम,
ज़रा देख इन शेरमरदों के दमखम, नघबरा किए जा तू इनके नज़ारे।

ग़रीबों के होने को है वारें न्यारे!
हमेशा चमक ओ सुबह के सितारे!

बंदी पंछी

कब यह खुलेगी काली खिड़की, कब पछी उड़ जाएंगे,
ऐसा मौसम कब आएगा उड़ उड़ कर जब गाएंगे!
इस पिंजरे की हर तीली सपने में आन जलाती है,
ध्यान से कब यह निकलेगी कब इससे रिहाई पाएंगे!

बरस रहे हैं आज तो हम पर ओले भी औ' पत्थर भी,
छितिज में हैं कुछ छितरे बादल उमड़ के वे भी आयेंगे!
आयेंगे औ' छा जायेंगे आकाश के कोने कोने में,
पवन चलेगी ऐसी पंछी सब पिंजरे खुल जाएंगे!

मानस-शक्ति

जब नाव भंवर में आती है और आके झकोले खाती है,
पतवार भी गिरकर ऐ साथी जब पानी में बह जाती है!
और नाव-खिवैया मल्लाह भी जब बल खाके गिर जाता है,
वह बल्ली जिस पर नाज़ां था जब ख़ुद उसको ले जाती है!
मायूसी के काले बादल से जब ओले पड़ने लगते हैं,
और आस निरास की दुनिया में जब एक तबाही आती है!
जब सभी मुसाफिर ऐ साथी मिल-मिल के गले से रोते हैं,
इंसानी ग़ैरत उठती है और ख़ुद शक्ती बन जाती है!
दीवाने भूतों की तरह से लहरों से इंसां लड़ते हैं,
यह अगनी मानस-शक्ती की नैया को पार लगाती है!

डाक्टर मुहम्मद दीन 'तासीर'

जब संग्रह का पहला संस्करण छपा था, डाक्टर मुहम्मद दीन तासीर एम० ए० ओ० कालेज अमृतसर के प्रिंसिपल थे। पिछले आठ दस वर्ष में उनके जीवन ने कई रंग बदले हैं। वे विलायत गए। उन्होंने एक अंग्रेज़ महिला से विवाह किया। वे जम्मू कालेज के प्रिंसिपल हुए। वे युद्ध के दिनों में एक बड़े ऊँचे सरकारी पद पर रहे। पाकिस्तान बन जाने पर वहां जाने को विवश हुए।

डा० तासीर में एक गुण है कि वे नौकरी पर हों या बेकार, लिखते रहे हैं। अपने दूसरे समकालीनों की भाँति दफ़्तरी उलझनों में फँस कर ख़ामोश नहीं हुए। इसके अतिरिक्त आजीविका के लिए जो भी करते हैं अपनी लेखनी पर उसका प्रभाव नहीं आने देते। उनकी कविता "दोराहे पर" जो उन्होंने अपनी अफ़सरी के दिनों में लिखी, मेरे इस कथन का प्रमाण है।

जहां तक उनके गीतों अथवा गानों से मिलती-जुलती कविताओं का सम्बन्ध है, सीधी सादी रसीली भाषा और भावों की उड़ान उनका विशेष गुण है।

कब आओगे प्रीतम प्यारे

कब आओगे प्रीतम प्यारे ! कब आओगे प्रेम द्वारे !
रह गए पाओं चलते-चलते, थक गईं आखें रस्ता तकते,
कब आओगे प्रीतम प्यारे !

एक किनारे महल तुम्हारा, एक तरफ़ हम प्रीत के मारे,
बीच में नदिया, तुंद[1] हवाएं, कैसे आएं, कैसे जाएं?
कब आओगे प्रीतम प्यारे?

फूल खिले हैं बाग़ में हरसू[2], दुनिया में फैली है ख़ुशबू,
ऊँची ऊँची हैं दिवारें, कब तक सिर दीवार से मारें?
कब आओगे प्रीतम प्यारे?

खाना, पीना, सोना कैसा? हँसना कैसा, रोना कैसा?
चार तरफ़ छाई है उदासी, घर में रह कर हैं बनवासी!
कब आओगे प्रीतम प्यारे?

देवदासी

बाल सँवारे माँग निकाले, दुहरा तेहरा आँचल डाले,
नाक पै बिंदी कान में बाले, जगमग-जगमग करनेवाले।
माथे पै चंदन का टीका, आँख में अंजन फीका-फीका।
शबगूं[3] काली काली आँखें, मदमाती, मतवाली आँखें,
जोबन की रखवाली आँखें।

आँख झुकाये लट छिटकाये, जाने किसकी लगन लगाए!
बिरह उदासी, दर्शन-प्यासी, देवादासी[4] नदी किनारे,
प्रेम द्वारे, तन मन हारे,
यों ही अपने आप खड़ी है! बुत बनकर चुपचाप खड़ी है!

---

[1]तेज़। [2]हर ओर। [3]रात की तरह काली। [4]देवदासी।

मान भी जाओ !

मान भी जाओ, जाने भी दो, छोड़ो भी अब पिछली बातें।
ऐसे दिन आते हैं कब-कब, कब आती हैं ऐसी रातें।
मान भी जाओ जाने भी दो !

देख लो वह पूरब की जानिब, नूर ने दामन फैलाया है।
शब की ख़िलअत[1] दूर हुई है, सूरज वापस लौट आया है।
मान भी जाओ, जाने भी दो !

जल-जल कर मर जाने वाले, परवानों का ढेर लगा है।
लेकिन यह भी देखा तुमने, शमअ का क्या अंजाम हुआ है ?
मान भी जाओ जाने भी दो !

मान भी जाओ, तुमको क़सम है, मेरे सर की अपने सर की।
तुमको क़सम है, मेरे दुश्मन, अपने उस मंज़ूर नज़र की।
मान भी जाओ जाने भी दो !

उसकी क़सम है, जिसकी ख़ातिर, यों तुम मुझको भूल गए हो !
भूल गए हो सारे वादे क़ौलो क़सम को भूल गए हो !
मान भी जाओ जाने भी दो !

अच्छा तुम सच्चे मैं झूठा, अच्छा तुम जीते मैं हारा।
क्या दुश्मन औ' किसका दुश्मन, झूठा था यह सारा क़िस्सा।
मान भी जाओ, जाने भी दो !

कब तक उसको याद करोगे ?

मेरी वफ़ाएं याद करोगे, रोओगे फ़रयाद करोगे।
मुझको तो बर्बाद किया है, और किसे बर्बाद करोगे !

---

[1]वह पोशाक जो सम्राट् की ओर से पुरस्कार में दी जाती है— यहां केवल वस्त्र से अभिप्राय है। दीप-शिखा।

हम भी हँसेंगे तुम पर एक दिन, तुम भी कभी फ़रयाद करोगे।
महफ़िल की महफ़िल है ग़मगीं, किस किस का दिल शाद[1] करोगे।
दुश्मन तक को भूल गए हो, मुझको तुम क्या याद करोगे?
ख़त्म हुई दुश्नाम तराज़ी[2], या कुछ और इरशाद[3] करोगे?
जाकर भी नाशाद किया था, आकर भी नाशाद करोगे?
छोड़ो भी 'आसीर' की बातें, कब तक उसको याद करोगे?

एकांत की आकांक्षा

मुझको तन्हा[4] रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो।
खुश रहता हूँ अच्छा हूँ मैं, दुख सहता हूँ सहने दो!
मुझको तन्हा रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो!
मेरे दिल की आग बुझा दी, आहें भरने वालों ने।
मेरी ठंडक खोदी है, इन उलफ़त करने वालों ने।
मुझको तन्हा रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो!
मुझको मुझसे छीन लिया है, मेरे अपने प्यारों ने।
टुकड़े-टुकड़े कर डाला है, प्रेम भरी तलवारों ने।
मुझको तन्हा रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो!
ढाँप लिया है मेरा तन मन, नाज़ुक नाज़ुक[5] पर्दों में।
छोड़ दो मुझको, दम घुटता है मेरा तुम हमदर्दों में।
मुझको तन्हा रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो!
क़ैद किया है तुमने मुझको उलफ़त के बुतख़ाने में।
महव[6] हुआ जाता हूँ मैं अब आप अपने अफ़साने में।
मुझको तन्हा रहने दो तुम अपने हाल में रहने दो!

---

[1]प्रसन्न। [2]गाली निकालना। [3]कहना (फ़रमाना) [4]एकाकी। [5]कोमल-कोमल। [6]मग्न।

चार तरफ़ से घेर लिया, मैं तुम में खोया जाता हूँ।
अब मैं अपनी आँखों से भी ओझल होता जाता हूँ।
मुझको तन्हा रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो!
मेरी इक तस्वीर ख़याली[1] तुमने आप बना ली है।
मुझको तुम से प्यार नहीं है, अपनी मूरत प्यारी है।
मुझको तन्हा रहने दो तुम, अपने हाल में रहने दो!

---

[1]काल्पनिक।

मक़बूल हुसैन अहमदपुरी

श्री मक़बूल हुसैन भक्ति-रस के कवि हैं। उन के हृदय में निरंतर एक स्निग्ध प्रेम, एक अपार भक्ति की नदी हिलोरें लेती रहती है। उर्दू के इस युग में यदि हम उन्हें 'भक्ति काल का कवि' कह दें तो बेजा नहीं। वही मिठास, वही श्रद्धा, तअस्सुब से बहुत दूर मिलाप की वही भावना—उन का गीत भक्ति-रस का एक निरंतर बहने वाल सोता है। इस के साथ ही प्रकृति का चित्रण करने में और देहात की सादा भावनाओं को ज़बान देने में भी श्री मक़बूल की क़लम ने गीतों के मोती बखेरे हैं। हिंदी के आप जितने समीप हैं उतने कम दूसरे उर्दू कवि हैं। आप की भाषा पर खड़ी बोली की अपेक्षा ब्रजभाषा और स्थानीय भाषा का अधिक प्रभाव है।

देश-विभाजन पर होने वाले हत्याकांड पर बहुतेरे कवियों ने लिखा है। 'मक़बूल' की रूह भी चुप नहीं रह सकी। उन्होंने किसी को बुरा-भला नहीं कहा, बस एक छोटा-सा गीत लिखा है जिसमें इस बबरता को देख कर कवि की विवशता को प्रकट किया है।

पहले पहल

पहले-पहल जब आँखों आँखों, तुमने अपना दरस दिया था,
कैसे कोई बतावे स्वामी, मन को तुमने मोह लिया था।
नई मुसीबत डाली तुमने, हँस कर आँख छिपा ली तुमने।
कोई जिए या मरे तुम्हें क्या ? अपनी बात बना ली तुमने !

पहले-पहल जब बात बात में जादू अपना तुमने किया था ;
कैसे कहूं तुमसे मैं स्वामी अपनी सुध-बुध भूल चुका था ।
नोखी[1] दशा बनाई तुमने अपनी धज सिखलाई तुमने ।
यह जी मिटे जले या फुनसे अब तो आग लगाई तुमने ।

पहले-पहल जब इन आँखों से मेंह का धारा फूट बहा था ;
प्रेम का सागर मेरे स्वामी, ख़ूब भरा था ख़ूब भरा था ।
सुख की नदी बहाई तुमने, जीवन नाव चलाई तुमने ।
यह अहसान भला क्यों भूलूं ? कश्ती पार लगाई तुमने !

पहले पहल जब तुमने स्वामी सिर पर मेरे हाथ रखा था ,
सुन लो, सुन लो भाग हमारा सोते-सोते जाग उठा था ।
अपने पाँव गिराया तुमने मुक्त किया अपनाया तुमने ।
अब क्या चाहूँ सब कुछ पाया, ईश्वर रूप दिखाया तुमने[2] !

पूरम पार भरी है गंगा

पूरम पार भरी है गंगा, खेवनहारे हौले-हौले ;
मेघ प्रेम का छाया मन में, प्रियतम बोल, पपीहा बोले ।
वर्षा रुत औ' रात अँधेरी, नाव प्रेम की खाय झकोले ।
सँभल सँभल रे प्रेम के जोगी, मन की गाँठ न कोई खोले ।
देख देख अनमोल समय है, अपने मन ही मन में रोले ।

[1]अनोखी । [2]अब तक हिंदी के जिस रूप ने उर्दू पर प्रभाव डाला है वह अधिकतर व्रज-भाषा है । आधुनिकतम हिंदी कविता को समझनेवाले हिंदी में बहुत कम मिलते हैं, फिर उर्दू की बात तो दूसरी है । मक़बूल साहब ने आवश्यकतानुसार हिंदी से मिलते-जुलते व्रज-भाषा की तर्ज़ के शब्द कम भी लिये हैं ।

नींद प्रेम की सबसे न्यारी, दुख सह ले फिर जी भर सो ले।
रीत यही है इस नगरी की, पहले मन की माया खो ले।

पपीहा और प्रेमी

जी बेकल, सीने में धड़कन, उलझे सिर के केस!
पता नहीं शीशे में दिल के लगी किधर से ठेस!
सुन रे पपीहे, प्रेम के पागल, प्रेमी का संदेस!

आप ही आप यह जी घबरावे, कहीं न आना-जाना,
अपने को भी भूल गए हम, जब से उन्हें पहचाना!
हां रे पपीहे, प्रेम के पागल, गा दे प्रेम का गाना!

फूल खिले फ़व्वारे छूटे, रंग-बिरंगी क्यारी,
फिरती है आँखों में जैसे किसी की सूरत प्यारी।
सँभल पपीहे, प्रेम के पागल, अब है तेरी बारी!

जब से दिल की दुनिया सूनी, सूना सारा देस,
ख़बर नहीं क्यों दिल ने आख़िर लिया बैराग का भेस?
सुन रे पपीहे, प्रेम के पागल, प्रेमी का संदेस!

मोहनी

देख मनोहर मुख मतवाला, भूला सब जादू बंगाला।
झुके नैन औ' लंबी पलकें, नेह की किरनें पलकों झलकें,
कान बचन को वाके तरसे, बातों बातों अमृत बरसे!
दाएं हाथ में थाल दया की, बाएं हाथ में धर्म की पोथी,
अगला पाँव बढ़े सेवा को, पिछला पाँव उठे पूजा को—
बिन सोए कोई सपना देखे, सीने से उर खींच के फेंके।
जग की शोभा उस का जीवन, औ' यह जीवन जस के कारन,

पाथर तज कोई वाको पूजे, नहीं नहीं ब्रह्मा को पूजे!
ब्रह्मा की सुंदरता है वह, नहीं मोहनी, ब्रह्मा है वह!

कवि

रात अँधेरी शाम साँवली; कव्वा देखो दूर से आता
पंख जोड़ कर इमली ऊपर भरे गले से है चिल्लाता
क्या जाने तब कौन मगन हो इस मेरे दिल में है गाता!

रात चाँदनी, शाम सुनहरी, चाँद आए औ' सूरज जाए,
नदी किनारे घाट के ऊपर, दूर बाँसुरी कोई बजाए,
क्या जाने तब रूठे मन को मिन्नत करके कौन मनाए?

रात अंधेरी औ' सन्नाटा, सन-सन चले हवा दक्खिन की,
पिछले पहर जब झील किनारे इक दम छेड़े राग तलहरी,
क्या जाने तब मेरे दिल में रह-रह लेवे कौन फरहरी?

रात चाँदनी और सवेरा, पानी दरिया का मुसकाता,
कोमल कलियाँ खोल के आँखें देखें ऊषा का रथ आता,
क्या जाने तब मेरे दिल में कौन मगन होकर है गाता?

पथिक से

मन की आँखें खोल, मुसाफ़िर, मन की आँखें खोल?
मन में बसे हैं दोनों आलम[1], देख न यह आलम हो बरहम[2],
यहां कभी है ऐश कभी ग़म, हँसता रह औ' रो भी कम-कम,
ऐश औ' ग़म की उठा तराज़ू, अक़्ल की पूँजी तोल,
मुसाफ़िर, मन की आँखें खोल!

[1]जगत। [2]उलट न जाएं। [3]आंसुओ।

दिन गुज़रा औ' निकले तारे, बजी बाँसुरी नदी किनारे,
फूट बहे अश्कों[1] के धारे, दहक उठे दिल के अंगारे,
सँभल-सँभल औ' दिल को बचा ले, मन न हो डाँवाडोल;

मुसाफ़िर, मन की आँखें खोल !

चीख़ रहे हैं लोग जहाँ के, खुल गए रस्ते यहां-वहां के,
गए वे दिन अब आहो-फ़ुग़ां के[2], उठ गए पर्दे कोनों-मकां के[3]
तू भी दिखा जीने के लच्छन, अब तो मुँह से बोल

मुसाफ़िर, मन की आँखें खोल !

देश विभाजन पर होने वाली बर्बरता को देख कर

वह गीत कहां से लाऊं !
जो भावनाओं की हल चल से !
तड़पाए और रुलाए,
रूठों को फिर से मनाए !
क्या अनबन थी समझाए,
वह गीत कहां से लाऊं !

वह गीत हो कैसे मुमकिन !
जो सख़्त दिलों को नर्माए,
फ़रहाद का तेशा बन जाए !
परबत से नहर बहाए,
जो बर्फ़ का तोदा है उनको !
गर्माए और घुलाए,
वह गीत कहां से लाऊं !

---

[1] निःश्वास और नाले। [2] संसार।

नसीहत

सुख की सुंदर सेज पै तुम ने सीखा मस्त पड़े रह जाना,
खाना, सोना, हँसना, गाना, चैन मनाना, जी बहलाना,
चाल चली दुनिया अलबेली, कोसों आगे बढ़ा ज़माना!

बुरा समय आराम में भूले सुस्ती में सीखा घबराना,
ग़ैरत[1] खोई, लाज गँवाई, रास न आया पलक लगाना,
चाल चली दुनिया अलबेली कोसों आगे बढ़ा ज़माना!

कब तक आखिर लगा रहेगा, यों अपनी औक़ात[2] गंवाना?
दिन भर फिरना शाम को आना, खाना, पीना औ' सो जाना?
चाल चली दुनिया अलबेली कोसों आगे बढ़ा ज़माया!

जहां ज़रा सी ज़िद पर जाकर, हो यों घर में आग लगाना,
ऐसे देस में ऐ 'मक़बूल' भला जीते जी है मर माना!
चाल चली दुनिया अलबेली, कोसों आगे बढ़ा ज़माना!

कोयल

सुंदर समय सुहाने दिन, आए वही पुराने दिन,
बोली कोयल 'कू-हू-कू'!
'कू-हू', 'कू-हू' की मुरली, बन बस्ती में बाज रही।
कोयल, कोयल, सुन तो सही, ऐसी क्यों बेचैन हुई?
कौन समाया है मन में? ढूँढ़ रही किस को बन में?
क्यों तू ने यह सोग किया? किस की खातिर जोग लिया?

---

[1] लज्जा। [2] हस्ती।

'कू-हू' 'कू-हू', 'कू-हू-कू' ,

ऐ पागल, बेली कोयल, जीवन क्या जो आए कल ?

तू सब कुछ, फिर भी नादान, जा अपना जीवन पहचान !

'कू-हू', कू-हू, कू-हू कू' !

'वक़ार' अंबालवी

'वक़ार' साहिब अब न गीत लिखते हैं, न नज़्में। उन्हें पत्रकारिता निगल गई। अपनी आश्चर्यजनक प्रतिभा को उन्होंने हंगामी नज़्में और वर्ष में ३६५ अग्रलेख लिखने में ख़त्म कर दिया। परन्तु एक ज़माना था जब उनके गीत और नज़्में बड़ी लोकप्रिय थीं। संतोष इतना है कि उनके अधिकांश गीतों को कोलम्बिया रिकार्ड कम्पनी ने रिकार्डों में भर सुरक्षित कर लिया है। हफ़ीज़ जालंधरी की भांति 'वक़ार' भी सीधी सरल भाषा में मर्मस्पर्शी गीत लिखने में निपुण हैं। उनके गीतों और नज़्मों में करुण और वीर रस दोनों का सम्मिश्रण है।

जीवन

यह जीवन एक कहानी है, कुछ कहता जा कुछ सुनता जा!
इस का अंत औ' आद नहीं है, पूरी किसी को याद नहीं है।
आँसू औ' मुसकान कहानी, कहते हैं सब अपनी बानी।
एक कहानी पाप औ' पुन, हँस कर कह या रोकर सुन!
यह जीवन एक कहानी है, कुछ कहता जा कुछ सुनता जा!

कूक पपीहे, कूक!

कूक पपीहे, कूक!
बादल गरजे रैन अँधेरी, सूनी-सूनी दुनिया मेरी,
जीना मेरा होगया दूभर, आँख लगे ना भूक!
कूक पपीहे, कूक!

तू बनबासी खुल कर रोए, मेरा रोना मुझे डुबोए !
तेरी तरह से नेह लगाया, चूक गई मैं चूक !
कूक पपीहे, कूक !
मैं भी अकेली, तू भी अकेला, मोह का सागर, दुख का रेला,
तेरे गले में पी का फंदा, मेरे मन में हूक !
कूक पपीहे, कूक !

पिया बिन नागन काली रात

पिया बिन नागन काली रात !
सेजें सूनी, रात अँधेरी, बालम है परदेस,
डर के मारे जिया निकसत हैं, कैसे हो परभात[1] ?
सखियां झूमें, मंगल गाएं, और तलें पकवान,
मैं मन मारे बैठ रही हूँ, धरे हात पर हात।
रैन अँधेरी, रूख भयानक, साएं साएं होत,
टहने उन के भूत बने हैं, नाग के फन हैं पात !
पिया बिन नागन काली रात !

उस पार

आओ चलें उस पार, साजन, आओ चलें उस पार !
जीवन-सागर लहरें मारे, वायू[2] चंचल, दूर किनारे,
मची है हाहाकार, साजन, आओ चलें उस पार !
अब के अपनी बनें खेवैया, दुख के भँवर से खेलें नैया,
काट चलें मँझधार, साजन, आओ चलें उस पार !

---

[1]प्रभात । [2]वायु ।

साँस का चप्पू कर दें धीमा, है समीप सागर की सीमा,
जहां है सुख का द्वार साजन, आओ चलें उस पार!

कौन बँधाए धीर ?

सखी, अब कौन बँधाए धीर ?

याद पिया की है कलपाती, नहीं रात भर निदिया आती,
हाय वे अँखियां मदमाती, वह मुखड़ा गंभीर!
फूटी क़िस्मत पलटा पासा, नैनन बरसे नीर!
सावन आया पड़ गए झूले, टपका नीम करेले फूले,
आवें याद जो मुझ को भूले, लगें कलेजे तीर!
छम-छम-छम-छम बादल बरसें, अँखियां रोएं औ' जी तरसे,
सखी अब कौन बँधाए धीर ?

आज की रात

प्रीतम, रह जा आज की रात!

आज की रात जियरा धड़के, आज की रात आँख भी फड़के,
जोड़ रही हूं हात प्रीतम, रह जा आज की रात!
बिजली कड़के बादल बरसे, आज की रात निकल नहीं घर से,
आज भरी बरसात, प्रीतम, रह जा आज की रात!
आज की रात जिया घबराए, आज की रात गई कब आए?
सुन जा मन की बात, प्रीतम, रह जा आज की रात!

जवानी के गीत

देर से गाना गानेवाले, दुनिया को भरमाने वाले!
दिल में चुटकी कब तक लेगा, दादे हसरत[१] कब तक देगा!
तेरा जादू टूट चुका है, आँख से आँसू फूट चुका है!
छोड़ दे अब यह 'आएं-वाएं', आ मिल गीत जवानी के गाएं!

हार चुके हैं रोने वाले, रो-रो कर जी खोनेवाले,
बीत चुकी है रात दुखों की, कौन सुने अब बात दुखों की,
हुआ सवेरा, दुनिया जागी, सुख का राग अलाप ऐ रागी!
दुख इस दुनिया से मिट जाएं, आ मिल गीत जवानी के गाएं!

दुनिया ओ' अक़बा[२] के धंधे, कुफ्र[३] ओ' ईमान[४] के फंदे,
आ, ओ' उन को तोड़ के रख दें, ग़म का मुक़द्दर[५] फोड़ के रख दें!
हूरो-सनम[६] की ज़ात न पूछें, दैरो हरम[७] की बात न पूछें,
शोख़ जवानी को अपनाएं, आ मिल गीत जवानी के गाएं!

मेहनत ओ' सरमाये[८] का झगड़ा, अपने और पराये का झगड़ा,
यह आक़ाई[९] और गुलामी[१०], इंसानी तदबीर की खामी[११],
गर्दिशे-दौरां[१२] को बदलें, आ तक़दीरे-जहां[१३] को बदलें!
दुनिया को आज़ाद कराएं! आ मिल गीत जवानी के गाएं!

मदमाती मख़मूर[१४] जवानी, चंचल ओ' मसरूर[१५] जवानी,

---

[१]आकांक्षा की प्रशंसा। [२]परलोक। [३]अधर्म। [४]धर्म। भाग्य। [६]स्वर्ग में। बसने वाले सुंदर युवक और युवतियां। [७]मंदिर और मसजिद। [८]पूँजी। स्वामित्व। [१०]दासता। [११]त्रुटि। [१२]संसार-चक्र। [१३]संसार का भाग्य। [१४]मस्त। [१५]प्रसन्न।

सदमों[1] को ठुकराने वाली, ग़म को आग लगाने वाली,
बेख़ौफ़ औ' बेबाक[2] जवानी, हर इक दाग़ से पाक जवानी,
हक़[3] है जिस के दाएं बाएं, आ मिल गीत जवानी के गाएं!

शक्ती से भरपूर जवानी, बल के नशे में चूर जवानी,
गोलों की बौछार में झूमें, तलवारों की धार को चूमें,
मौत से हंस कर लड़नेवाली, मौत के सिर पर चढ़नेवाली,
बरसाएं अमृत वर्षाएं! आ मिल गीत जवानी के गाएं!

मस्त औ' तुंदो तेज़[4] जवानी, गर्म और आतश-ख़ेज़[5] जवानी,
आँधी औ' तूफ़ान जवानी, रण-चंडी का मान जवानी,
चाल में जिसकी बिजली कड़के, ख़ौफ़ से जिस के दुनिया धड़के,
आ इस को हैजान[6] में लाएं, आ मिल गीत जवानी के गाएं!

तख़्त औ' ताज को जो ठुकरा दे, बख़्त[7] औ' बाज[8] को जो ठुकरा दे,
मन को ख़ुदी की लाग लगा दे, दुनिया में इक आग लगा दे,
तोड़ दे हर जंजाल के फंदे, फूंक दे सारे गोरख-धंधे,
उस के सुर से गला मिलाएं, आ मिल गीत जवानी के गाएं!

बच्चे की मौत पर

तू बिछड़ कर जायगा मां से कहां? ऐ नौनिहाल!
कौन पालेगा तुझे और कौन रक्खेगा ख़याल!
मीठी-मीठी लोरियां देगा तुझे रातों में कौन?
हां लगाएगा तुझे मेरी तरह बातों में कौन?
गोद में मचलेगा किस की किस से रूठेगा वहां?

---

[1]दुःखों। [2]निडर, उद्दंड। [3]न्याय। [4]उग्र, प्रचंड। [5]आग बरसाने वाली।
नोश। [7]भाग्य। [8]भाग्य-प्रदत्त धन।

सोएगा सीने में किस के, ऐ मेरे दिल, मेरी जां ?
तुझ को जन्नत की फ़िज़ाएं मेरे बिन क्या भाएंगी ?
रोएगा, जब मां की मीठी लोरियां याद आएंगी !
हूरो-ग़ुलमां[1] में वहाँ माना कि अन्नाएं भी हैं ?
जा रहा है जिस जगह तू, क्या वहां माएं भी हैं ?
कोख उजड़ी अपनी हम-चश्मों[2] में कहलाऊँगी मैं ?
आह ! अब किस मुँह से मेरी जान, घर जाऊँगी मैं ?
आ कि तुझ बिन बेक़रारो, मुज़्तिरो-नाला हूं[3] मैं,
आ, मेरा नन्हा है तू आ आ कि तेरी मां हूं मैं !

---

[1]स्वर्ग मे रहने वाले कम उम्र के युवक और युवतियां। [2]बराबर वालियां।
[3]बेचैन, उद्विग्न और दुखित।

अख़्तरुल ईमान

उर्दू के नये कवियों में अख़्तरुल ईमान का दर्जा बहुत ऊँचा है। आप दिल्ली निवासी हैं। आल इंडिया रेडियो में काम करने और अलीगढ़ में अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद आप पूना की फ़िल्म कंपनियों से होते हुए बम्बई जा पहुँचे हैं। लिखना उन्होंने कभी बंद नहीं किया। उनकी कविताएँ पहले अपनी मीठी मीठी दर्द, रुमान अंग्रेज़ी और हल्की सी अस्पष्टता के लिये प्रसिद्ध थीं पर अब न केवल वे स्पष्ट होती हैं बल्कि उनमें आशा की—उस आशा की जो इंसान से मायूस नहीं—किरण भी स्पष्ट झलकती है।

सीधी, सरल हिन्दी मिली भाषा में उन्होंने जो कविताएँ और गीत लिखे हैं वे उनके काव्य और व्यक्तित्व की हर झलक लिये हुए हैं।

शबनम के मोती

टूट गए शबनम के मोती टूट गए
बोझ पड़ा किरणों का

भोर की सेज से रात की रानी
गई बहाना करके—
साँझ पड़े पर लौट आऊँगी
तोर माँग में भरके !

टूट गए शबनम के मोती टूट गए
बोझ पड़ा किरणों का !

२

टूट गए शबनम के मोती टूट गए
बोझ पड़ा किरणों का !
सोए हुए हो उठो मुसाफ़िर
जागो हुआ सवेरा !
कहां के मोती कैसी शबनम
सब है मनका अँधेरा !

टूट गए शबनम के मोती टूट गए
बोझ पड़ा किरणों का !

काया

बूँद बूँद बह जाए लहू रहे न झूठी काया !
अनदेखे सागर की मौजें,
हुमक हुमक कर गाएँ।
नाव में सोए हुए मुसाफ़िर,
जागो तुम्हें जगाएँ ।

बूँद बूँद बह जाए लहू रहे न झूठी काया
पाप भँवर से नाव निकलकर,
ढूंढती जाय किनारा !
आँख से ओझल कोई खेवैया !
देता जाए सहारा !
बूँद बूँद बह जाए लहू रहे न झूठी काया !

जीवन-नौका

बहने दे यह जीवन-नौका यूंही ध्यान सहारे !

कभी किनारा मिल जाएगा ,
अभी न लंगर तोड़ ।
बहता चल लहरों के बल पर ,
नादाँ इसे न छोड़ ।

बहने दे यह जीवन नौका यूंही ध्यान सहारे !

रात की मकड़ी जाला बुनकर ,
खा गई सूरज रूप ।
रूप रंग की माया है सब ,
छाँव कहीं न धूप !

बहने दे यह जीवन नौका यूंही ध्यान सहारे !

अजनबी

तू है कच्ची कोंपल अब तक, जिसके लोच में प्यार ही प्यार !
औ' मैं गर्मी सरदी चक्खे, डाली पर इक तनहा पात !
तू सच्चा मोती मैं हीरा, फिरा जो बरसों हाथों हाथ !
तू ऊषा की पहली किरण है, औ' में जैसे भीगी बरसात !

तू तारों के नूर की धारा, मैं गहरा नीला आकाश !
मैं हूं जैसे टूटता शीशा, तू है जैसे शाख़ बनात !
तू है इक ऐसी शहनाई, जिस की धुन पर नाचे मौत !
तेरी दुनिया जीत ही जीत है, मेरी दुनिया छोड़ यह बात !

तू है एक पहेली जिसको जो बूझे वह जान से जाय !
तू है ऐसी मिट्टी जिससे लाखों फूल चढ़े परवान !

मैं तेरा अंग भी नां छूऊँ, छोड़ यह भेद भाव की बात !
मैं ने वह सरहद छू ली है, जहां। अमर हो जाएँ प्राण !
ऐ आँखों में खुबने वाली, जाने कौन कहाँ रह जाए !
जीवन की इस दौड़ में पगली, हम दोनों हैं आज अजान !
लेकिन ऐ सपनों की दुनिया, तू चाहे तो रोग मिटे !
मैं ने दुनिया देखी है, तू मेरी बातें झूठ न जान !

जीवन की इस दौड़ में पगली, याद अगर कुछ रहता है !
दो आँसू, इक दबी हँसी, दो जिस्मों की पहली पहचान !

याद

किसकी याद चमक उठी है, धुधँले खाके हुए उजागर ?
यूं ही चंद पुरानी क़ब्रें, खोद रहा हूँ चुपका बैठा ।
कहीं किसी का मास न हड्डी, कहीं किसी का रूप न छाया ।
कुछ कु.तबों पर धुँधले धुँधले, नाम खुदे हैं, मैं जीवन भर !

इन क़ब्रों, इन .कुतबों ही को, अपने मन का भेद बताकर।
मुस्तक़बिल औ हाल को छोड़े, दुख सहकर मैं कैसे फिरा हूं ।
माज़ी की घनघोर घटा में, चुपका बैठा सोच रहा हूँ।
किस की याद चमक उठी है, धुँधले खाके हुए उजागर !

बैठा क़ब्रें खोद रहा हूं, हूक सी बन कर इक इक मूरत ।
दर्द सा बन कर इक इक साया, जाग रहे हैं दूर वहीं से ।
आवाज़ें सी कुछ आती हैं, गुज़रे थे इकबार यहीं से ।
हैरत बन कर देख रही है, हर जानी पहचानी सूरत ।

गोया झूठ हैं ये आवाज़ें, कोई मेल न था इन सब से ।
जिनका प्यार किसी के मन में, अपने घाओ छोड़ गया है ।

जिनका प्यार किसी के मन से सारे रिश्ते तोड़ गया है।
औ' मैं पागल इन रिश्तों को बैठा जोड़ रहा हूँ कब से !
मेरी नस नस टूट रही है ऐसे दर्द के बोझ से जिसको,
अपनी रूह में लेकर मैं कैसे कैसे फिरता था हर सू।
लेकिन आज उड़ी जाती है, इस मिट्टी की सौंधी ख़ुशबू।
जिसमें आँसू बोए थे मैंने, बैठा सोच रहा हूँ जो हो।
इन कुतबों को इन क़ब्रों में दफ़नादूं औ' आँख बचा लूं !
इस मंज़र की तारीकी जो रह जाए वह ही अपना लूं !

नारस

नगर नगर के देस देस के, परबत टीले और बयाबाँ,
खोज रहे हैं अब तक मुझ को, खेल रहे हैं मेरे अरमाँ।
मेरे सपने मेरे आँसू, उन की छलनी छाँव में जैसे,
धूल में बैठे खेल रहे हों, बालक बाप से रूठे रूठे !

दिन के उजाले, साँझ की लाली, रात की अँधियारी से कोई।
मुझ को आवाज़ें देता है, आओ, आओ, आओ, आओ !
मेरी रूह की ज्वाला मुझ को, फूँक रही है धीरे धीरे,
मेरी आग भड़क उठी है, कोई बुझाओ कोई बुझाओ !

मैं भटका भटका फिरता हूँ, खोज में तेरी जिसने मुझ को
कितनी बार पुकारा लेकिन, ढूँढ न पाया अब तक तुझ को।
मेरे बच्चे मेरे बालक, तेरे कारण छूट गए हैं।
तेरे कारन जग से मेरे, कितने नाते टूट गए हैं।
मैं हूँ ऐसा पात, हवा में पेड़ से जो टूटे औ' सोचे।

धरती मेरी गोद है या, घर यह नीला आकाश जो सिर पर।
फैला फैला है, औ' इसके सूरज चाँद सितारे मिल कर।
मेरा दीप जला भी देंगे, या सबके रूप दिखा कर।
एक एक कर खो जाएंगे, जैसे मेरे आँसू अकसर।
पलकों में थर्रा थर्रा कर, तारीकी में खो जाते हैं।
जैसे बालक माँग माँग कर, नये खिलौने सो जाते हैं!

अनजान

तुम हो किस बन की फुलवारी अता पता कुछ देती जाओ!
मुझ से मेरा भेद न पूछो, मैं क्या जानूं मैं हूं कौन?

चलता फिरता आ पहुँचा हूं राही हूं, मतवाला हूं,
उन रंगों का जिन से तुमने अपना खेल रचाया है,
उन रंगों का जिन से तुमने अपना रूप सजाया है,
उन गीतों का जिनकी धुन पर नाच रहे हैं मेरे प्राण,
उन लहरों का जिनकी रौ में डूब गया है मेरा मान,
मेरा रोग मिटाने वाली, अता पता कुछ देती जाओ,
मुझ से मेरा भेद न पूछो, मैं क्या जानू मैं हूं कौन?

मैं हूं ऐसा राही जिसने, देस देस की आहों को,
ले लें कर परवान चढ़ाया, और रसीले गीत बुने,
चुनते चुनते जग के आँसू, अपने दीप बुझा डाले,
मैं हूं वह दीवाना जिसने, फूल लुटाए खार चुने,
मेरे दीपों औ' फूलों का, रस भी सूख गया था आज,
मेरे दीप अँधेरा बन कर, रोक रहे थे मेरे काज,
मेरी जोत जगानेवाली, अता पता कुछ देती जाओ!
मुझ से मेरा भेद न पूछो, मैं क्या जानूं मैं हूं कौन?

एक घड़ी इक पल भी सुख का, अमृत है इस राही को,
जीवन जिस का बीत गया हो काँटों पर चलते चलते,
सब कुछ पाया प्यार की ठंडी छाँव जो पाई दुनिया में,
उस ने जिस की बीत गई हो बरसों से जलते जलते,
मेरा दर्द बटानेवाली अता पता कुछ देती जाओ!
मुझ से मेरा भेद न पूछो, मैं क्या जानूं मैं हूँ कौन?

बहती घड़ियां

मैं फिर काम में लग जाऊँगा आ फ़ुरसत है प्यार करें,
नागिन सी बल खाती उठ औ' मेरी गोद में आन मचल!
भेद भाव की बस्ती में कोई भेद भाव का नाम न ले,
हस्ती पर यों छा जा बढ़ कर शरमिंदा हो जाए अजल!
जिसकी तुंद लपट में कितने हरे भरे मैदान आए,
जिसकी तेज़ लपट में अब तक आ गए कितने फूल औ फल!
छोड़ यह लाज का घूँघट कब तक रहेगा इन आँखों के साथ,
चढ़ती रुत है ढलता सूरज खड़ी खड़ी यूं पाँव न मल!
फिर यह जादू सो जाएगा, समय जो बीता, गहरी नींद,
जो कुछ है अनमोल है अब तक, इक इक लमहा इक इक पल!
बन प्यारी मिट्टी की ख़ुशबू उसका ·सोंधा सोंधापनस,
सब कुछ छिन जाएगा इक दिन अब भी वक़्त है देख सम्हल!
नर्म रगों में मीठी मीठी टीस जो यह उठती है आज,
बढ़ती मौज का रेला है, फिर टीस न इक उट्ठेगी कल!
मस्त रसीली आँखों से यह छलकी छलकी सी इक शै,
सने आज उठाया जिसको समझो उसके भाग सफल!

मैं तेरे शोलों से खेलूं, तू भी मेरी आग से खेल,
मैं भी तेरी नींद चुराऊं, तू भी मेरी नींदें छल!
नर्म हवा के झोंकों ही से खुलती है फूलों की आँखें,
वरना बरसों साथ रहे हैं ठहरा पानी बन्द कँवल!

शाम

सूरज डूबा पच्छिम देस में चौंकी रात की रानी,
लौटे थक थक पंख पखेरू कर करके मन मानी!

कर कर के मनमानी लौटे,
जग साथो जग बैरी!
अपनी बात का मोल ही क्या है,
अपनी बात जो ठहरी!

सूरज डूबा पच्छिम देस में, चौंकी रात की रानी,
साँच को आँच नहीं यह सच है, किसने बात यह मानी!

ओढ़ के तुम भी आजाओ अब,
गोधूली की बेला!
बैठके हम तुम भी हँस रो लें,
जीवन है इक मेला!

सूरज डूबा पच्छिम देस में चौंकी रात की रानी,
तक तक सोएँ राह किसी की कलियां धानी धानी!
सूरज डूबा पच्छिम देस में चौंकी रात की रानी!

सुबह

सूरज निकला रैन भँवर से,
किरणें उठीं लजाती!

जाग जाग री नींद की माती,
नैन कँवल से रस टपकाती !
गूँज गूँज लगे भँवरे आने,
बेबस कलियों को बहकाने !
सूरज निकला रैन भँवर से,
किरणें उठी लजाती !

सूरज निकला रैन भँवर से,
किरणें उठी लजाती !
छम छम करती छन छन करती !
कली कली से अनबन करती !
रस सागर में नहाती आई,
सुबह नाचती गाती !
सूरज निकला रैन भँवर से,
किरणें उठी लजाती !

२६ जनवरी १६३० की याद में

हैं ज़ख़्म वही अंगूर वही रिसता है अभी नासूर वही !
बरसात की वह घनघोर घटाएँ, जाड़ों की तन्हा रातें
जेल की वहशी दीवारें, मायूस अज़ीज़ों[1] की यादें !
ग़ैरों के वह सब जैरो सितम[2], वह रंजों मुहब्बत[3] वह फ़रयादें मे !
ऐ यौमे मुक़द्दस तेरी क़सम, भूला मैं नहीं उन यादों को !

---

[1]निराशसम्बंधियों की यादें । [2]अत्याचार । [3]दुख । व्यथा [4]पवित्र दिन ।

हैं ज़ख्म वही अंगूर वही, रिसता है अभी नासूर वही !
और भूल सके कोई कैसे, वह दर्दभरी बिपता सारी !
थीं कितनी जानें भेट चढ़ीं, जब इस ने आज़ादी पाई !
आई वह किसी की महफ़िल में पर हमको झलक कब दिखलाई !
आज़ादी मिली नव्वाबों को, राजाओं को, शहज़ादों को !
हैं ज़ख्म वही, अंगूर वही, रिसता है अभी नासूर वही !

आज़ाद हुए सारे टोड़ी, दुखिया हैं मगर इंसान सभी !
आज़ाद हुए हैं मिल मालिक, आज़ाद हुए धनवान सभी !
मज़दूर की लूट है उतनी ही हैं, उसके लिये अनजान सभी !
जब जेल वही मक़्तल[१] भी वही, फिर कोसिए किन जल्लादों को !
हैं ज़ख्म वही, अंगूर वही, रिसता है अभी नासूर वही !

ऐ रावी के जल की धारा, हो याद तुझे वह नज़्ज़ारा !
वह जोश से झंडा लहराना, जनता की गर्ज वह जयकारा !
वह अहद, वह पैमान, और वह क़सद अपना है अभी वह भी नारा !
हैं ज़ख्म वही, अंगूर वही, रिसता है अभी नासूर वही !

---

[१]वधस्थल ।

क़तील शफ़ाई

श्री क़तील शफ़ाई सीमाप्रान्त (पाकिस्तान) के गाँव हरिपुर (हज़ारा) के रहने वाले हैं। वे अभी जवान हैं। उनकी शायरी की उमर भी ज़्यादा नहीं पर इतने ही अर्से में उनकी कविता कई धाराओं में बह निकली है। उनके गीत सीधे, सरल और गीतितत्व से भरपूर हैं।

दानी से

दान तेरे सब झूटे !
दानी,
दान तेरे सब झूटे !

भिक्षा माँगे भूखी धरती,
मरती क्या ना करती !
तब सींचा है बाग़ को तूने,
सड़ गए जब गुल-बूटे !
दानी,
दान तेरे सब झूटे !

तू माया का जाल बिछाए,
भूकों को उलझाए !
तू इतना अहसान जताए,
बिजली उन पर टूटे !

दानी,
दान तेरे सब झूटे !
अन्न जल तेरे घर के चाकर,
हम सोएँ ग़म खाकर !
तोता छीने माशा बाटे,
वह भी हम से लूटे !
दानी,
दान तेरे सब झूटे !

साजन चला गया

सावन चला गया,
झूले उतार कर मेरा साजन चला गया !
सावन चला गया !
उड़ती हुई वह बदली जाने किधर गई,
आई गुज़र गई !
बरसे बिना पलट कर आकाश पर गई,
क्या ज़ुल्म कर गई !
दुनिया बदल गई है कि साजन चला गया,
सावन चला गया !
साजन गया है जब से झूले उतार कर,
सावन गुज़ार कर !
रोती हूं रात दिन मैं उसको पुकार कर,
दुखड़ों से हार कर !
मेरे सुखों का तोड़ के दर्पण चला गया,
सावन चला गया !

नयनों में नीर छलके आँसू बहाऊं मैं,
सदमें उठाऊँ मैं!
परदेस जानेवाले तुझ को बुलाऊं मैं,
क्या चैन पाऊँ मैं!
जब तेरे साथ साथ मेरा मन चला गया!
सावन चला गया!

मेरा दुपट्टा

मेरा दुपट्टा लहरा रहा है,
सावन का बादल याद आ रहा है!

प्रीतम ने मुझको मलमल मँगादी,
मेरी ख़ुशी की दुनिया बसा दी!
रंग इस की ख़ातिर मैंने मँगाया,
अबरक मिला कर इसको लगाया!

तारे फ़िज़ा में चमका रहा है,
मेरा दुपट्टा लहरा रहा है!

हल्का गुलाबी रंग इस पै आया,
जैसे शफ़क़ का पानी में साया!
जैसे फ़िज़ा में शोला सा भड़का,
जैसे किसी ने सेन्दूर छिड़का!

रंगत पै अपनी इतरा रहा है,
मेरा दुपट्टा लहरा रहा है!

शीशम के पत्तो, इस को हवा दो,
सूरज की किरणों, इस को सुखा दो;

आए न इस में कोई खराबी,
पहले था गोरा अब हो गुलाबी !

रंगी किनारे दुहरा रहा है,
मेरा दुपट्टा लहरा रहा है !

पायल मँगा दो

मोहे चाँदी की पायल मँगा दो सजन !

खाली पैरों से पनघट को क्या मैं चलूं !
अपनी सखियों को देखूं तो मन में जलूं !
वह तो नाचें मैं शरमा के मुंह फेर लूं !

मोहे पनघट की रानी बना दो सजन !
मोहे चाँदी का पायल मँगा दो सजन !

कल को मेला लगेगा सजन गाँव में !
होगी झंकार हर आम की छाँव में,
फिर तो काँटे चुभेंगे मेरे पाँव में,

मोरे पैरों में चाँदी बिछा दो सजन !
मोहे चाँदी की पायल मँगा दो सजन !

अब तो पायल बिना कल न पाऊँगी मैं,
जूती चाँदी के तारों की चाहूँगी मैं,
उस पै चाँदी की पायल सजाऊँगी मैं,

मोहे चाँदी की पायल मँगा दो सजन !
मोहे चाँदी की पायल मँगा दो सजन !

इक चाँद गया, इक चाँद आया

इक चाँद गया, इक चाँद आया !

बरखा ने रंग जमाया है,
बूंदों ने शोर मचाया है,
इक चाँद को बदली ढाँप गई,
इक चाँद ने आँचल सरकाया !

इक चाँद गया, इक चाँद आया !

आकाश के चाँद को जाने दो,
धरती के चाँद को आने दो,
वह दूर यह अपनी गोद में है,
इस चाँद को मैंने अपनाया !

इक चाँद गया, इक चाँद आया !

सावन की घटाएँ

सावन की घनघोर घटाएँ गुलज़ारों पर छाएँ !
गर्जे बरसे चार तरफ़ बूंदों का जाल बिछाएँ !

फूलों को बहलाएँ !
कलियों में बस जाएँ !

मुस्काएँ
लहराएँ

गुलज़ारों में खोल दिए हैं बरखा ने मैख़ाने !
मस्त हवा में छलक रहे हैं फूलों के पैमाने !

दिल की प्यास बुझाने !

आए रिंद पुराने !
मस्ताने
दीवाने

कैसी उभरी उभरी सी है आज नदी की छाती !
यह उसकी मुँहज़ोर जवानी साहिल से टकराती !
मौजों पर इतराती !
गाती शोर मचाती !
इठलाती
बल खाती

सावन आया साजन आओ और न अब तरसाओ !
झोंका बन कर जाने वाले बादल बन कर आओ !
बूंदों में मुस्काओ !
गीत रसीले गाओ !
आजाओ !
आजाओ !

बादल बरसे

छम छम काले बादल बरसे रिम झिम नयना रोते हैं !
सावन भादों की रुत में कुछ ऐसे दिन भी होते हैं !
शोर मचाती बून्दनियां जब गीत बखेरें,
बिरहन की रोती आशा से आँखे फेरें,
भीगी पलकों के साये में टूटे सपने सोते हैं !
सावन भादों की रुत में कुछ ऐसे दिन भी होते हैं !

डाली डाली से जब खेलें मस्त हवाएँ,
आहों के तूफ़ानों से हम जी बहलाएँ,
या अश्कों की नदी में हम आँचल मन का धोते हैं!
सावन भादों की रुत में कुछ ऐसे दिन भी होते हैं!

काली काली सी बदली जब घिर कर छाए,
पी बिन बरखा रुत में अपना जी घबराए,
पलकों में अश्कों के मोती सौ सौ बार पिरोते हैं!
सावन भादों की रुत में कुछ ऐसे दिन भी होते हैं!

नाच रही होती है जब बरखा की रानी,
बाग़ों पर आ जाती है भरपूर जवानी,
अपने मन की खेती में हम बीज दुखों का बोते हैं!
सावन भादों की रुत में कुछ ऐसे दिन भी होते हैं!

पायल बाजे

पायल बाजे!

छन छन छन छन पायल बाजें!
एक सुहागिन नयी नवेली,
आँगन में जब चले अकेली!

पैरों में चाँदी मुस्काए,
पग पग मीठा गीत सुनाए,
मन में आशा आन बराजे!

पायल बाजे!

छन छन छन छन पायल बाजे!

उठता जोबन मस्त जवानी,
आई है संगीत की रानी,
नयनों से कुछ बोल रही है,
इक बिड़िया पर तोल रही है,
झूमे, क्या कंगले क्या राजे!
पायल बाजे!
छुन छुन छुन छुन पायल बाजे!

मैं तो नाहीं करूंगी सिंगार

मैं तो नाहीं करूंगी सिंगार, ओ परदेसी बलम,
तोड़ डालूंगी फूलों के हार, ओ परदेसी बलम,
रो रो के मैंने सावन गुज़ारा!
बहती रही है नयनों की धारा!
चमकती न काजल की धार, ओ परदेसी बलम!
मैं तो नाहीं करूंगी सिंगार, ओ परदेसी बलम!
तोड़ डालूंगी फूलों के हार, ओ परदेसी बलम!
भादों भी आया रोता रूलाता,
मेरे दुखों पर आँसू बहाता,
गाता कोई क्या मल्हार, ओ परदेसी बलम!
मैं तो नाहीं करूंगी सिंगार, ओ परदेसी बलम!
तोड़ डालूंगी फूलों के हार, ओ परदेसी बलम!
सावन झूले चादों की रतियां,
ऐसे हैं जैसे सपनों की बतियां,

चलती है मन पै कटार ओ परदेसी बलम !
मैं तो नाहीं करूंगी सिंगार ओ परदेसी बलम !
तोड़ डालूंगी फूलों के हार ओ परदेसी बलम !

बिरहा के दुखड़े अब क्या सुनोगे ,
बिरह के आँसू अब क्या चुनोगे ,

बाजे न टूटी सितार ओ परदेसी बलम !
मैं तो नाहीं करूंगी सिंगार ओ परदेसी बलम !
तोड़ डालूंगी फूलों के हार ओ परदेसी बलम !

दाता की देन

यह सब तेरी देन है दाता, मैं इसमें क्या बोलूं ?

तूने जीवन जोत जगाई ,
मैंने पग पग ठोकर खाई ,

जौन डगर पर डाले तू मैं, उसी डगर पर होलूं !
यह सब तेरी देन है दाता, मैं इस में क्या बोलूं ?

तूने तो मोती बरसाए ,
मैंने काले कंकर पाए !

मैं झोली में कंकर लेकर, मोती जान के रोलूं !
यह सब तेरी देन है दाता, मैं इसमें क्या बोलूं ?

तूने फूल सुहाने बाँटे ,
मेरे भाग में आए काँटे ,

मैं झोली में काँटे ले कर, फूल समझ कर तोलूं !
यह सब तेरी देन है दाता, मैं इस में क्या बोलूं ?

तूने भेजे अमृत प्याले,
पड़ गए मुझको जान के लाले,
मैं विस को भी अमृत जानूं, तेरा भेद ना खोलूं!
यह सब तेरी देन है दाता, मैं इस में क्या बोलूं!

मेरे पी तो आगए

जीवन की फुलवारी महकी, आशाओं के फूल खिले!
रोता छोड़ के जाने वाले, हँसो खुशी फिर आन मिले!
देख पपीहे दूर दूर तक प्रेम बदरवा छा गए,
भूले बिसरे सपने फिर से नयनों में लहरा गए,
अब काहे को 'पी, पी' बोले मेरे पी तो आ गए!
तान कुछ ऐसी छेड़े के, कि जिससे मेरे मन की तान मिले!
जीवन की फुलवारी महकी, आशाओं के फूल खिले!
प्रीतम मुझ से रूठ गए थे, चले गए थे छोड़ के,
मैं दुखयारी बरसों रोई मन के छाले फोड़ के,
प्रीतम को भी चैन न आया मेरी आशा तोड़ के!
जब वे लौटे धीर बँधाने, मन के सारे घाव सिले!
जीवन की फुलवारी महकी, आशाओं के फूल खिले!
बीती बातें भूल के फिर से मैं पीतम की हो गई,
प्यार से मैं उनकी बाहों पर मीठी निंदिया सो गई,
सांसों का इक तारा बाजा मैं गीतों में खो गई!
जब वे नयनों में मुस्काए, मेरे मन के तार हिले!
जीवन की फुलवारी महकी, आशाओं के फूल खिले!

स्व० पंडित इंद्रजीत शर्मा

पंडित इंद्रजीत शर्मा माछरा, ज़िला मेरठ के रहनेवाले थे। उर्दू ग़ज़लों और नज़्मों में आपने काफ़ी नाम पाया। 'नैरंगे-फ़ितरत' के नाम में आप की कविताओं का संग्रह भी छपा। गीतों की इस धारा से आप भी प्रभावित हुए और आप की लेखनी ने अनायास ही आप से गीत लिखवा लिये। उर्दू के गीत लिखने वालों में आप का नाम भी हफ़ीज़ जालधंरी और मक़बूल हुसेन अहमदपुरी के साथ लिया जाता है।

वे तो रूठ गये

वे तो रूठ गए मैं मानती रही!

कुछ बात न पूछ सकी मन की, पिया चलते गए मुझे छोड़ गए।
सब प्रीत की रीत बिसार गए, सब प्रेम के बंधन तोड़ गए।
मैं प्रेम ही प्रेम जताती रही, वे तो रूठ गए मैं मनाती रही!

क्या मोह भला है साधू का, क्या ममता है संन्यासी की!
कुछ तरस न खाया दासी पर, कुछ बात न पूछी दासी की।
यों ही नयनों से नीर बहाती रही!
वे तो रूठ गए मैं मनाती रही!

नैया है मझधार

बेड़ा, कौन लगाए पार!

नदिया के चौपाट खुले हैं, धरती अंबर रूठ रहे हैं,
पापी मनों में पाप बसे हैं, नैया है मँझधार!

कोसों है अब दूर किनारा, लहरें मार रही है धारा !
बेबस नैया खेवनहारा, काम न दे पतवार !
सारी दुनिया है मदमाती, कोई नहीं है संगी-साथी,
मतलब के सब गोती-नाती, मतलब का संसार !
कुछ भी किसी को ध्यान नहीं है, समझ नहीं है, ज्ञान नहीं है,
मुर्दा दिलों में जान नहीं है, यही है सोच-विचार !
बेड़ा कौन लगाए पार !

भिक्षा प्रेम की

भिक्षा प्रेम की, प्रीतम, मैं तो आई लेने भिक्षा प्रेम की !
प्रीतम दासी की सुध लीजो, कब से खड़ी हूं किरपा कीजो,
वारी जाऊं, दीजो दीजो—भिक्षा प्रेम की !
प्रीतम, मैं तो लेने आई भिक्षा प्रेम की !
मेरे स्वामी मेरे प्यारे, नाथ मेरे जीवन के सहारे,
माँगने आई तेरे द्वारे—भिक्षा प्रेम की !
प्रीतम, मैं तो लेने आई भिक्षा प्रेम की !
दूर से चल कर आई भिखारन, कर दो मुक्त मेरा यह बंधन,
देदो लेकर मेरा जीवन—भिक्षा प्रेम की !
प्रीतम, मैं तो लेने आई भिक्षा प्रेम की !

तोता

उड़ जा देस-बिदेस, तोते, उड़ जा देस बिदेस !
मैं जाऊं तुझ पर बलिहारी, बिरह का रोग लगा है भारी,
रूठ गए मुझसे गिरधारी, चले गए परदेस !

तारे गिन-गिन रात बिताऊं, दिन में पल भर चैन न पाऊं,
आँसू पीती हूं ग़म खाऊं, ले जा यह संदेस!
मिल जाएं तो उन से कहना, दूभर हो गया तुम बिन रहना,
तज दिया मैं ने सारा गहना, जोगन का है भेस!

भूल आई री

भूल आई री, भूल आई, भूल आई, भूल आई री!
अपना यह मन सखी भूल आई री!
नयनों की चोट में, पलकों की ओट में,
प्यारे की जीत में, मस्ती के गीत में,
बंसी की तान में, एक ही उठान में!
भूल आई री, भूल आई, भूल आई, भूल आई री!
अपना यह मन सखी भूल आई री!

जोगी का गीत

बाबा भर दे मेरा प्याला!

परदेसी हूं दुख का मारा, फिरता हूं मैं मारा-मारा,
जग में कोई नहीं सहारा, खोल गिरह का ताला!
जोगी हूं मैं दान का प्यासा, निर्बुद्धी हूं ज्ञान का प्यासा,
चंचल मन है ध्यान का प्यासा, कर दे अब मतवाला!
तेरे कारन जोग लिया है, ऐश छोड़ कर सोग लिया है,
एक निराला रोग लिया है, पड़ा जिगर में छाला!
बाबा, भर दे मेरा प्याला!

सावन बीता जाए

सावन बीता जाए, सजनी, प्रीतम घर नहीं आए !
कैसे काटूं रात विरह की नागन बन-बन खाए !

ठंढी-ठंढी पुरवा सनके, बादल घिर-घिर छाए,
नन्हीं नन्हीं बूँदे टपकें, औ' बिजली लहराए !
याद पिया की मेरे दिल को रह-रह कर तड़पाए,
सावन बीता जाए, सजनी, प्रीतम घर नहीं आए !

मोर, पपीहा, झींगुर, सारस, मिल कर शोर मचाएं,
नाचें कूदें करे कलोलें, फूलें नही समाएं,
नाच रंग औ' खेल कूद की बात न मन को भाए,
सावन बीता जाए, सजनी, प्रीतम घर नहीं आए !

कुंज-कुंज में पड़े हैं झूले, मिल कर सखियां झूलें,
पींग बढ़ाएं, तान उड़ाएं, अपने मन में फूलें,
हँसी ख़ुशी की बात यह मेरे मन को और जलाए,
सावन बीता जाए, सजनी, प्रीतम घर नहीं आए !

'हफ़ीज़' होशियारपुरी

'हफ़ीज़' होशियारपुरी पहले 'आल इण्डिया रेडियो' में काम करते थे, अब पाकिस्तान रेडियो में काम करते हैं। यद्यपि वे अब एक अच्छे पद पर आसीन हैं परन्तु बहुत से दूसरे कवियों की भाँति उनका यह पद उन्हें लेकर नहीं बैठ गया। वे अब भी निरतंर लिखते हैं। हफ़ीज़ का ख़ास मैदान ग़ज़ल है। गीत उन्होंने बहुत नहीं लिखे, पर जो भी लिखे हैं सुन्दर लिखे हैं।

अतीत की याद

नाव चाँद, आकाश था सागर, तारे खेवनहार थे प्यारे,
मेरी रामकहानी सुनकर जाग उठे थे नींद के माते।
काश वह रातें फिर भी आतीं, काश वही दिन फिर भी आते!

दर्शन जल की खातिर जाते, दर्शन प्यासे प्रेम दुवारे,
झूठी दुनिया को तज देते अपनी दुनिया आप बसाते।
काश वह रातें फिर भी आतीं, काश वही दिन फिर भी आते!

प्रीत के आगे प्रीतम प्यारे, झूठ हैं रिश्ते-नाते सारे,
मैं अपनाता मन यह तुम्हारा, मेरे मन को तुम अपनाते।
काश वह रातें फिर भी आतीं, काश वही दिन फिर भी आते!

पलकों पर यूं नीर चमकते, जैसे अंबर पर हों तारे;
रो-रो रात बिताते साजन, अपनी अपनी दसा सुनाते।
काश वह रातें फ़िर भी आतीं, काश वही दिन फिर भी आते!

काली रात

कैसे काटूँगी उन बिन काली रात ?
याद आए वह पल-पल, छिन-छिन, नींद उचाट हुई है उस बिन,
थक गईं आँखें तारे गिन-गिन, होत नहीं परभात !
कैसे काटूँगी उन बिन काली रात ?

कब आएगा साजन प्यारा, साजन मेरा राजदुलारा,
इन सूनी आँखों का तारा, कोई बताओ यह बात !
कैसे काटूँगी उन बिन काली रात ?

हम पर दया करो भगवान !

हम पर दया करो भगवान !
मेरा जीवन तुम से उजागर, मैं प्यासी तुम अमृत सागर,
आओ, भर दो मन की गागर, जान में आ जाएगी जान।
हम पर दया करो भगवान !

नौका जब मँझधार मे आए, रह-रह कर तूफ़ान डराए,
कौन फिर उस को पार लगाए, अब तो एक तुम्हारा ध्यान !
हम पर दया करो भगवान !

दिल लेकर मुँह मोड़ न जाना, मेरी आशा तोड़ न जाना,
मन-मंदिर को छोड़ न जाना, यह नगरी तुम बिन सुनसान।
हम पर दया करो भगवान !

आग लगे

आग लगे इस मन में आग,
लो फिर रात बिरह की आई, जान मेरी तन में घबराई,
चारों ओर उदासी छाई, अपनी क़िस्मत अपने भाग,

आग लगे इस मन मैं आग !

काली औ' बरसती रैन, उस बिन नींद को तरसें नैन ;
जिस के साथ गया सुख-चैन , उस की याद कहे—'अब जाग' !
आग लगे इस मन में आग !

जिस दिन से वह पास नहीं है, कोई ख़ुशी भी रास नहीं है ,
जीने तक की आस नहीं है , जान को है अब तन से लाग ।
आग लगे इस मन में आग !

कौन जिये और किस के सहारे , मीठे-मीठे बोल सिधारे ,
गीत कहां वह प्यारे-प्यारे ? अब वह तान ,न अब वह राग !
आग लगे इस मन में आग !

दरस दिखा कर जो छिप जाए , कौन ऐसे से प्रीत लगाए ?
क्यों अपनी कोई दसा सुनाए , छोड़ मुहब्बत का खटराग !
आग लगे इस मन में आग !

प्रेमनगर में

झूठी दुनिया से मुँह मोड़े , धन औ' लोभ की बातें छोड़ें ,
प्रीत की रीत से नाता जोड़े , मिल कर सारे गीत यह गाएं ,
प्रेमनगर में घर बनवाएं !

क्या है जगवालों के धंदे , सब देखे मतलब के बंदे ,
हाथों में हैं पाप के फंदे , मन में पी की लगन लगाएं !
प्रेमनगर में घर बनवाएं !

प्रेमनगर इक स्वर्ग है प्यारे , पी हैं जिस के राजदुलारें ,
जाग उठेंगे भाग हमारे , जाकर हम उस में बस जाएं !
प्रेमनगर में घर बनवाएं !

बुरी बला है प्रीत

साजन, बुरी बला है प्रीत !

बिरह के दुख हँस-हँस कर सहना, मुँह से कोई बात न कहना,
कम-कम मिलना चुप-चुप रहना, यह है प्रीत की रीत।
साजन, बुरी बला है प्रीत !

ना कहीं आना ना कहीं जाना, सब से जी का भेद छिपाना,
तनहाई में बैठ के गाना, जोग की धुन में गीत।
साजन, बुरी बला है प्रीत !

आँख में आँसू, बंद ज़बानें, ब्याकुल जिउरे दुखिया जानें,
किस की सुनें औ' किस की मानें ? कौन किसी का मीत ?
साजन, बुरी बला है प्रीत !

प्रीत के दुख को जी से चाहें, जैसे हो यह रीत निबाहें,
प्रीत है ठंडी ठंडी आहें, प्रीत की आग है शीत।
साजन, बुरी बला है प्रीत !

विश्वामित्र आदिल

विश्वामित्र आदिल भी युवक कवि हैं। आल इंडिया रेडियो से होते हुए दूसरे साथियों के साथ बम्बई की फ़िल्मी दुनिया में जा पहुँचे हैं और अभी तक वहीं जमे हुए हैं। उनके अपने जीवन की बेचैनी, उलझन और अस्पष्टता उनकी कविताओं में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। हल्की सी अस्पष्टता, हल्का सा रुमान और यथार्थता की कटुता का विष—ये तीनों उनकी कविताओं में अज्ञात रूप से एक दूसरे में समोए रहते हैं परन्तु उनके गीत सीधे सरल तथा बोधगम्य हैं। यथार्थता की कटुता और करुणा यहां भी है, परन्तु दुर्गमता नहीं।

जीवन के धारे पर

मांझी—(देस से दूर नाव में)

ही हो......ही हो......ही हो......ही हो!
नाव यह जीवन आशाओं की
खाए झकोले डग मग डोले
डूब न जाए
आओ आओ ज़ोर लगाओ!
ही...हो......ही.. हो......ही...हो......ही...हो!

मांझी की पत्नी का पहला पत्र

ओ मांझी! ओ जीवन नाव के प्यारे मांझी!
पास नहीं तू और यह बर्फ़ के ठंडे गाले,

जैसे पैरों से दल दल बन कर चिमटे हैं
ये नोकीले पेड़, ये कुटिया के रख वाले
ऐसे. घूर रहे हैं मानों भूत खड़े हैं !
ये टो सिमटे सिमटे, सिकुड़े सिकुड़े रस्ते
जाने किन खोए क़दमों को ढूंढ रहे हैं !
कोई नहीं, कोई भी नहीं है !
हाँ, दोपहर को डाक का हरकारा आया था,
और चमकते चाँदी के सिक्के लाया था !
इन सिक्कों से तेरे प्यार की याद आती है !
रात मगर जब अपना जादू फैलाती है !
बालों में जेगन की बास मचल जाती है !
घबराती हूँ, घबराती हूँ !
जीते जी ही मर जाती हूँ !

मांझी (देस से दूर नाव में)

ही हो......ही हो .... ही हो......ही हो!
चारों ओर अँधेरा छाए,
तूफानों का ज़ोर डराए,
नाव अकेली अल्लाहबेली,
एक किनारा हटता जाए,
एक किनारा पास बुलाए !
ही हो......ही हो......ही......हो ही हो!

मांझी की पत्नी का दूसरा पत्र

ओ मांझी ! ओ जीवन नाव के प्यारे मांझी !

सूरज की चमकीली किरणें, फिर देवदारों पर चमकी हैं,
नीली नीली झील पै हर इक नाव से लहरें खेल रही हैं,
लेकिन इन में अपनी थीं जो नाव वह अपनी नाव नहीं हैं,
दूध सी गोरी बतखें भी अब और के आँगन में चुगती हैं,
डरती हूँ, यह बरसों की मटियाली कुटिया बिक जाएगी!
यदि कपड़े कुछ और फटे तो लाज न क्या मुझ को आएगी?
बाक़ी सब कुछ ठीक है लेकिन जाने क्यों यह जी भर आया,
हरकारा भी कोई न चिट्ठी तेरी खैर खबर की लाया!
सोच रही हूं, सोच रही हूं!—
हां याद आया झील किनारे उस शीशों वाले बंगले में,
दो दिन से इक तीखी मूँछों वाले साहब आन बसे हैं!
उनके पापी दीदे जाने दूर ही दूर से क्या कहते हैं!
घबराती हूं, घबराती हूं!
जीते-जी ही मर जाती हूं,——

मांझी (देस से दूर नाव में)

ही——हो.....ही——हो.....ही——हो......ही——हो!
खेने वाला खेता जाए,
चाहे किनारा पास न आए,
झिल मिल चमके आस का दीपक!
सागर नाचे मांझी गाए!
जीने वाले जी ही लेंगे,
जीवन अमरित पी ही लेंगे!
ही——हो.....ही——हो.....ही——हो,.....ही——हो!

मांझी की पत्नी का तीसरा पत्र—

ओ मांझी ! ओ जीवन नाव के प्यारे मांझी !
अपनी मटयाली कुटिया अब ग़ैरों से आबाद हुई है ,
"नन्ही जोरू" शीशों वाले बँगले की अब आन बसी है ,
खाना अच्छा, पीना अच्छा, रहना अच्छा, जीना, अच्छा ,
पर सिन्दूर भरी शरमीली माँग लटों से रुठ गई है !
हाथ वही हैं, पाँव वही हैं, आँख वही हैं, कान वही हैं ,
फिर क्यों मेरे जीवन पर पतझड़ की वीरानी छाई है !
सोच रही हूं—सोच रही हूं !

और ?—नहीं कुछ और नहीं कहना है, बस, इतना कहना है !
तुझ को मेरा दुख सहना था, मुझ को तेरा दुख सहना था ,

मांझी (दूर दस नाव में)

ही—-हो......ही—-हो......ही—-हो......ही—-हो !

दूर घटा घनघोर वही है ,
तूफ़ानों का ज़ोर वही है ,
टूट गई पतवार तो फिर क्या ,
नाव न पहुँची पार तो फिर क्या ?

आने वाली नाव का रस्ता ,
देख रहा है लाल सवेरा ,
एक नये मांझी की ख़ातिर ,
आखिर छुट जाएगा अँधेरा !

मिटते मिटते बनने वाली ,
उम्मीदों का शोर वही है !

अनथक हैं मुँहज़ोर थपेड़े ,
सागर चारों ओर वही है ।

ही——हो······ही——हो······ही——हो······ही——हो !

नये भिखारी का गीत

कितने आने जाने वाले ,
साये बन कर रूठ गए हैं ।
कितने दुख के काले दरिया ,
सूने रस्तों पर बहते हैं !

कितने ही अनजाने नग़में ,
बे गाए ख़ामोश हुए हैं !
कितने सपने कितनी आहें ,
रौन्दने वाले रौंद गए हैं !

मुझको इससे मतलब बाबा !
देजा बाबा कुछ तो देजा !

मोहन, रूपा, हामिद, सुग़रा ,
कैसे सुन्दर फूल खिले हैं !
उनको खुशबूओं के बादल ,
पल पल छिन छिन घिर आते हैं !

कितनी आँखे जाग उठती हैं ,
कितने ही लब मिल जाते हैं !

मुझको इस से मतलब बाबा !
देजा बाबा कुछ तो देजा !

चाँद सितारों की यह ज्योती,
कहते हैं ऐसी वैसी है!
जिसकी डोर से बेबस होकर,
जीवन की मछली लटकी है!

डोर खिंचे तो आँसू ढलकें,
ढील मिले तो नर्म हँसी है!
सच है या है झूठ है सारा,
मन में क्यों यह सोच पड़ी है!

मुझको इस से मतलब बाबा!
देजा बाबा कुछ तो देजा!

तेरा जीवन मेरा जीवन,
तू भूखा तो मैं भी भूखा!
तू भिखमंगा, मैं भिखमगा,
ना कुछ तेरा, न कुछ मेरा!

तेरा जब कुछ हो जाएगा,
मेरा प्याला खो जाएगा!

तब तक मेरी सुन ले बाबा!
देजा बाबा कुछ तो देजा!

अब्दुल मजीद भट्टी

अब्दुल मजीद भट्टी ने ३५ वर्ष की आयु तक कभी एक शेर तक न कहा। वे पहले किसी प्रायमरी स्कूल में अध्यापक थे, फिर कातिब बने और कई वर्ष तक खुशनवीसी करने के बाद कातिबों की मानसिक और सामाजिक दशा से असंतुष्ट होकर उन्होंने बच्चों के लिये एक पत्रिका निकाली। क्योंकि ख्याति प्राप्त कवि उसमें लिखने को तैयार न हुए, भट्टी साहब ने स्वयं ही उसमें सीधी सरल चीज़ें लिखनी आरंभ की, और सहसा एक दिन उनकी कविता अपनी पत्रिका के बंधन तोड़ कर चारों ओर बह निकली और उर्दू वालों ने भट्टी में एक निर्जीव कातिब ही नहीं, वरन् एक जानदार कवि भी पाया।

प्रकट है कि अपने जीवन में भट्टी ने बहुत कुछ सहा। यदि उस कटुता का प्रतिबिम्ब उसकी कविताओं और गीतों में आ गया है तो आश्चर्य नहीं।

भगवान

बैठा था आकाश पर,
तू आँखों से दूर,
लेकिन अपना मन था तेरी शरधा से भरपूर!
आँखों में परकाश था तेरा,
मन में था यह ज्ञान,
कर्म कुकर्म को देख रहा है तू मेरा भगवान!
तू मन्दिर में आन बराजा,

पहन के हीरे मोती ,
द्वार धनुष की ओट में, आ गई तेरी ज्योती !

सेवक, दास, पुजारी, पुरोहित ,
पंडित औ' विद्वान ,
देने लगे यह ज्ञान ,—
उनके चरणों को छूने से मिलते हैं भगवान !

आरती-पूजा
रस लीलाएँ
देवदासियाँ गाएँ—

हरी हरी हर...हरी हरी हर...जय विष्णू भगवान !
तू है नाथ अनाथ का औ' निर्बल के प्राण !
जय तेरी भगवान !
राग रंग औ भेंट भोग के मोह ने तुझे रिझाया !
रस लीला के फेर में तुझ को ले आया इंसान !
ऐ मेरे भगवान !
तू मन्दिर में बैठ रहा है पहन के हीरे मोती ,
मैं हैरान हूँ इस पर तुझको उलझन क्यों नहीं होती ,
तोड़ फोड़ कर द्वार धनुष सब करदे एक समान ,
मन मन्दिर में बस न सके तो मत कहला भगवान !

अपमान

मान महत की माती रजनी , आती थी इठलाती ।
छुम छुम, छुम छुम करती ,

लहराती लचकाती,
लपक झपक के मन्दिर जाती,
ले पूजा के फूल!

भाव महत की माती रजनी, आती थी इठलाती।
मान महत की माती रजनी,
पहुँची कृष्ण द्वारे!
आगे मत बढ़, ठहर बालिका,
देख महन्त पुकारे!
दूर बैठ कर देख मूर्ती,
वापस लेजा फूल।

नीच जात को मिल नहीं सकती प्रभु चरणन की धूल!
मान महत की माती रजनी, सह गई यह अपमान।
गिर गई पूजा की सामग्री छूटे उस के प्राण!
प्रभु,
यह किस का है अपमान?
ऊँच नीच के बंधन से कब छूटेगा इंसान?

मन की जोत

देखें लोग आकाश पै सूरज, सूरज का परकाश,
जीवन जोत जगाए!
कली कली में रंग भरे औ' सुन्दर फूल खिलाए,
दुनिया को महकाए!
मैं देखूं तो आय नज़र वह मैला औ' बे रूप.
जान जलाए धूप!

देखें लोग आकाश पै चाँद, औ' चाँद की जीवन जोत ,
जो सुख रस बरसाए !
मन में भर दे नयी उमंगें ,
जी सब का लहराए !
हर शै नाचे गाए !
मैं देखूं तो आय नज़र वह फीका और उदास ,
बैठी जाए आस !
देखें लोग आकाश पै तारे हँसते औ' मुस्काते ,
जी सब का बहलाते !
जगमग जगमग जगमग करते ,
अपने पास बुलाते !
मैं देखूं तो टीन के टुकड़े, इक दूजे से दूर ,
बिखरे हुए बेनूर !
अपने मन की जोत है दुनिया ,
दुनिया के सब खेल !
मेरा मन मुफ़लिस[1] कर दिया है ,
बिन बत्ती, बिन तेल !

आज और कल

भूखी आंखें कल को देखें ,
झूठी आस लगाए !
आने वाली कल कब आकर आज की भूख मिटाए !

---

[1] ग़रीब ।

आने वाली कल पै भरोसा,
कब आए, क्या लाए ?
बीती कल ?
बीती कल के दीप की लौ कब आज की जोत जगाए ?
माया छल के,
छाया ढलके,
लौट के फिर नहीं आए !
आज की भूख हो आज का रोना,
आज का राग सुहाग !
झूठ कपट से,
लाग लपट से,
आज के दीप जलाओ !
आज के मंगल गाओ !
बीती कल के दीप की लो अब अपनी जोत जगाए !
आने वाली कल पै भरोसा,
कब आए——क्या लाए !

अनोखा सपना

देखा एक अनोखा सपना !
अपना घर भी घर नहीं अपना !
गूंजी इक झंकार !
डोल गया संसार !
फिर कुछ अँध्यारा सा छाया !
देख रही थी जलती काया !
सहमे सहमे साये साये,

दुख के बादल छाये छाये ।
जलती हुई अरमान चिताएँ,
भूखे बच्चे बेबस माएँ ।

घबराई घबराई जवानी,
चलती फिरती दर्द कहानी !
जी चाहा इस घर को जलादूं,
जग में ऐसी आग लगादूं ।

गूंजे एक पुकार !
डोल गया संसार !
देखा एक अनोखा सपना !
अपना घर भी घर नहीं अपना !

जीवन उलझन

झुन झुन........झुन झुन... .....झुन झुन...... ..झुन झुन
बन गई अपने जीवन की धुन,
प्रीत की रानी आई,
मन की इक इक आशा जागी ले ले कर अँगड़ाई !
प्रीत की रानी आई,
आशाओं के दीप जलाकर,
अपनी प्यारी छब दिखलाकर,
इक थाली में फूल सजाकर,
ओट में जा मुस्काई !
प्रीत की रानी आई !
इतने में इक मन का राजा आया मुकुट सजाए,

मन मन्दिर के दीप जलाए, प्रीत की जोत जगाए !
प्रीत की रानी बोली—राधे छम छम करते आओ !
इन फूलों से माला गूंधो ! राजा को पहनाओ !
जीवन जोत जगाओ।
छम से आगे बढ़ कर ज्योंही गिनने लगी मैं फूल !
मन मन्दिर के दीप बुझे, जाने कुछ हो गई भूल !
प्रीत की रानी...... !
मन के राजा.· .... !
लौट के फिर नहीं आए !
इस जीवन में कौन अब आकर मन के दीप जलाए ?
जीवन उलझन, अब है यही धुन !
झुन झुन.........झुन झुन.........झुन झुन.........झुन झुन

जीवन आशा

इक इक करके डूब गए जब देस गगन के तारे !
सो गए भाग हमारे !
फैल गया चहुँ ओर अँधेरा ऐसी घटाएँ छाईं,
मग भूली, डग डोल गए औ' ओझल हो गई ठोर !
जागे चोर !
जीवन जोत को अँध्यारे ने ऐसी दी शह मात !
छा गई काली रात !
जगत पर छा गई काली रात !
आशाओं के इस मरघट पर दीप जगा इक न्यारा !
जागा भाग हमारा !

पग सूझे, डग सम्हल गए, फिर सामने आ गई ढोर !
भागे चोर !

इस दीपक ने अँध्यारे में जीवन जोत जगाई !
आशा जीवन जीवन आशा सच्ची रीत बताई !
अब यही रीत चले———
दीप से दीप जले————

जीवन गीत

आँखों में काजल रे माथे पे बिंदिया ,
मन में था मनहर गीत !
मैं ने देखी पड़ोसिन की चुड़ियां रे !
मुझे भूल गया मेरा गीत !

मेरे बालम ने बनवादी चूड़ियाँ रे !
बन्नी पहनेगी, खुश होगी, गाएगी !—
आएगी जीवन में जीत !
मैंने देखा पड़ोसिन का बंगला बना !

मुझे भूल गया मेरा गीत !
मेरे बालम ने बंगला भी बनवा दिया !
उस में टहलूंगी, घूमूंगी, गाऊँगी ,
जागेगी प्रीत की रीत !

मैंने देखा पड़ोसिन की मोटर खड़ी !
मुझे भूल गया मेरा मीत !
गई यूंही उमरिया बीत !
मुझे भूला रहा मेरा गीत !

आँखों में काजल रे माथे पै बिंदिया !
जीवन की जीत मेरे जीवन का गीत !

अखियां रंग में

अंखियां डूबी रंग में ,
मन में भड़की आग !

इक जीवन पर छागई दो नयनो की लाग !

पल में आशा जी उठे ,
मन के दीप जलाए ।

इक पल में अँधयारा छाए आशा डूबी जाए !

नयनो की इस लाग को ,
जग कहता है प्रीत ।

इक पल हँसना, इक पल रोना, जीना मरना रीत !

दो प्रेमी इक रंग में ,
दो क़ालिब इक जान !

दीपक रूपी एक है एक पतंग समान ।

अपनी लाग में दीप जले ,
और अपना आप जलाए ।

अपनी लगन में जले पतंगा, आग से आग बुझाए !

अखियां डूबी रंग में मन में भड़ की आग !
इक जीवन पर छा गई दो नयनों की लाग !

नयनन सागर छलके

नयनन सागर छलके,
फिर जल दीपक झलके!
आ रने कन्हैया,
मन में बसैया!

उनमें आन बराजे!
प्रीत की बंसी बाजे!
चरणों में इक देवादासी सुन्दर श्याम पुकारे
बैठी प्रेम सहारे!

ये तारे भी टूट न जाएँ,
ये जल-मन्दिर फूट न जाएँ!
नयनन सागर छलके,
फिर जल दीपक झलके!

विविध

कुछ ऐसे श्रेष्ठ कवि भी उर्दू में हैं जिन्होंने चाहे गीत अधिक न लिखे हों फिर भी उन की कविता में अनायास ही यह धारा बह निकली है और उन की कुछ कविताएं गीतों के बहुत समीप आ गई हैं। फिर ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने एकदो सुंदर गीत अवश्य लिखे हैं और उन की सुंदरता के कारण उन्हें देने का लोभ संवरण नहीं किया जा सकता।

राष्ट्रीय गान

भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है,
हर रुत, हर इक मौसम इस का, कैसा प्यारा-प्यारा है?
कैसा सुहाना, कैसा सुंदर, प्यारा देश हमारा है!
दुख में, सुख में, हर हालत में, भारत दिल का सहारा है।
भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है!

सारे जग के पहाड़ों में बे, मिस्ल[1] पहाड़ हिमाला है,
यह परबत सब से ऊँचा है, यह परबत सब से निराला है,
भारत की रक्षा करता है यह; भारत का रखवाला है,
लाखों चश्मे बहते इस में, लाखों नदियोंवाला है,
भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है!

गंगाजी की प्यारी लहरें गीत सुनाती जाती हैं,
सदियों की तहज़ीब[2] हमारी याद दिलाती जाती हैं,

---

[1]अद्वितीय। [2]सभ्यता।

भारत के गुलज़ारों[1] को सरसब्ज़[2] बनाती जाती हैं,
खेतों को हरियाली देती, फूल खिलाती जाती हैं.
भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है।

हरे-भरे हैं खेत हमारे, दुनिया को अन्न[3] देते हैं,
चाँदी-सोने की कानों से हम जग को धन देते हैं,
प्रेम के प्यारे फूल की खुशबू गुलशन-गुलशन[4] देते हैं,
अमनों-अमां[5] की नेमत[6] सब को भरभर दामन देते हैं,
भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है।

कृष्ण की बंसी ने फूँकी है रूह हमारी जानों में,
गौतम की आवाज़ बसी है, महलों में, मैदानों में,
चिश्ती ने जो दी थी मय, वह अब तक है पैमानों में,
नानक की तालीम अभी तक गूँज रही है कानों में,
भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है

मज़हब हो कुछ, हिंदी हैं हम, सारे भाई-भाई हैं,
हिंदू हैं या मुस्लिम हैं या सिख हैं या ईसाई हैं,
प्रेम ने सब को एक किया है प्रेम के सब शैदाई[7] हैं,
भारत नाम के आशिक़ हैं हम भारत के सौदाई[8] हैं,
भारत प्यारा, देश हमारा, सब देशों से न्यारा है।

हामिद अल्लाह 'अफ़सर'

सीता और तोता

हुई क्या वह बहार ऐ आर्यावरत

---

[1]बाग़ों। [2]उर्वर। [3]अन्न। [4]बाग़। [5]शांति। [6]विभूति। [7]प्रेमी। [8]पागल।
[9]आर्यावर्त।

चमन की ज़िंदगी थे जिस के अनफ़ास[1] !
वह रंगारंग फुलवाड़ी कहाँ है,
दिमाग़ों में है अब तक जिस की बू-बास !
वह आज़ादी किधर है जिस से कट कर,
न आई कोई भी तुझ को हवा रास !
क़फ़स[2] में बंद होती थी जो तूती[3],
तो सीता को दिया जाता था बनवास !

यह ताना भी सुना तू ने कि तुझ को,
कभी भी था न आज़ादी का इहसास[4] !

मौ० ज़फ़र अली खाँ

आओ सहेली झूला झूलें

पुरवा सनका बादल छाए, भूरे काले घिर कर आए,
अमृत जल भर-भर के लाए, बरखा रुत की इस बरखा में। आओ सहेली०

उट्ठी हैं पुरशोर घटाएं, काली-काली घोर घटाएं,
सावन की घनघोर घटाएं, सावन की घनघोर घटाएं ! आओ सहेली०

बरखा रुत की शान निराली, पत्ते-पत्ते पर हरियाली,
डाली-डाली हैं मतवाली, इस रुत की मख़मूर फ़िज़ा में। आओ सहेली०

झूलें और पकवान बनाएं, आमों का नौरोज़ मनाएं,
खाते जाएं गाते जाएं, झड़ी लगी है इस बरखा में। आओ सहेली०

मौ० 'ताजवर'

---

[1]रहने वाले। [2]पिंजड़ा। [3]पक्षी, तोता। [4]अनुभूति। [5]मस्त।

ऐ ख़ूबसूरती

ऐ ख़ूबसूरती ! क्या बात है तेरी ?
यह मखमली पहाड़, यह मोहना उजाड़,
फूलों की रेल-पेल, चिड़ियों की कूद-खेल,
यह धूप, यह हवा, यह ख़ुल्द[1] की फ़िज़ा[2],
सब शान है तेरी, ऐ ख़ूबसूरती !
नन्ही फुहार ने, मीठी-सी मार ने,
दिल को जगा दिया, कैसा मज़ा दिया ?
इस छेड़-छाड़ में, बूँदों की आड़ में,
तू थी छुपी हुई, ऐ ख़ूबसूरती !
जल्वा मुझे दिखा, दिल में मेरे समा,
हर चीज़ में झलक, गहराइयों तलक,
दुनिया बना इक और, जिस का नया हो तौर[3],
ऐ मेरी नित नई, ऐ ख़ूबसूरती !

मौ० बशीर अहमद

हँस देंगे और गाएँगे !

दूर किसी इक गाओं में, ठंडी-ठंडी छाओं में,
गाना अपना गाएंगे ! गाएंगे हम गाएंगे !
नन्हे-नन्हे फूलों में, हलके-हलके झूलों में,
क्या-क्या लुत्फ़ उठाएंगे ? झूलेंगे और गाएंगे ?
फिर इक प्यारी सूरत को, फिर इक मोहनी मूरत को,
मन का गीत सुनाएंगे ! नाचेंगे और गाएँगे !

---

[1]स्वर्ग। [2]वातावरण, बहार। [3]रूप।

दुनिया आनी-जानी है, हम ने भी पर ठानी है—
जो खोया है पाएँगे! पाएंगे और गाएंगे!
औरो का हम देख के रंग, आज रंग और कल के ढंग,
ग़ुस्से में जब आएंगे, हंस देंगे और गाएंगे,
जन्नत को हम क्या जानें? दोज़ख को हम क्या मानें?
दुख में भी हम गाएँगे? जीकर यों दिखलाएँगे?

मौ० बशीर अहमद

पपीहे से

रागिनी 'पीहू' की सिखलाई है किस ने तुझ को?
तरज़ यह आगई किस तरह पपीहे तुझ को?
रैन बरखा की यह तारीक[1] यह हू का आलम[2],
किस की याद आ गई इस वक़्त न जाने तुझ को?
देख कर इस की चमक जोश पै क्यों आता है?
दम-बदम करती है क्या बर्क़[3] इशारे तुझ को?
बोल उठता है जो यूं सर्द हवा पाते ही—
मुयदा[4] क्या देते हैं पुरवा के यह झोंके तुझ को?
किस को रह-रह के सुनाता है रसीली तानें?
किस को इस वक्त नज़र आते हैं जलवे तुझ को?
हाय क्या हिज्र में डूबी हुई लय है तेरी?
मेरे सीने से कोई आके लगा दे तुझ को!
दिल मेरा क्यों न भर आए तेरी पी-पी सुन कर,
मुबतला[5] मैं भी हूं गर इश्क़ है प्यारे तुझ को,

---

[1]अँधेरी। [2]निस्तब्धता। [3]बिजली। [4]सुसमाचार। [5]फँसा हुआ।

एक बेदार[1] हूं मैं, जाग रहा है इक तू,
लोटते मुझ को गुज़रती, है तड़पते तुझ को,
फिर भी है फ़र्क़[2] बहुत हाल में हम दोनों के,
कि मुझे ज़ब्त[3] अता[4] हो गया, नाला तुझ को!
महवे-फ़रियाद[5] फ़क़त रात को तू होता है,
मेरे दिल पै है वह बिपता कि सदा रोता है!

सआदत हुसैन 'मुजीब'

फिर क्या तेरा मेरा रे

तेरे दर की धूल में जाने क्या पाया है भिखारी ने?
दुनिया छूटी पर नहीं छूटा तेरी गली का फेरा रे!
प्रीत बुरी है, या अच्छी है, जो कुछ भी है मेरी है,
अब तो प्यारे आन बसाया मन में प्रेम ने डेरा रे!
मेरे दिल की दुनिया प्यारे तेरे दिल की दुनिया है,
तू मेरा है, मैं तेरा हूँ, फिर क्या तेरा मेरा रे?
प्रेम के बंधन में फँसने से कितने बंधन टूटे हैं?
यह मैं जानूं, या वह जाने, जिस को प्रेम ने घेरा रे!
जब तुम सपने में भी न आओ, प्यारे फिर क्यों नींद आए?
बिरह का दीपक जब नहीं बुझता, फिर कैसे हो सवेरा रे!

'रविश' सद्दीक़ी

सरमायादारी

दौलत ने कैसी शोरिश[6] उठाई? क्या बादशाही औ' 'क्या गदाई[7]!
भूखों की रोटी हथिया के बंदा, करता है बंदों पर क्यों खुदाई!

---

[1]जाग्रत। [2]अंतर। [3]संयम। [4]प्रदान। [5]उपालंभ-रत। [6]उपद्रव। [7]फ़क़ीरी

शाही गदाई, मीरी फ़क़ीरी, जब उठ गए यह पर्दे रयाई[1]—
यह भी है इंसां, वह भी है इंसा, वह इस का भाई, यह उस का भाई!

मौ० हामिद अली खां

बलो बीबी की फ़रियाद

१

बीबी

पड़ते ही सो जाती हूं।

भारी सर तकिये पर रख कर,

निंदिया-पुर में खो जती हूं।

मेरा ख़ुसर[1] ग़ुस्से[2] में भर कर,

फिरता है अंदर और बाहर,

ताल

धब धब धब, गाली पर गाली।

सो नहीं सकती मैं बेचारी!

ख़ुसर

उठ री उठ ओ काहिल लड़की,

फूहड़, मरियल, नींद की माती,

उठ री उठ, सुस्ती की कान!

२

बीबी

पड़ते ही सो जाती हूं।

भारी सर तकिये पर रख कर,

---

[1] झूठे। [2] श्वसुर।

निंदिया-पुर में खो जाती हूं।

सास मेरी तैहे में जल कर,
फिरती है अंदर और बाहर,

ताल

घब घब घब, गाली पर गाली।
सो नहीं सकती मैं बेचारी!

सास

उठ री उठ ओ काहिल लड़की,
उठ री सटल्लो नींद की माती,
फूहड़, सुस्त, मुई, हैवान!

३

बीबी

पड़ते ही सो जाती हूं।
भारी सिर तकिये पर रख कर,
निंदिया पुर में खो जाती हूँ।

हौले-हौले बालम मेरा,
चुपके–चुपके हमदम मेरा,
आते–जाते अंदर बाहर,
कहता है मुझे सोते पाकर—

पति

"सो ले, सो ले, मेरी प्यारी!
सो ले, सो ले, ओ बेचारी!
यह दिन औ' दुनिया का धंदा?
यह सिन और शादी का फंदा?
मेरी बन्नो! मेरी जान!"

मौ० हामिद अली खां

एक गीत

बाग़ों में पड़े भूले,
तुम भूल गए हम को, हम तुम क: नहीं भूले!

सावन का महीना है,
साजन से जुदा होकर, जीना कोई जीना है!

यह रक़्स सितारों का,
अफ़साना कभी सुन लो, तक़दीर के मारों का!

आख़िर यही होना था,
यों ही तुम्हें हँसना था, यों ही हमें रोना था!

रावी का किनारा है,
हर मौज के ओंठो पर, अफ़साना तुम्हारा है!

अब और न तड़पाओ,
या हम को बुला भेजो, या आप चले आओ!

मौ० चिराग़ हसन 'हसरत'

दुखी कवि

सेहन में नरगिस के इक सूखे हुए पौदे के पास,
एक तितली, धूप में जिसका चमकता था लिबास,
उड़ते-उड़ते एक लम्हे[1] के लिए आकर रुकी,
और फिर कुछ सोच कर सहरा[2] की जानिब[3] उड़ गई!

---

[1] क्षण। [2] मरुस्थल। [3] तरफ़।

यों ही आती है मेरे उजड़े हुए दिल तक ख़ुशी।
मेरे ग़म से ख़ौफ़ खाती, काँपती डरती हुई !

राजा महदी अली ख़ां

सुन ले मेरा गीत

सुन ले मेरा गीत ! प्यारी, सुन ले मेरा गीत !
प्रेम यह मुझको रास न आया, तेरी क़सम बेहद पछताया,
करके तुझ से प्रीत !

ख़ाक हुए हम रोते रोते, प्रेम में व्याकुल होते होते,
प्रीत की है यह रीत।

प्रेम में रोना ही होता है, जीवन खोना ही होता है,
हार हो या हो जीत !

'बहज़ाद' लखनवी

प्रीतम कोई ऐसा गीत सुना

प्रीतम कोई ऐसा गीत सुना, सावन की भरी बरसातों में,
आजाए इश्क़ जवानी पर, वह रस हो प्रेम की बातों में,
दर्द उठे मीठा-मीठा सा, दिल कसके काली रातों में,
प्रीतम कोई ऐसा गीता सुना !

जिस गीत की मीठी तानों से, इक प्रेम की गंगा फूट पड़े,
आँखों से लहू हो जाय रवां[1] अश्कों[2] का दरिया फूट पड़े,

---

[1]जारी। [2]आँसुओं।

उजड़ी हुई दिल की महफ़िल[1] में इक नूर की दुनिया फूट पड़े,
प्रीतम कोई ऐसा गीत सुना!
कुहसारों[2] पर बादल छाएं, इशरत[3] पै ज़माना मायल[4] हो,
फिर खाए चोट मुहब्बत की, फिर दुनिया का दिल घायल हो,
हर भोला-भाला शरमीला उलफ़त के दर का सायल[5] हो,
प्रीतम कोई ऐसा गीत सुना!
हो सोज़[6] वही और साज़[7] वही, वह प्रीत के दिन फिर आजाएं,
बरखा हो, प्यार की बातें हों, इस रीत के दिन फिर आजाएं,
फिर दुखियारों की हार न हो औ' जीत के दिन फिर आजाएं,
प्रीतम कोई ऐसा गीत सुना!

सिराजुद्दीन 'ज़फ़र'

सावन

वह पर्बत पर है इक बदली का साया, अँधेरा जंगलों में सनसनाया,
पपीहा 'पीहू' 'पीहू' गुनगुनाया, हवा ने झाड़ियों में गीत गाया,
वे बगलों ने भी अपने पर सँवारे!
वे मक्खन के खिलौने प्यारे-प्यारे!
वे वादी[8] में अबाबीलों की डारें, वे बल खाती हुई पानी की धारें,
वे भोले-भोले बच्चों की क़तारें, वे झूलों पर मल्हारों की पुकारें!
वह इक नन्ही फिसल कर रो रही है!
चुनरिया बेदिली से धो रही है!
धनक[9] ने यक-ब-यक चिल्ला चढ़ाया, पलट दी आन मे आलम[10] की काया,

---

[1]सभा। [2]पहाड़ों। [3]आराम। [4]झुके। [5]याचक। [6]दर्द। [7]वाद्ययंत्र।
[8]घाटी। [9]इंद्रधनुष। [10]संसार।

फटी बदली औ' सूरज मुस्कराया, छुआ चाँदी को औ' सोना बनाया,
हवा ने धीमे-धीमे गीत गाए।
पहाड़ों के पड़े झीलों में साये।

वह इक चरवाहे ने मुरली बजाई, वह नज़्ज़ारों को अँगड़ाई-सी आई,
यह ख़ुनकी[१] और यह आतश-नवाई[२], नया चोला बदलती है ख़ुदाई,
ठिठर कर बकरियां थर्रा रही हैं।
जुगाली ही है, मन बहला रही हैं।

यह सब्ज़ा! औ' यह नालों की रवानी, बफर कर, झाग बन जाता है पानी,
यह भीगे-भीगे पौदों की जवानी, मुझे डसती हैं ये घड़ियां सुहानी,
ज़मीं पर बारिशें क्या हो रही हैं?
मेरी क़िस्मत पै हूरें[३] रो रही हैं!

वे अब तक क्यों न आए, क्यों न आए? वे आए तो मुझे सावन लुभाए,
मुझे वे, औ' उन्हें परदेस भाए. कहां तक राह देखूं हाय, हाय
उड़े जाते हैं वे बादल बरस कर,
मेरे दिल अब न रो, कंबख़्त, बस कर!

अहमद नदीम क़ासिमी

भोर आई

अँध्यारे का दर्पण टूटा, पूरब ने पौ बरसाई,
अँगारे का झूमर पहने, ऊषा ने ली अँगड़ाई!
जंगल महके पंछी चहके, बहकी बहकी पुरवाई!
भोर आई

रुकी रुकी सी, झुकी झुकी सी, दुखी दुखी सी आशाएँ,
मचल मचल के, उछल उछल के, गगन झरोखे छू आएं!

---

[१]शीतलता। [२] अग्निवर्षा। [३]परियां।

भोर आई

मन में सपनों की महारानी, मन ही मन में इतराई !
धुआंधार पच्छिम की बस्ती, धड़ धड़ पूरब देस जले ,
सूरज देवता घात लगाए, रात की देवी हाथ मले ,
किरणों की गोपी कोहरे में, कांप कांप के चिल्लाई !

भोर आई !

अहम नदीम कासिमी

आहू[1]

माथे पै बिंदी, आँख में जादू , ओठों पै बिजली, गिरती थी हरसू[2] !
चाल लचकती, बात बहकती , जैसे किसी ने पीली हो दारू[3] ।
अँखड़ियां ऐसी, जिन में रक्सां—छिन मे राधा छिन में राहू ।
ऐसी भड़क थी खल्क[4] थी हैरां , रेल पै आया, कहाँ से आहू ?

'यलदरम'

मैं तुझ से मुहब्बत करता हूं

मैं तुझ से मुहब्बत करता हूँ ।
ओ मुझ से खफ़ा रहनेवाले ! ओ मुझ को बुरा कहने वाले !
मैं तुझ से मुहब्बत करत हूं , मैं तेरे नाम पै मरता हूँ ।
मैं तेरा अदना[5] बंदा हूं , राज़ी-ब-रज़ा[6] रहनेवाला ।
मैं तेरा अदना बंदा हूं , सरगर्मे वफ़ा[7] रहनेवाला ।
मैं तेरा अदना बंदा हूं , क़दमों में गिरा रहनेवाला ।
तू मुझसे खफ़ा क्यों रहता है, ओ मुझ से खफ़ा रहनेवाले !
तू मुझ को बुरा क्यों कहता है, ओ मुझ को बुरा कहने वाले ?

---

[1]मृगछौना । [2]सब ओर । [3]मदिरा । [4]जनता । [5]ग़रीब । [6]तेरी खुशी खुश रहनेवाला । [7]सदैव तेरा हुक्म माननेवाला ।

मैं तुझ से मुहब्बत करता हूँ ! मैं तेरे नाम पै मरता हूँ !

'मजीद' मलिक

आग़ाज़[१]

मुझे तुझ से इश्क़ नहीं नहीं ! मगर ऐ हसीनाए नाज़नीं![२]—
तू हो मुझ से दूर अगर कभी, तुझे ढूँढती हो नज़र कभी,
तो जिगर[३] में उठता है दर्द-सा, मेरा रंग रहता है ज़र्द-सा।
मगर ऐ हसीनाए नाज़नीं, मुझे तुझ से इश्क़ नहीं नहीं !

मुझे तुझ से इश्क़ नहीं नहीं, मगर ऐ हसीनाए नाज़नीं—
तू अगर हो मजमए आम[४] में, किसी खेल में किसी काम में,
तो मैं छिप के दूर ही दूर से, तुझे देखता हूं ग़रूर[५] से।
मगर ऐ हसीनाए नाज़नीं, मुझे तुझ से इश्क़ नहीं नहीं !

तू कहे यह मुझ से अगर कभी, मुझे ला दो लालो-गुहर[६] कभी,
तो मैं दूर-दूर की सोच लूं, मैं फ़लक के तारे भी नोच लूं,
यह सबूत शौक़े-कमाल[७] दूं, तेरे पाओं में उन्हें डाल दूं।
मगर ऐ हसीनाए नाज़नीं, मुझे तुझ से इश्क़ नहीं नहीं !

'मज़ीद' मलिक

कौन किसी का मीत ?

कौन किसी का मीत ?
सावन की तूफ़ानी रातें, कैफ़भरी[८] मस्तानी रातें,
रातें, वह दीवानी रातें, बीत गई हैं बीत !

---

[१] आरंभ। [२] ऐ सुंदरी तरुणी। [३] हृदय। [४] जनता की भीड़। [५] गर्व। [६] हीरे-मोती। [७] पक्के प्रेम का प्रमाण। [८] मस्ती भरी।

कोई सितम-ईजाद नहीं है, दाद नहीं, फ़र्याद नहीं है,
उन को कुछ भी याद नहीं है, मुँह देखे को प्रीत !
बांके बालम के बलिहारी, उस की चितवन की छवि न्यारी,
मैंने जीती बाज़ी हारी, हार भी उनकी जीत।
मन मूरख यह भूल रहा है, काँटों ही पर फूल रहा है,
गाता है और झूल रहा है, आशाओं के गीत!

सोहनलाल, 'साहिर'

वहीं ले चल मेरा चर्ख़ा

मुझे मा-बाप के घर में वह इतमीनान[1] हासिल[2] था,
कि दुनिया भर की उम्मीदों का गहवारा[3] मेरा दिल था।
हुई हालत मगर बिल्कुल वही सुसराल में आकर,
फँसे जैसे कोई आज़ाद पंछी जाल में आकर।
मुहल्ले भर की सारी औरतें मुझ को बनाती हैं,
मैं उन का मुँह चिढ़ाती हूं, यह मेरा मुँह चिढ़ाती हैं।
सहे जाते नहीं अब मुझ से ताने सास ननदों के,
क़यामत है रहूँ किस तरह दिन भर पास ननदों के?
वहीं ले चल मेरा चर्ख़ा जहां चलते हैं हल तेरे!
तेरी फुरक़त[4] की मारी तुझ को हरदम याद करती है।
मुझे ले चल कि मेरी आत्मा फ़र्याद करती है!
न आँसू आएँगे रुख़[5] पर, न घबराएगा दिल मेरा,
कि तेरे साथ रहने से बहल जाएगा दिल मेरा
यह माना हैं बहुत दिलचस्प सुबहो-शाम के जल्वे,

---

[1]शांति। [2]प्राप्त। [3]घर। [4]विरह। [5]मुख।

रहे तुम आँख से ओझल, तो फिर किस काम के जल्वे !
तुम्हारे साथ रह कर अपना ग़म सब भूल जाऊँगी,
तुम्हें गाता जो देखूँगी तो ख़ुद भी साथ गाऊँगी।
मैं अपने दर्द से जंगल के वीराने को भर दूँगी,
मैं अपने गीत से सारी फ़िज़ा आबाद कर दूंगी
मेरी ख्वाब आफ़री[1] तानों में खो जाएँगे पंछी भी,
दरख़्तों[2] की तरह मबहूत[3] हो जाएँगे पंछी भी।
वही रौनक़ वही सामान आएगा नज़र मुझ को,
मैं हूँगी साथ तो वह बन भी हो जाएगा घर मुझ को।

वहीं ले चल मेरा चर्ख़ा, जहां चलते हैं हल तेरे !

'फ़ाख़िर' हरियानवी

चाह का भेद

उन्हें जी से मैं कैसे भुलाऊँ सखी, मेरे जी को जो आके लुभा ही गए ?
मेरे मन में वह प्रेम बसा ही गए, मुझे प्रीत का रोग लगा ही गए !
किए मैंने हज़ार-हज़ार जतन, कि बचा रहे प्रीत की आग से मन,
मेरे मन में उभार के अपनी लगन, वह लगाव की आग लगा ही गए!
बड़े सुख से यह बीते थे चौदह बरस, कभी मैं ने चखा न था प्रेम का रस,
मेरे नयनों को श्याम दिखा के दरस, मेरे दिल में वह चाह बसा ही गए !
कभी सपनों की छाओं में सोई न थी, कभी भूल के दुख से मैं रोई न थी,
मुझे प्रेम के सपने दिखा ही गए, मुझे प्रेम के दुख से रुला ही गए !
रहें रात की रात सिधार गए, मुझे सपना समझ के बिसार गए,
मैं थी हार, गले से उतार गए, मैं दिया थी जिसे वह बुझा ही गए !

---

[1] नींद बुलाने वाली। [2] वृक्षों। [3] मुग्ध।

सखि कोयलें 'सावनी' गाएँगी फिर, नई कलियां छावनी छाएँगी फिर,
मेरी चैन की रातें न आएँगी फिर, जिन्हें नैन के नीर मिटा ही गए !
मेरे जी में थी बात छिपा के रखूं, सखि चाह को मन में दबा के रखूं,
उन्हें देख के आँसू जो आही गए, मेरी चाह का भेद बता ही गए !

'अज्ञात'

ग्वालन

इस की आँख में प्रीत का रस है, इस के मन में प्रेम की लहरें।
इस के सिर पर दूध की मटकी, इस के घर में दूध की नहरें।
हँसमुख सुंदर, छैल-छबीली, सब को दूध पिलाती है यह।
कहती है जब 'माखन ले लो !', गोकुल याद दिलाती है यह !
खेले थे परवान चढ़े थे[1], इस के घर में श्याम कन्हैया।
दुनिया थी यह इक भवसागर, खेती थी यह इस की नैया !
कितनी पाक और कितनी सुन्दर ? कृष्ण मुरारी इस ने पाले।
प्यार से उन को कहती थी यह, 'आजा प्यारे माखन खाले' !
पालती है यह अब भी हम को, अब भी इस की रीत वही है।
देती है यह अब भी माखन, प्रेम वही है, प्रीत वही है।
आओ बढ़ कर इस से पूछें- क्योंरी ग्वालन, श्याम कहां हैं ?
उन बिन भारत भर है सूना, उस के दिल आराम कहां हैं ?
वह जो मिलें तो उन से कहना, श्याम मुरारी फिर से आओ,
बोल करो फिर बाला अपना, भारत के फिर भाग जगाओ !

मनोहरलाल 'राहत'

---

१ बड़े हुए थे।

कमल से

ऐ कमल, ऐ जल-परी, ऐ झील के तारों की जोत !
तेरे कारण प्रीत-सागर में खुली गंगा की सोत।
धारता है रूप कुछ ऐसे तू ऐ नाज़ुक कमल,
मोहनी मूरत पै तेरी आँख जाती है फिसल।
गुदगुदा देती हैं तुझ को जिस समय कोयल की कूक,
मुस्कराहट से बदलती है तिरे हिरदे की हूक।
तू कहां, इक हंस है पानी पै पर खोले हुए।
चाँद पनघट पर उतर आया है पर तोले हुए।
या कोई बगला खड़ा है सर उठाए घात में,
या इकट्ठा हो गया है फेन चौड़े पात में,
या यह चाँदी का कटोरा है 'कटोरा-ताल' में,
या यह शीशे का दिया जलता है 'चौमुख' ताल में,
या किसी देवी की सुमिरन गिर पड़ी तालाब में,
या गड़ी है कोई फूलों की छड़ी तालाब में,
या खुला है फूल की सूरत में भादों का भरम,
या लिया है नूर के तड़के ने दरिया पर जनम,

'शाद' आर्फ़ी

सपने में क्यों आते हो ?

चुपके-चुपके ताक लगाए,
साँस की आहट तक ना आए,
नाग समान कई बल खाए,
रैन अँधेरी, हू का आलम,
कैसे निडर हो, सुंदर बालम !

ऐसे में जब आते हो,
जी को धड़का जाते हो।

ऊपर वाला राह बताए,
राह में वह ठोकर ना खाए!
बिगड़ी बात कहीं बन जाए,
आए सोए भाग जगाए!

बैरी है संसार तुम्हारा,
मैं हारी जब मन को हारा।
सपने में क्यों आते हो?
नींद उड़ा ले जाते हो!

लतीफ़ अनवर

ओ मेरे बचपन की कश्ती

ओ मेरे बचपन की कश्ती, इन काली-काली रातों में,
किस जानिब[1] भागी जाती है, इन तूफ़ानी बरसातों में!
दिल में उलझन, आँखों में चमक, नज़रों में हिजाब[2] आने को है,
भँवरों से निकल, लहरों से सभँल, तूफ़ाने शबाब[3] आने को है!
शहरों में डाकू बसते हैं, ले चल मुझ को सहराओं में,
ओ मेरी जवानी, ले भी चल, जंगल की मस्त हवाओं में!
आ उस जा[4] भाग चलें जिस जा, यह जिस्म[5] लुटाए जाते हैं,
जिस जा आज़ादी की ख़ातिर, सर भेंट चढ़ाए जाते हैं!
जहाँ दिल की नज़रें[6] चढ़ती हैं, आज़ादी के दरबारों में,
जिस जगह जवानी पलती है, तलवारों की झनकारों में!

'क़मर' जलालाबादी

[1]तरफ़। [2]लज्जा। [3]जवानी का तूफ़ान। [4]जगह। [5]शरीर। [6]भेंटें।

चंदा मामू

प्यारे चाँद चमकनेवाले, दुनिया भर को तकने वाले,
सब के सिर पर तेरा डेरा, सब से ऊँचा घर है तेरा।
तू जब अपनी खास शान से, नीले-नीले आसमान से,
दूर उभरता दिया दिखाई, बोल उठी झट बुढ़िया माई—
'बेटा तेरा मामू आया'। मैं कहता हूं 'मामू कैसा'?
सब आते हैं यह नहीं आता, इंजन-गाड़ी यह नहीं लाता।
यह लो मेरी गेंद उछल कर, जा पहुँची है तारों के घर।
हाँ ऐ चाँद अब नीचे आना। दूध मलाई माखन खाना!
मेरे दिल का टुकड़ा बन जा! रूठा है चुपके से मन जा।
मेरी इन आँखों में रहना! कुछ भी करना, कुछ भी कहना!

खज़ानचंद 'वसीम'

फूल-फूल ऐ सरसों फूल!

आज फूल कल-परसों फूल, सदा सुहागिन बरसों फूल!
जोबन पाकर बन में फूल, तन से फूल औ' मन से फूल!
फूल-फूल ऐ सरसों फूल!
पगली कोयल के ये बोल, तेरे मेरे दिल के बोल,
चुपके-चुपके सुनती रह! सुन-सुन कर सिर धुनती रह!
फूल-फूल ऐ सरसों फूल!
मस्ती भरी हवाओं में, जग की धूप औ' छाओं में,
झूमे जा, लहराए जा, आँखों में मुस्काए जा!
फूल-फूल ऐ सरसों फूल!
फूल-फूल दीवानी भूल, पाकर नई जवानी फूल,
दुनिया की नज़रों से दूर, अनमैली आँखों से दूर,

फूल-फूल ऐ सरसों फूल !
ऐ वनवासी की जोगन, ओ री, पी की बैरागन !
जब तक तन में साँस रहे, पिया मिलन की आस रहे।
फूल-फूल ऐ सरसों फूल !
आज फूल कल-परसों फूल, सदा सुहागन बरसों फूल।
फूल-फूल ऐ सरसों फूल !

खज़ानचंद 'वसीम'

हठीले भँवरे

हठीले भँवरे मत गुंजार !
रूप-गंध-रस-कोमलता का दो दिन है संसार,
जीवन भर रोएगा जी को, दो दिन करके प्यार !
हठीले भँवरे मत गुंजार !
जो कलियां खिल कर मुरझाईं उन की ओर निहार !
आज कलंक हैं फुलवारी का कल थीं जो सिंगार।
हठीले भँवरे मत गुंजार !
प्रेम का मीठा राग लगा कर कैसा हाहाकार ?
मन पापी है दुख का कारण, पापी मन को मार !
हठीले भँवरे मत गुंजार !
भूल न पतझड़ को ऐ पागल, मेरी ओर निहार !
प्रेम-बसंत के खड़हर पर करती हू हाहाकार !
हठीले भँवरे मत गुंजार !
जिस की आस पै दुनिया छोड़ी छोड़ दिया घर-बार,
उस पापी ने ठोकर मारी करके आँखें चार !
हठीले भँवरे मत गुंजार !

बिहारीलाल, 'साबिर'

आग लगी रे आग

आग लगी रे आग राजमहल में आग, लगी रे !
मजदूरों के खूं से बनी थी राजमहल की शान,
निर्दोषों के कंधों पर था उन सब का अभिमान !

जनता जाग उठी रे जाग !
आग लगी रे आग !

धनियों ने अन्याय किया था,
परजा का धन लूट लिया था,
दुखियारों का खून किया था,
एका करके टूट पड़े हैं ज़हरी काले नाग,
आज मचेगा अँध्यारे में हुल्लड़ और निराज,
कल का सूरज देखेगा धरती पर परजा राज !

जागे देश देश के भाग !
आग लगी रे आग !

राम प्रकाश 'अश्क'

मैं हूं शाम का राग

मैं हूं शाम का राग सुलगे जो भी सुने !
दिन का उजाला है अब उजाला, रात अभी तक आई नहीं,
फैला धुँधलका हल्का हल्का—सुख इक पल का लाई नहीं।
गहरी सयाही छाई नहीं !
अँध्यारे में आग कौन अंगारे चुने !
डूबा सूरज, गई वह सज-धज चन्दरमाँ का सुख भी नहीं,
अभी रात का जीत पात का किसी बात का सुख भी नहीं।
दुख जो नहीं तो सुख भी नहीं !

कोई लगन है न लाग, यह दुख लाख गुने !
कोई इशारा कोई इशारा, आए मुझे बेचैन करे,
आँसू छलके, आँख में छलके, रुक रुक ढलके बैन करे !
जलती शाम को रैन करे !
सोए रहे फिर भाग औ' मन सपने बुने !

ज़या जालंधरी

और न अब कुछ भाए

पुरवा सनके, बाग़ में आए, डाल डाल सहलाए,
झूम झूम कर फूल की इक इक पत्ती गिरती जाए,
घास के सीने पर लेकिन अब फूल ही रंग जमाए !
और न अब कुछ भाए !

इस दुनिया से दूर इक बस्ती बसाएँ, बीती बातें,
दिल की जलन मिटाएँ जब याद आएँ भीगी बरसातें,
बीती बातों का जादू ही सुख की बरखा लाए !
और न अब कुछ भाए !

जाग उठी हैं बैठे बैठे ध्यान की लाखों लहरें,
मन की झकोले खाती नाओं ठहरें, कहीं तो ठहरें,
अनहोनी को बरसों देखा होनी क्यों तरसाए !
और न अब कुछ भाए !

क़य्यूम नज़र

असफलता

निसि दिन दीप जलाए पगली, पाए घोर अँधेरा,
कौन कहे अब उसे, 'हठीली अन्त यही है तेरा' !

रैन की गोदी खाली करके चाँद सितारे भागे !
अँध्यारे हैं पीछे पीछे, ज्योती आगे आगे !
होते होते दो नयनों से ओझल हुआ सवेरा !

छाया घोर अँधेरा !
अन्त यही है तेरा !

दूर दूर तक एक उदासी, सड़ी बुसी इक छाया !
धरती से आकाश तक उड़ कर आशा ने क्या पाया !
चारों खूंट चली अँध्यारी चिन्ताओं ने घेरा !

छाया घोर अँधेरा !
अन्त यही है तेरा !

कौन चुने अब टूटे तारे जोत कहाँ से आए !
कौन गगन पर सेज बिछाए, फूल तो हैं मुरझाए !
कौन है इस नगरी में जो आकर करे बसेरा !

निसि दिन दीप जलाए पगली पाए घोर अँधेरा ,
कौन कहे अब उसे, हठीली, अन्त यही है तेरा ,

सुलताना 'क़मर'

दो हिन्दी गज़लें

(१)

करती है रह रह के इशारे ,
मौत तुझे ओ मद-मतवारे !
मुझ दुखिया को इस नगरी में ,
अपना कह कर कौन पुकारे !

बिछुड़े तो फिर मिल न सके हम,
जैसे दो नद्दी के किनारे।
डूब रही है जीवन-नौका,
देख रहे हैं खेवनहारे।

प्रीतम रूठे, सोई क़िस्मत,
टूटे यों जीवन के सहारे!
देख के इन नयनों के आँसू,
रोते हैं आकाश में तारे।

कौन अलताफ़ किसी का जग में,
बातों में मत आना प्यारे!

(२)

क्यों निस दिन आँख बरसती है।
नागिन सी मन को डसती है?
मन हौले हौले रोता है,
जब दुनिया मुझ पर हँसती है!

बसते हैं आँखों में आँसू,
मन आशाओं की बस्ती है!
जाँ देकर उनकी याद मिली,
इन दामों कितनी सस्ती है!

पी छिप कर बैठे हैं मन में,
दर्शन को आँख तरसती है!
दुनिया अलताफ जवानी है,
फुलवारी बन कर हँसती है!

अलताफ़ मशहदी

प्रेम के बदरा आओ

प्रेम के बदरा आओ !

जीवन सागर सूख चला है प्रेम के बदरा आओ !
मुझ अबला बिपता मारी को व्यर्थ न अब तड़पाओ !
छा जाओ जो आए हो अब बिन बरसे मत जाओ !
बरस बरस के मेरे सूखे सागर को भर जाओ !

प्रेम के बदरा आओ !

प्रेम समीर के शीतल कोमल निर्मल झोंके आएँ,
मन उपवन के क्यारी क्यारी में घूमें इठलाएँ,
जीवन बगिया की मुरझाई कलियाँ फिर मुस्काएँ,
आशाओं के वृक्ष की सूखी टहनी को लहराओ !

प्रेम के बदरा आओ !

दुख सहती हूं मैं निसदिन, मुझ दुखिया को बहलाओ ;
रिमझिम-रिमझिम तान छेड़ के प्रेम की तान उड़ाओ,
सूखी आशाओं की कलियां तृष्णा तुरत बुझाओ ,
घुमड़ घुमड़ के आओ जल्दी अमृत जल बरसाओ !

प्रेम के बदरा आओ !

सायिल अनेठवी

भाग गईं जो मेरी ख़ुशियां

भाग गईं जो मेरी ख़ुशियां !

बादल के सीने में झमकीं,
तारों की आखों में चमकीं,
चाँद के माथे पर जा दमकीं,

भाग गईं जो मेरी ख़ुशियां !

कलियों के होटों पर झलकीं,
या उनकी आँखों से छलकीं,
पलको पर नाचीं फिर ढ़लकीं,

भाग गईं जो मेरी ख़ुशियां !

चंचल लहरों में वे लहकीं,
फूलो के गालों में महकीं,
बन नन्ही चिड़िया वे चहकीं,

भाग गईं जो मेरी ख़ुशियां !

मसऊद हसन

जोगिन फिरे उदास

जोगिन फिरे उदास
पिया बिन जोगिन फिरे उदास !

तन पै भभूत गले में माला,
अंग अंग यौवन मतवाला ;
निर्मल मन है सुन्दर मुखड़ा,
आज सुनाए अपना दुखड़ा !

मन का भेद छिपाती जाए,
आंसू पी कर गाती जाए,
मधमाती ख़ामोश निगाहें,
सोज़ गलों में ठंडी आहें !

फूलों की बूबास है इस में,
कहने को उल्लास है इस में —

झूठा है उल्लास!
पिया बिन जोगिन फिरे उदास !

अर्श मलसियानी

मन के दर्पण से

यह चन्दा, यह झिलमिल करते चंचल तारे सारे !
सारे रूप तुम्हारे ।
तुम भी सुन्दर, यह भी सुन्दर ,
तुम मन मोहन प्यारे !
तुम सब एक लड़ी के मोती इक नगरी के बासी !
तुम सब दूर ही दूर से हँस कर पास बुलाने वाले ,
तुम सब एक झलक दिखलाकर फिर छिप जाने वाले ,
तुम सब गोरे मुखड़े वाले औ' मन सबके काले ,
तुम सब मन के काले !

यह चन्दा यह झिलमिल करते बेकल तारे सारे !
सारे रूप तुम्हारे ।
हम भी बेकल, यह भी बेकल ,
हम दुखिया बेचारे, आंसू !

हम सब एक नयन के आँसू, एक नगर के बासी !
हम सब दुखिया रैन नगर में बातें करने वाले ,
हम सब चुपके चुपके मिल कर आहें भरने वाले ,
हम सब साथी प्रेम पुजारी औ' सब हैं मतवाले ,
हम सब हैं मतवाले !

जावेद क़मर

पंजाब हत्याकांड

पच्छम ने पूरब के अंधे सूरज को बखशा उज्यारा,
डगमग डगमग करती नैया को सौंपा मज़बूत किनारा!
देख समय को इक रंगे सहरंगे झंडे जोश में आए,
क्रोध कपट के खूनी तूफ़ां नींद से चौंके होश में आए!
तसबीहों औ' मालाओं की दुनियाओं में भूचाल आया,
मन्दिर से मस्जिद टकराई, मस्जिद से मन्दिर टकराया!
एकता की अर्थी को लेकर कंधों पर निकले हमसाए,
अपनों ने अपनों की लाशो से जंगल में नगर बसाए!
मन में लेकर क्रोध की अगनी, होटों पर ज़हरीली बोली,
इंसानों ने मिल कर खेली, इंसानों के खून से होली!
चीखें सुन्दर औ' शरमीली धरती के होटों पर कांपी,
लालच की दौड़ों में व्याकुल पीत लताएं थर थर कांपी!
मज़हब की अँध्यारी उठी शोलों की मालाएँ ले कर,
नगरों को शमशान बनाने की मन में आशाएं लेकर!
बर्बरता ने तोड़ के रखदी, सुन्दरता की सुन्दर थाली,
भेड़ो के सब रखवालो ने भेड़िए बन कर की रखवाली!
लाशो की सीढ़ी से होकर ऊंचाई की गोद में पहुँचे,
ऊँचे होने वाले मानों गहराई की गोद में पहुँचे!

अलताफ़ मशहदी

क्या उस दम साजन आएगा?

जब कली-कली गिर जाएगी, औ' फूल-फूल मुरझाएगा,
जब रूख-रूख सूना होगा, बूटा-बूटा कुम्हलाएगा,

जब पत्ता-पत्ता सूखेगा, भँवरा-भँवरा उड़ जाएगा,
क्या उस दम साजन आएगा ?

जब ठंडी-ठंडी वायू आहें भर-भर कर सो जाएगी,
जब नीली-नीली, काली-काली बदली गुम हो जाएगी,
जब रूखा-रूखा फीका-फीका समा जगत पर छाएगा,
क्या उस दम साजन आएगा ?

जब दुखिया पापी नैन मेरे, थक-थक जाएँगे रो-रो कर,
जब इक-इक दुख, इक-इक संकट छा जाएगा मेरे मन पर,
जब तड़प-तड़प औ' कलप-कलप कर दम बाहर हो जाएगा,
क्या उस दम साजन आएगा ?

अमरचंद 'कैस'

दर्शन—प्यासी

प्रियतम मुख दिखला !
मुझ से तू क्यों रूठ गया है, मेरा दोष बता ?
प्रियतम मुख दिखला !
मेरी जां[1] नयनों में आई, और न अब तड़पा।
प्रियतम मुख दिखला !
मैं हूं तेरी, तेरी हूं मैं, तू मेरा हो जा।
प्रियतम मुख दिखला !

अमरचंद 'क़ैस'

जग की झूठी प्रीत

जग की झूठी प्रीत !
फ़ानी है यह दुनिया फ़ानी, उठती मौजें, बहता पानी,
छोड़ भी इस की रामकहानी, यह है किस की मीत !

---

[1] जान।

मोह के दिन हैं दुख की रातें, ज़र[1] के फंदे, पाप की बातें !
प्रेम के रस से खाली बातें, हार यहाँ की जीत !
जग की झूठी प्रीत !

अहसान 'दानिश'

मज़दूर का बच्चा

यह प्यारा-प्यारा बच्चा, आँखों का तारा बच्चा !

यह दिल को लुभाने वाला, रो-रो के हँसाने वाला,
फ़ितरत का दुलारा बच्चा ! यह प्यारा-प्यारा बच्चा !

आपा[2] की नजर की रौनक़, अम्मा के घर की रौनक़,
दुखिया का सहारा बच्चा ! यह प्यारा-प्यारा बच्चा !

हूरों का तरन्नम[3] कहिए, गुलमां का तबस्सुम[4] कहिए,
जन्नत का नजारा बच्चा ! यह प्यारा-प्यारा बच्चा !

लब पतले आँखें काली, रुखसार[5] पै हलकी लाली,
जग रूप से न्यारा बच्चा ! यह प्यारा-प्यारा बच्चा !

मज़दूर का बेटा लेकिन, मज़दूर बनेगा इक दिन,
अफ़लास[6] का मारा बच्चा ! यह प्यारा-प्यारा बच्चा !

दुनिया का सितम[7] देखेगा, 'ना होत' का ग़म देखेगा,
यह प्यारा-प्यारा बच्चा! यह आँख का तारा बच्चा !

अहसान 'दानिश'

---

[1] धन। [2] पिता। [3] संगीत-लहरी। [4] मुसकान [5] कपोल। [6] ग़रीबी।
[7] अन्याय।

मन की बस्ती वीरान नहीं

मन की बस्ती वीरान नहीं।
जैसे भँवरा, उजड़े बन में,
फूलों की याद में गाता है,
बन को आबाद बनाता है,
वैसे ही सखि, मेरे मन में,
पिय को मिलने की आशा है,
मन की बस्ती वीरान नहीं, मन का मंदिर सुनसान नहीं।

प्रीतम गो आप नहीं रहते,
प्रीतम की याद तो रहती है!
बस्ती आबाद तो रहती है!
मन की बस्ती वीरान नहीं, मन का मंदिर सुनसान नहीं।

रणवीर सिंह 'अमर'